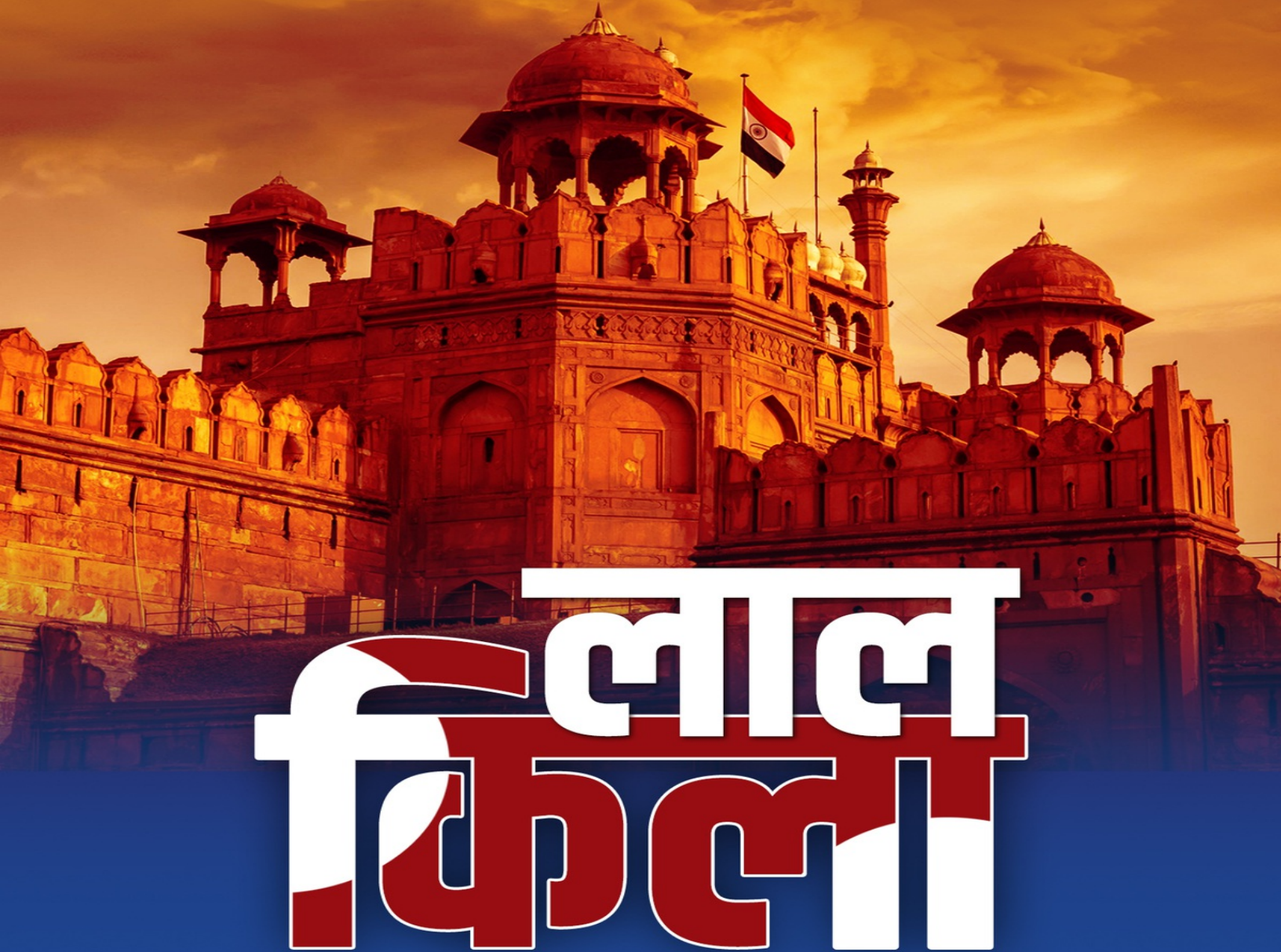


महान साहित्यकार

आचार्य चतुर्सेन

की एक कालजयी रचना



लाल किले में रहकर पूरे हिन्दुस्तान पर शासन करने वाले
मुगल बादशाहों की एक बेहद रोचक और मार्मिक दास्तान।



बुक कैफ़े की गौरवशाली भेंट
पब्लिकेशन

लाल किला आचार्य चतुरसेन



की गौरवशाली भेंट

मुगल बादशाहों की बेहद रोचक और मार्मिक दास्तान, जो महान साहित्यकार आचार्य चतुरसेन की एक कालजयी रचना है।

लाल किला सदियों से भारत की आन-बान-शान का प्रतीक रहा है। लाल किला में रहकर सारे हिन्दुस्तान पर शासन चलाने वाले मुगल बादशाहों की रोचक और मार्मिक दास्तान को इस उपन्यास में बड़ी ही बारीकी और सजीवता से उकेरा गया है।

'बुक कैफ़े पब्लिकेशन' की एक गौरवशाली भेंट।

1

बाबर का आगमन भारत में मुगल साम्राज्य की नींव जमाने और मुगलों का आगमन भारत में मुस्लिम सत्ता की स्थापना का कारण हुआ। उस समय चित्तौड़ की गद्दी पर प्रबल पराक्रमी राणा सांगा उपस्थित थे। उन्होंने अठारह बार दिल्ली के पठान बादशाहों को विजय किया था।

बाबर एक उद्यमी और साहसी योद्धा था। वह दयालु और उदार भी था। गद्दी पर बैठते ही उसने अपने पुत्र हुमायूं को आसपास के प्रान्त विजय करने को भेज दिया और शीघ्र ही बियाना, धौलपुर, ग्वालियर और जौनपुर उसके अधिकार में आ गए। उसकी इस सफलता में उसके हिन्दू वजीर रेमीदास को भारी श्रेय है, जो अत्यन्त बुद्धिमान, चतुर और दूरदर्शी था।

बाबर ने पानीपत के युद्ध में विजय प्राप्त करके दिल्ली प्राप्त की। हुमायूं ने भी अवध, जौनपुर और गाजीपुर जीतकर अपने पिता के राज्य का विस्तार किया। इन्हीं दिनों मेवाड़ के राणा सांगा का प्रताप तप रहा था। बाबर ने सांगा का पराक्रम सुना, राणा ने भी बाबर के दिल्ली अभियान को देखा। दोनों सतर्क होकर अपनी प्रभुता की ओर उन्मुख हुए। बाबर अपनी सेना लेकर दक्षिण की ओर चला। उसने बियाना, धौलपुर और ग्वालियर के किलेदारों को अपनी ओर मिलाकर ये किले ले लिए और बियाना में किले की रक्षा के लिए अपनी थोड़ी फौज छोड़ दी। राणा सांगा ने समाचार मिलते ही बियाना पर आक्रमण किया और बाबर की फौज को मार भगाया। बाबर यह सुनकर आगे बढ़ा और बियाना में ही बाबर और सांगा का प्रथम बार आमना-सामना हुआ। भयानक युद्ध हुआ, अन्त में मुगल सेना परास्त होकर भाग खड़ी हुई। बाबर पराजित होकर लौट गया। मुगल सेना सांगा के शौर्य से इतनी भयभीत हो गई कि उसने उनके साथ अन्य युद्ध करने से इनकार कर दिया। इस पर बाबर ने धर्म और दीन का जोश दिलाकर अपनी फौज की निराशा दूर की। बाबर ने सांगा से सन्धि-चर्चा भी चलाई और इसमें काफी समय लगा दिया। सन्धि-चर्चा चलने से राजपूती सेना में युद्ध का उत्साह ठंडा पड़ने लगा और वे आमोद-प्रमोद में लीन हो गए। अचानक बाबर ने युद्ध की घोषणा कर बियाना के मैदान में अपनी फौज खड़ी कर दी। बाबर की ओर से तोपें आग उगल रही थीं, राजपूती सेना तीर बरसा रही थी। भयानक युद्ध हुआ। इस बार राजपूती सेना परास्त हुई और सांगा अनेक घावों के कारण अपने स्थान पर मृत्यु को प्राप्त हुआ। सांगा के बाद रानियों में अपने-अपने पुत्रों को गद्दी पर बैठाने के लिए झगड़े खड़े हो गए। एक रानी ने तो बाबर की सहायता प्राप्त करने के लिए रणथम्भौर का किला भेंट कर दिया जिससे चित्तौड़ का गर्व खण्डित हो गया। राणा सांगा से युद्ध-विजय के उपलक्ष्य में उत्सव मनाया गया, जिसमें युद्ध-कैदियों को कत्ल करने से शाही तम्बू के सामने खून की नदी बह निकली थी।

सांगा से युद्ध जय करने के बाद बाबर ने चन्देरी, मालवा जय किए। उसे दिल्ली के तख्त पर बैठना नसीब न हुआ। अन्त में घाघरा युद्ध के बाद 1530 ई. में बाबर की आगरा में मृत्यु हुई। उसके शरीर को काबुल ले जाकर दफनाया गया।

बाबर की मृत्यु के बाद उसका बड़ा बेटा हुमायूं 1530 ई. में दिल्ली की गद्दी पर बैठा।

उस समय उसकी आयु तेईस वर्ष की थी। हुमायूँ वीर युवक था, परन्तु उसमें युद्धनीति का अभाव था और वह जीवन- भर युद्ध करता इधर- उधर भागता फिरा। इस बीच में एक बार पठान राजा शेरशाह और उसके एक हिन्दू सरदार हेमू ने दिल्ली पर अधिकार कर लिया। हुमायूँ काबुल भाग गया।

हुमायूँ दिल्ली से भागकर अमरकोट पहुँचा। वहाँ के शासक की शरण में अपनी आसन्नप्रसवा बेगम को छोड़कर आगे बढ़ गया। यहीं अमरकोट में हमीदा बेगम के गर्भ से 15 अक्टूबर, 1542 को अकबर का जन्म हुआ। हुमायूँ उस समय वहाँ से बहुत दूर था। पुत्र जन्म का समाचार सुनकर उसे बहुत प्रसन्नता हुई और उसने एक नेफा काटकर कस्तूरी का एक- एक कण अपने साथियों को बाँटकर ईश्वर को धन्यवाद दिया।

शेरशाह के मरने पर देश- भर में अशान्ति मच गई। उस समय दिल्ली में एक फकीर शाहदोस्त रहते थे। उन्होंने अपने एक चेले को हुमायूँ के पास एक जूता और चाबुक लेकर भेजा। हुमायूँ ने फकीर का मतलब समझ लिया और फिर भारत पर चढ़ाई की तैयारियाँ कीं। शाह फारस से उसने सहायता मांगी। हुमायूँ ईरान, काबुल घूम- फिरकर पन्द्रह हजार सेना इकट्ठी करके फिर भारत में आया और दिल्ली तथा आगरा पर कब्जा कर लिया, परन्तु छः मास बाद ही मर गया।

2

उस समय उसका पुत्र अकबर सिर्फ तेरह वर्ष का था और राज्य की परिस्थिति अनिश्चित थी। दिल्ली और आगरा को छोड़कर उसके पास और कुछ न था। फिर सिकन्दर सूरी और हेमू उसके विरुद्ध तैयार हो रहे थे। हुमायूँ ने अपने मित्र बैरमखाँ के हाथ में अकबर को सौंपा था। बैरमखाँ एक वीर सेनापति और उत्तम वंश का तुर्क था। अकबर ने उसे प्रधानमंत्री और संरक्षक बनाया। बैरमखाँ ने पानीपत के मैदान में सिकन्दर सूरी और हेमू की संयुक्त सेना को पराजित किया।

हेमू को बन्दी बनाकर तेरह वर्ष के बालक अकबर के सामने खड़ा करके बैरमखाँ ने कहा, “तलवार से इसे कत्ल करो।”

हेमू की आंख में तीर घुस गया था और उससे रक्त बह रहा था। उसके शरीर पर भी घाव थे। यह देख अकबर ने उत्तर दिया, “मैं घायल व्यक्ति पर हथियार नहीं चला सकता, चाहे वह दुश्मन ही हो।”

बैरमखाँ अकबर के इस उत्तर से प्रभावित हुआ और अभिवादन करके हट गया, फिर उसने अपने हाथ से हेमू का कत्ल कर दिया। सिकन्दर सूरी को पंजाब में पराजित कर क्षमादान दे बंगाल जाने दिया। दो वर्ष बाद अकबर ने स्वाधीन होकर राज्य संभाला और बैरमखाँ को मक्का जाने की आज्ञा दी। उस समय बैरमखाँ गुजरात में एक मुहिम पर था। अकबर की इस आज्ञा पर रुष्ट होकर बैरमखाँ मक्का की यात्रा पर चल पड़ा, परन्तु मार्ग में उसे अकबर से विद्रोह करने की

सूझी। उसने सेना एकत्र करनी आरम्भ कर दी। अकबर ने सूचना पाते ही सेना भेज दी, जिसने उसे युद्ध में परास्त करके बंदी बना लिया। परन्तु अकबर ने बैरमखां को सम्मान सहित दरबार में लाने की आज्ञा दी।

बैरमखां नंगे सिर, नंगे पांव, गले में दुपट्टा लपेटकर अकबर के सम्मुख आकर जमीन पर लेट गया। अकबर ने तख्त से उठकर उसे उठाया और वजारत की कुर्सी पर बैठाकर कहा, “चन्देरी और कालपी के सूबे आपको दिए जाते हैं”

“नहीं, मैं अब इस काबिल नहीं रहा।”

“वजारत की कुर्सी पसन्द हो तो यहीं दरबार में रहो।”

बैरमखां ने रोकर मुंह ढक लिया, “नहीं- नहीं।”

“तब मक्का जाओ, खुदा की इबादत करो।”

वह मक्का रवाना हुआ, परन्तु बीच राह में उसके पुराने बैरी एक पठान ने उसे मार डाला।

उस समय अकबर की शक्ति डांवाडोल थी। पंजाब, ग्वालियर, अजमेर, दिल्ली और आगरा तो उसके अधीन हो गये थे। पर बंगाल में अफगानों की अभी शक्ति थी। उसकी फौज में भी जो सिपाही थे, अधिकांश तुर्की लुटेरे थे, जो लूट- मार के लालच से ही सेना में भर्ती हुए थे और जो सेनापति थे, वे अपने- अपने अधिकारों को बढ़ाने की चिन्ता में ही रहते थे। जो सरदार जिस प्रान्त में शासक बनाकर भेजा गया, वह वहां का हाकिम बन बैठा, पर अकबर बड़ा मुस्तैद सिपाही था। वह रात- दिन कूच करके उनके सावधान होने से प्रथम ही उन्हें

धर दबाता। इस प्रकार उसे सात वर्ष अपने विरोधियों को दबाने में लगे। अन्त में काबुल के शासक ने जो उसका भाई था, पंजाब पर धावा किया, परन्तु उसे हराकर भगा दिया गया।

अब आन्तरिक विवादों को मिटाकर वह राजपूतों को दबाने के लिए झपटा। उसकी नीति पूर्ववर्ती मुसलमान शासकों से भिन्न थी। वह सिर्फ यही चाहता था कि राजा अपने राज्य पर बने रहें, केवल उसकी अधीनता स्वीकार कर लें।

आमेर का राजा उसका मित्र बन गया और अपनी पुत्री अकबर को ब्याह दी। अकबर ने उसके पुत्र को सेनापति बना दिया। जोधपुर और अन्य राजपूत शक्तियां थोड़ा विरोध करके उसके अधीन हो गईं। ये सब लोग उसके सहायक और मित्र बन गए।

अकबर ने बीकानेर के शासक रायसिंह को राजा का पद दिया था। इनसे पूर्व बीकानेर के स्वामी राव कहलाते थे। रायसिंह बड़े वीर, दानी थे। जब वे अपना विवाह करने उदयपुर गए, तब दस लाख रुपये बांटे। जनाने महल में जाने लगे तो दासियों ने हंसी में एक जीना दिखाकर कहा- “जो कोई इसकी एक- एक सीढ़ी पर एक- एक हाथी दे, वही इसमें से होकर ऊपर जा सकता है,

नहीं तो दूसरा रास्ता भी है।”

महाराज हंसकर उस पर चढ़ गए। दूसरे दिन दरबार करके सीढियां गिनीं, पचास थीं। पचास हाथी और पांच सौ घोड़े सिरोंपाव सहित चारणों को दिए।

शंकरजी बारहट ने महाराज की ख्यात बनाई थी। महाराज ने मुजरा करते ही एक करोड़ रुपया देने का हुक्म दिया। दीवान ने दस हजार थैलियां खजाने से निकलवाई और अर्ज की कि नजर से गुजारकर देना चाहिए।

महाराज दीवान का मतलब समझ गए। महाराज झरोखे में आ बैठे। रुपये देखकर कहा- “करमचन्द, सब रुपये यही हैं या और हैं?”

उसने अर्ज की- “पूरे हैं।”

फरमाया, “यह तो थोड़े हैं।”

शंकर से कहा, “सवा करोड़ का मुजरा करो, एक करोड़ यह ले जाओ। पचीस लाख में नागौर तुमको दिया।”

एक बार दक्षिण में बादशाह के हुक्म से किसी युद्ध में लगे थे। एक फोग का पौधा कहीं दीख गया। झट घोड़े से उतर गए और गले मिलकर रोने लगे। रोते-रोते उन्होंने कहा- “हे भाई फोग! तू तो मेरे देश का है और मैं यहां परदेशी हूँ। हमें तो अकबर की आज्ञा मान यहां आना पड़ा है। तू यहां कैसे आया?”

अकबर ने इन हिन्दू राजवंशों से अपने वंश में रिश्तेदारियां कर लीं। केवल चित्तौड़ ही अकेला रह गया था, जिसने अन्त तक विरोध किया और अधीनता स्वीकार नहीं की।

अकबर के दरबार में पृथ्वीराज प्रसिद्ध कवि थे। महाराणा प्रताप की निराशा और उत्साहहीन अवस्था सुनकर उन्होंने दो दोहे भेजकर उनकी निराशा दूर करके उनमें फिर आत्मगौरव भर दिया था। उन्हें दैवी चमत्कार प्राप्त था। एक दिन उन्होंने बादशाह से कहा कि अमुक दिन मथुरा के विश्रान्त घाट पर मेरी मृत्यु होगी। बादशाह ने यह सुन उन्हें अटक पार भेज दिया। पर इसके पांच दिन बाद एक खास घटना ऐसी घटी कि बादशाह ने कहा, “इस दुश्मन पर तो मित्र को ही वारना उचित है।”

खानखाना वहीं हाजिर थे, झट बोल उठे, “सज्जन बारू कोड़
धां या दुर्जन की भेंट।”

यह आधा दोहा बादशाह के मुख से निकले हुए शब्दों का अनुवाद था। बादशाह ने कहा, “आधा और भी कहो।”

पर खानखाना न कह सके। उन्होंने कहा, “इसकी पूर्ति पृथ्वीराज ही कर सकते

हैं”

बादशाह ने डाक बैठाई, परन्तु पृथ्वीराज की मृत्यु के पन्द्रह दिन रह गए थे। वे मृत्यु के समय मथुरा तक ही पहुंच सके। वहीं से उन्होंने आधा दोहा भेज दिया और दान- पुण्य करके स्वर्गवासी हुए। वह आधा दोहा यह था, “रजनी का मेला किया विधि के अच्छे मेला”

यह खास घटना वास्तव में यह थी कि एक शिकारी ने चकवा- चकवी को पकड़ा और एक ही पिंजरे में रात- भर रखा। यह देखकर बादशाह के मुंह से निकला कि ऐसा शत्रु तो मित्र से भी बढ़कर है_ जिस पर आधा दोहा खानखाना ने लिखा और पृथ्वीराज ने यह कहकर पूरा किया, ‘जो विधाता का लिखा मिटाकर रात- भर एकत्र रखा’

एक बार पृथ्वीराज ने एक गाय के गले में छप्पय लिखकर बांध दिया और उसे छोड़ दिया। वह फिरती- फिरती बादशाह के महल के नीचे जा पहुंची और जो सांकल लटक रही थी उससे सींग सहलाने लगी। अकबर ने पुछवाया, “क्या है?” तो अर्ज हुई कि गाय है और यह अर्जी लायी है। बादशाह ने छप्पय पढ़ा। उस पर बादशाह ने गो- निषेध कर दिया।

अकबर बड़े जीवट का आदमी था। जैसी उसकी बुद्धि थी, वैसा ही उसका साहस और पराक्रम था। मुगलों के जमाने में मस्त हाथी फौज के जरूरी भाग थे। एक बार एक किले को शाही लश्कर ने घेर रखा था, परन्तु वह किसी तरह फतह नहीं हो रहा था। अकबर ताकीद पर ताकीद भेज रहा था। अन्त में वह स्वयं वेश बदलकर मुहिम पर पहुंचा। उसने देखा कि किले के मजबूत फाटक को तोड़ना मुश्किल हो रहा है। जो मस्त हाथी फाटक पर हूला जा रहा था, वह महावत के काबू में नहीं आ रहा था। किले की फसीलों पर से गर्म तेल और तीर बरस रहे थे।

अकबर ने यह देखा और फुर्ती के साथ झपटकर घोड़ों और प्यादों की कतार में घुस गया। वह बिजली की तरह उस कालरूप हाथी की बगल से निकलकर उसके विशाल दांतों पर पैर रख गर्दन पर सवार हो गया। इसके बाद महावत के हाथ से अंकुश ले हाथी को फाटक पर हूल दिया। वेदना से चिघाड़ता हुआ हाथी फाटक पर टूट पड़ा और उसके एक बार ही धकेलने से फाटक अर्धकर टूट गया। नदी के प्रवाह की भांति सेना किले में घुस गई और किला फतह हो गया। अकबर इस गड़बड़ी में गायब होकर चुपचाप अपने खेमे में आ गया।

3

अकबर ने गद्दी पर बैठते ही हिन्दू सरदारों तथा राजपूतों को अपने साथ लेकर प्रजा के विरोधाभास को दूर किया। राजा बीरबल, राजा टोडरमल और तानसेन उनमें प्रमुख हैं। 1562 ई. में अम्बर के राजपूत राजा बिहारीमल ने अकबर की अधीनता स्वीकार कर ली थी। उनके पुत्र राजा भगवानदास और पौत्र राजा मानसिंह ने भी इस अधीनता को निभाया। राजा भगवानदास की बहन जोधाबाई अकबर की पटरानी बनी, जिसका पुत्र सलीम अकबर का उत्तराधिकारी हुआ। राजपूताना के बड़े- बड़े राजा अकबर की अधीनता में चले गए, परन्तु मेवाड़ के राणा ने उसकी

अधीनता स्वीकार नहीं की। मेवाड़ का मान भंग करने के लिए सन् 1567 ई. के दिसम्बर में अकबर ने चित्तौड़ पर चढ़ाई की। राणा उदयसिंह अपने वीर पिता की भांति पराक्रमी और स्वाभिमानि नहीं थे, अतः उन्होंने अकबर का मुकाबला नहीं किया। मुकाबला किया उन्होंने की एक स्त्री ने, जो स्वयं युद्धरत होकर अकबर के खेमे तक घुस आई थी। अकबर लौट गया। उधर राजपूत सरदारों ने उस स्त्री को मरवा डाला और उदयसिंह से रुष्ट हो गए। इस विरोधाभास को सुनकर अकबर ने दूसरी बार चित्तौड़ पर आक्रमण किया। मुगल सेना को देखकर उदयसिंह किला छोड़कर जंगलों में भाग गए, परन्तु राजपूत हताश नहीं हुए, उन्होंने सरदार जयमल के नेतृत्व में अपना मोर्चा संभाला। जयमल वीर, परिश्रमी और युद्ध- निपुण सरदार था। अकबर के साथ पच्चीस हजार सेना, तीन सौ मस्त हाथी, तीन तोपखाने और प्रसिद्ध सेनापति थे। जयमल के पास पांच हजार मृत्युंजयी विकट राजपूत योद्धा प्रसिद्ध थे। अकबर छः महीने तक किले को घेरकर आक्रमण करता रहा, परन्तु उसे सफलता नहीं मिली। सुरंग उड़ाकर किले की दीवार तोड़ी जाती थी, पर उसकी तत्काल मरम्मत करके दुबारा बना दी जाती थी। किले के अन्दर से राजपूत बन्दूक और तीरों का ऐसा अचूक निशाना मारते थे कि अकबर के सैनिक किले के फाटक तक पहुंचने का साहस नहीं करते थे। एक दिन अकबर अपने खेमे में अकेला विचारमग्न टहल रहा था। उसने चौबदार को बुलाकर कहा, “राजा साहब और अमलों को बुला।”

कुछ देर बाद बीरबल, अबुलफजल, अब्दुल कादिर, राजा टोडरमल आकर बादशाह के सामने हाजिर हुए, बादशाह ने तख्त पर बैठकर सबको अपने- अपने आसनों पर बैठने का संकेत किया। बैठने पर उसने बीरबल से कहा, “राजा साहब, इतने महीने हो रहे हैं, मगर फतह हाथ नहीं आती। यह छोटी- सी रियासत फतह करने की मेरी शान मेरी तमाम बादशाहत की शान से ऊंची रहेगी, मगर वाह ही बहादुरी! शाबाश! ये शेर सिपाही अगर मुझे मिल जाएं, तो मैं तमाम दुनिया को फतह कर सकता हूँ। इन बहादुरों की बहादुरी तसवीर की मानिन्द देखने की चीज है। जैसा कि मैं कई बार कह चुका हूँ, मेरा मकसद किसी की आजादी छीनने का नहीं है, न मुझे मजहबी तआरसुब ही है, बल्कि मैं चाहता हूँ कि हिन्दुस्तान एक जुट ताकत बन जाए और वह एक ही ऐसी ताकत का जहूर पैदा कर ले कि जो वक्त- जरूरत दुनिया के मुकाबले उसकी कहलाए।”

अबुलफजल—बेशक, हुजूर की राय से मुझे इतिफाक है। ये छोटी- छोटी आजाद ताकतें कौमियत नहीं पैदा करने दे सकतीं और न मुल्क में अन्दरूनी अमन होने दे सकती हैं।

अब्दुल कादिर और कुफ्र का जोर भी नहीं घटेगा।

बीरबल—हुजूर की राय बहुत ही मुबारिक है। अगर आलाहजरत उस जज्बे पर भी गौर करें, जो ईश्वर ने हर एक आबरूवाले इंसान को दिया है और जिसके लिए ये राजपूत जान खोना महज फर्ज समझते हैं।

बादशाह—बेशक, मैं निजी तौर से उनकी इज्जत करता हूँ, मगर जब शहंशाही की जवाबदारी पर गौर करता हूँ, तो मुझे मरजी के खिलाफ इस किस्म की छोटी- छोटी फतह करनी ही पड़ती है।

अब्दुल कादिर—जी हुजूर, और यह कुफ़्र दूसरी तरह पर दुनिया से उठ भी नहीं सकता। खुदा की यही मरजी है कि आला हजरत ही काफ़िरों को उठाकर उनकी जगह दीनदारों को दें।

बादशाह—अब्दुल कादिर साहब, मुझे खुदा की मरजी कुछ- कुछ मालूम है, मगर सच जानों मुझे कुफ़्र उठाने की उतनी फ़िक्र नहीं है, उसके लिए आप मौलाना लोग हैं। मैं तो हिन्दुस्तान की मुल्की जिन्दगी चाहता हूँ।

बीरबल—मगर खुदावन्द, राजपूतों का उसूल अजीब ही है, और इसमें शक नहीं कि बाकायदा वह रहे, तो बहुत ही ऊँचा है।

बादशाह—हां, और तब मेरे ही बयान की ताईद हो सकती है। इसी समय एक दूत ने आकर जमीन चूमकर अर्ज की—अब्दुल फजल जलालुद्दीन की फतह हो।

बादशाह—कहो, क्या खबर है?

दूत—सिर्फ एक जवाब है, खुदावन्द! सिर देंगे, आजादी नहीं। मर मिटेंगे, मगर आन न छोड़ेंगे। एक- एक बात का जवाब तलवार है, सिर्फ तलवार।

बादशाह सिर नीचा करके कुछ सोचता रहा, फिर कहा- तो मजबूरी है। कल सुबह किले पर हमला होगा और राजा बीरबल तमाम फौज की कमान लेंगे।

बीरबल—हुजूर- - - !

बादशाह ने उठते हुए कहा—राजा साहब, अपने दोस्त अकबर के लिए यह तकलीफ बर्दाश्त करें। उम्मीद है जैसा भरोसा है, वैसा ही काम भी होगा। अब आराम कीजिए, काम बहुत है।

अगले दिन भारी तैयारी के साथ सुरंगें बिछायी गईं। एक दम्भामे पर, जो किले तक सुरंग खोदने की सुविधा से बनाया गया था, किले से गोले और तीर बरस रहे थे। कोई सिपाही वहां मिट्टी डालने को राजी नहीं होता था। एक टोकरी मिट्टी डालने की मजदूरी एक अशर्फी कर दी गई थी। तमाम दम्भामे की छत सिपाहियों की लाशों से पट गई थी। यह सुनकर अकबर उसे देखने पहुंचा। किले की दीवार के एक छेद में एक सिर ऊंचा देखकर उसने अपनी बन्दूक उठाई और शिस्त बांधकर दाग दी। सिर जयमल का था, जो वहां खड़ा होकर दीवार की मरम्मत करने के लिए अपने वीरों की हिम्मत बढ़ा रहा था। निशाना सही बैठा और जयमल मृत होकर गिर पड़ा।

सरदारों ने तुरन्त ही सत्रहवर्षीय फत्ता को अपना सेनापति बनाया और युद्ध जारी रखा। फत्ता की माता ने अपने हाथ से केसरिया बाना पहनाया, कमर में तलवार बांधी, सिर पर राजपूती पाग बांधी। उसने स्वयं को भी रण- सज्जा से सुज्जित किया और अपनी नव पुत्रवधू को भी शस्त्र धारण कराए और सभी युद्ध के लिए आगे बढ़े। भयानक मार- काट मची। जयमल के मरने से अकबर की फौज के हौसले बढ़ गए थे, वे किले के मुख्य द्वार की ओर बढ़ने लगे। अब किले की रक्षा असम्भव समझकर राजपूत वीरों ने पहले तो अपनी स्त्रियों को जौहर व्रत कराया

और फिर तलवारें सूतकर किले का फाटक खोलकर छातियों की तिहरी दीवार बनाकर खड़े हो गए। फाटक खुला देखकर मुगल सेना भीतर घुसी, परन्तु वहां वीरों की तिहरी छातियां उनका मार्ग रोकने को खड़ी हुई थीं। जो मुगल घुसा, काट डाला गया। अकबर ने मस्त हाथी छोड़ने का हुक्म दिया। पहले डेढ़ सौ हाथी छोड़े गए, जो राजपूतों को कुचलने लगे, इस पर राजपूतों ने अपनी लम्बी तलवारों से हाथियों की सूंडें काट डालीं, जिससे हाथी चिघाड़कर पीछे लौटकर मुगल सेना को ही रौंदने लगे। भयानक घमासान युद्ध मच गया। अकबर ने तीन सौ मस्त हाथी और छोड़ने की आज्ञा दी। सूंडें कट-कटकर ढेर होने लगीं, खून की नदी बह निकली, दोनों ओर के सैनिक एक-दूसरे के ऊपर कट-कटकर गिरने लगे। फत्ता अपनी सेना का इस प्रकार विनाश देखकर मस्त हाथियों पर पिल पड़ा। उसने खटाखट सूंडें काटनी आरम्भ कर दीं, परन्तु एक मस्त हाथी ने अपनी सूंड में लपेट लिया। फत्ता ने ललकारकर एक सैनिक को उसकी सूंड काटने का हुक्म दिया। सैनिक ने एक ही वार में सूंड काट डाली वह हाथी तो चिघाड़ता हुआ भाग गया, परन्तु दूसरे हाथी ने फुर्ती से बढ़कर फत्ता को अपने भारी पैरों से रौंद डाला। फत्ता ने तलवार चलाई पर वह हाथी के दंत से टकराकर टूट गई। इसी बीच हाथी ने दुबारा पैर बढ़ाकर उसे बिलकुल कुचल दिया। फत्ता की जीवन-लीला समाप्त हो गई। अब राजपूत प्राण उत्सर्ग करने की भावना से मुगलों पर टूट पड़े। उधर अकबर ने भी भीषण मार-काट मचाई। खून और लाशों में जमीन भर गई। अन्त में किला फतह हुआ। एक भी राजपूत सैनिक जीवित नहीं बचा। जयमल और फत्ता की अद्भुत वीरता से अकबर इतना प्रभावित हुआ कि उसने दोनों वीरों की मूर्तियां बनवाकर अपने किले के द्वार पर खड़ी कीं।

इसके चार वर्ष बाद उदयसिंह की मृत्यु हो गई। उनकी मृत्यु के बाद उनके पुत्र महाराणा प्रतापसिंह गद्दी पर बैठे। उस समय मेवाड़ में धन, सेना व्यापार कुछ भी नहीं था, परन्तु प्रताप महा तेजस्वी, पराक्रमी, धैर्यवान और स्वतन्त्रता के महत्त्व को रखने वाले वीर पुरुष थे। उन्होंने मेवाड़ के पुनरुद्धार का व्रत लिया, चित्तौड़ के ध्वस्त किले पर फिर सिसोदिया ध्वज फहराने की प्रतिज्ञा की। उन्होंने प्रबल प्रतापी अकबर तथा उसकी महान् मुगल सेना का तनिक भी भय नहीं किया। उस समय कुम्भलगेर का किला मेवाड़ की राजधानी बना हुआ था।

यह वह समय था जब राजा मानसिंह शोलापुर को जीतकर अकबर के पास लौट रहे थे। मार्ग में वे कमलगीर के किले में राणा प्रताप से भेंट करने के लिए ठहर गए। राणा ने उनका स्वागत-सत्कार किया, परन्तु रात्रि को उनके साथ भोजन नहीं किया। अपने पुत्र को उनके साथ बैठा दिया। मानसिंह अपने अपमान को समझ गए। मुगलों को अपनी स्त्रियां देने के कारण प्रताप ने उन्हें हीन समझा। इससे वे नाराज होकर चले गए। उन्होंने प्रताप को नष्ट करने का संकल्प किया।

अकबर के पास पहुंचकर उन्होंने प्रताप के विरुद्ध विष उगला। उनकी युद्ध की तैयारियों का भयानक चित्र खींचा। अकबर ने तुरन्त ही महावतखां, आसफखां, शाहजादा सलीम के साथ मानसिंह को भारी सेना देकर प्रताप को कुचलने के लिए भेजा। मुगल सेनाएं अरावली के दक्षिण में स्थित गोगुण्डा किले पर अधिकार करने के लिए आगे बढ़ीं। गोगुण्डा का मार्ग हल्दीघाटी से होकर है। राणा प्रताप ने अपनी सेना को हल्दीघाटी में चारों ओर छिपा दिया और

स्वयं घाटी के एक द्वार पर मोर्चा जमाया। पहाड़ की चोटियों और मार्ग में भील अपने तीक्ष्ण बाण और बड़े- बड़े पत्थर लेकर बैठ गए। वही हल्दीघाटी का प्रसिद्ध युद्ध था, मुगल सेना के घाटी में बढ़ते ही भीलों ने ऊपर से पत्थर लुढ़काना शुरू किए। मुगल सैनिक चटनी होने लगे। भीलों के तीक्ष्ण बाणों से उनके सिर भुट्टे- से उड़ने लगे। मुगल सेना में भय और त्रस फैल गया। आगे बढ़ने पर घाटी के दूसरे सिरे पर पहुंचने पर राणा ने मोर्चा लिया। भीषण युद्ध हुआ। राजपूतों के शौर्य का ठिकाना न था, उधर मुगल तोपें आग उगल रही थीं। प्रताप अपने शत्रु मानसिंह को ढूंढ़ रहे थे। मानसिंह एक हाथी पर सवार युद्ध- संचालन कर रहा था। प्रताप चेतक को एड़ लगाई और मुगलसेना को चीरते हुए मानसिंह के हाथी के सामने जा पहुंचे।

चेतक ने स्वामी का संकेत समझकर अपने आगे के पैर हाथी के मस्तक पर टेक दिए। प्रताप ने तेजी से अपना विशाल भाला मानसिंह पर लक्ष्य करके फेंका, परन्तु हाथी डरकर पीछे हट गया और भाला पीलवान की छाती में घुस गया। पीलवान के गिरते ही हाथी मानसिंह को लेकर भाग गया।

अब प्रताप चारों ओर से मुगल सेना से घिर गए। उन पर असंख्य तलवारें छा रही थीं। फिर भी वे प्रबल पराक्रम और धैर्य से दोनों हाथों से तलवारें चला रहे थे। कभी शत्रु को काटते थे, कभी अपनी रक्षा करते थे। राजपूतों ने दूर से अपने स्वामी को संकटग्रस्त देखा, तो झाला सरदार अपने कुछ वीरों को लेकर मुगलों को कटाते- मारते प्रबल वेग से राणा के पास पहुंच गए और उनकी कलगी लगी पाग अपने सिर पर रखकर कहा, “अन्नदाता, सिसोदिया वंश की रक्षा के लिए आप निकल जाइए, मैं इनसे जूझता हूँ।”

पाग देखकर मुगल सैनिक झाला को राणा समझकर उन्हीं पर टूट पड़े। राणा प्रताप को अनिच्छा से वह स्थान छोड़ना पड़ा। कुछ सरदार उन्हें वहां से निकालकर सुरक्षित स्थान में ले गए। झाला सरदार सौ से अधिक शत्रुओं को काटकर उनकी लाशों पर गिरे। उनके शरीर से खून की धारा बह रही थी और वे दोनों हाथों में तलवार पकड़े हुए थे। अपने स्वामी पर उनका बलिदान व्यर्थ नहीं गया। इस युद्ध में मुगलों को बिल्कुल सफलता नहीं मिली।

राणा की अधिकांश सेना कट मरी थी, वे जंगलों में चले गए और वहां अपनी सैन्य शक्ति बढ़ाने लगे। मुगल सेना दूर- दूर तक सारे मेवाड़ में फैल गई। एक के बाद एक किले प्रताप के हाथ से छिनते गए, पर वे एक स्थान से दूसरे स्थान पर जंगलों में छिपकर अकरमात् मुगल छावनी पर टूट पड़ते और उन्हें मारकर क्षण- भर में भाग जाते। वर्षों तक इसी प्रकार युद्ध होता रहा। प्रताप को जंगलों में, पर्वतों में, कन्दराओं में छिपकर

भूखा- प्यासा रहना पड़ता, पर उनकी तलवार और भाला सदैव मुगलों का सिर ढूंढते रहते थे। उन्होंने अपने विश्वस्त वीर सरदारों की टोलियां बना दी थीं, जो शत्रु को असावधान पाकर पर्वतों और जंगलों से निकलकर मुगलों पर आ टूटते और उन्हें मार- काट और छकाकर फिर अपने स्थानों में छिप जाते। ऐसी ही एक वीर टोली का सरदार रघुपतिसिंह था। इसके प्रबल आक्रमणों की मुगलों की मण्डली में ऐसी धाक थी और उसके नाम से ऐसा आतंक था कि बड़े- बड़े मुगल सरदारों का हृदय उसके नाम से दहल जाता था। उसके डर से उन्हें खाना- पीना- सोना हराम हो गया था। रघुपतिसिंह मानो सर्वव्यापी की तरह सदा उनके सिर पर ललकारता रहता था। उनमें से

किसी को भोजन करते, किसी को सोते, किसी को बातें करते उसकी तलवार के घाट उतरना पड़ता था। सिपाही सोते- सोते रघुपतिसिंह का सपना देखकर बड़बड़ाया करते थे। मुगलों की एक बड़ी शक्ति रघुपतिसिंह को पकड़ने में लगी थी।

रघुपतिसिंह के परिवार में उसकी स्त्री और इकलौते बेटे को छोड़कर और कोई न था। देश के चरणों में आत्मसमर्पण करने जब वह निकला था, तो उसका प्रिय पुत्र बहुत बीमार था। बादशाह ने उसके पकड़ने को इतनी सेना भेजी थी कि इलाका मुगलों से भर गया था। रघुपति का घर भी घेर लिया था। वीर रघुपति को पुत्र का समाचार मिला कि वह कुछ घड़ी का मेहमान है और अकेली उसकी पत्नी मुगलों से घिरे घर में उसे लिये बैठी है। रघुपति का माथा सिकुड़ गया। कठिन परीक्षा आ उपस्थित हुई।

सूरज डूब रहा था और उसकी लाल किरणें रघुपति के सुनसान मकान पर फीकी ज्योति डाल रही थीं। पहरेदार सावधानी से द्वार पर टहल रहा था। धीरे- धीरे एक मूर्ति मकान की ओर अग्रसर हुई। इस मूर्ति का विशाल शरीर, काली दाढ़ी, मरोड़ी मूंछें और उभरी हुई छाती उसकी महत्ता का परिचय दे रही थीं। वह व्यक्ति धीरे- धीरे चलकर द्वार पर आ पहुंचा। पहरेदार ने पुकारकर पूछा—“कौन है? खड़े रहो?”

“रघुपतिसिंह।”

पहरेदार सन्नाटे में आ गया। उसका मुंह सूख गया। पहले तो उसने संकेत से साथियों को बुलाना चाहा, पर फिर उसने साहस करके कहा- “तुम्हारे वास्ते हुक्म है, तुम जहां मिलों, पकड़ लिये जाओ।”

“किसका हुक्म है?” रघुपतिसिंह ने दर्प से पूछा।

“बादशाह सलामत का।”

“मैं उनकी प्रजा नहीं हूँ।” यह कहकर रघुपति और निकट चला आया। सिपाही भय से कांप उठा। उसने भीत स्वर में कहा- “इसमें हमारा क्या चारा है? हजारों सिपाहियों ने आपका मकान घेर रखा है।”

रघुपतिसिंह ने कुछ सोचकर कहा—“तनिक ठहरो, मेरा बच्चा मर रहा है, मैं उसे जरा देख आऊं और पत्नी को तसल्ली दे आऊं, तब तुम मुझे गिरफ्तार कर लेना।”

“और अगर तुम भाग गए?”

रघुपतिसिंह ने तड़पकर कहा—“पातकी, कायर, राजपूतों पर सन्देह।”

सिपाही को याद आयी, जब वह लड़ाई पर चला था, उसका इकलौता बेटा बीमार था। उसकी आंखों में आंसू भर आये। उसने गद्गद होकर कहा—“जाओ भैया, अपने बालक को देख आओ।”

रघुपतिसिंह भीतर आया। मृत्युशय्या पर पड़े पुत्र को देखकर उसका दिल हिल उठा। लड़का मूर्च्छित अवस्था में पड़ा था। उसकी स्त्री उसका सिर गोद में लिये बैठी थी।

पति को देखते स्त्री बिस्तर गई रघुपतिसिंह ने कहा—“देवी, अधीर मत हो, यही तो समय है।” उसने बच्चे को देखा, उपचार बताया और चलने लगा।

स्त्री ने पूछा—“कहां चले?”

“गिरफ्तार होने।”

“ठहरो, मैं गुप्त द्वार खोल देती हूं, उसी राह से निकल जाओ।” रघुपति ने स्त्री को छाती से लगा लिया। वे रोने लगे। उन्होंने कहा, “मेरी प्यारी, रघुपतिसिंह की पत्नी होकर ऐसी बात कभी मत कहना। शत्रु तुम्हारे स्वामी को झूठा, दगाबाज कहकर पुकारे, इससे तो यही अच्छा है कि वह उसके शरीर की बोटियां काट डाले। सुख में तो सभी की मति बनी रहती है। आपति में यदि तुम बुद्धि खो दोगी, तो साधारण स्त्री रघुपति की स्त्री में क्या अन्तर रहेगा?”

रघुपति चल दिया। द्वार पर पहुंचकर सिपाही से कहा- “अब तुम मुझे गिरफ्तार कर सकते हो।” सिपाही ने अपना हाथ बढ़ाकर- - - रघुपति के कंधे पर रखा और कहा- “बहादुर, भाग जाओ, खुदा तुम्हारे बच्चे पर करम बरूशे।”

राजपूत ने हाथ मिलाकर कहा—“कभी राजपूत को समय पर आजमा लेना।” अंधेरा बढ़ रहा था। उस अंधेरे में रघुपतिसिंह खो गया।

परन्तु सिपाही का यह कार्य उनके अफसर पर प्रकट हो गया। उसने उसे गिरफ्तार करके कहा—“नमकहराम, बेईमान, तेरा यह काम?”

“दुहाई खुदावन्द करीम की, मैंने नमकहरामी नहीं की।”

“तो क्या यह झूठ है?”

“क्या बन्दानवाज?”

“कि तूने दुश्मन को छोड़ दिया, जिसके लिए शाही खजाने से लाखों रुपये बर्बाद हो गए हैं और जिसने सैकड़ों दीनदारों को हलाक कर दिया है।”

“हुजूर की दुहाई है। वह मुसीबतजदा काफिर, उसका बच्चा मर रहा था। वह उसे देखने आया था। मुझे रहम आ गया, आखिर काफिर भी तो इन्सान है।”

“दिनदार होकर काफिर पर रहम? काफिर भी कैसा—जिसने हजारों दीनदारों की औरतों को बेवा बना दिया। वह फंसा हुआ शेर तूने गफलत से नहीं, जान-बूझकर छोड़ दिया। पाजी, ठहर, तेरे रहम की कैसी कीमत लगाता हूं। सिद्दीक मुहम्मद, कस लो इस बदजात की मुश्कें और खम्बे से बांधकर चाबुक उड़ाओ। इस हकीर को शाही हुक्म की उदूली करने का मजा

अभी मिल जाएगा”

अफसर के शब्द मुंह से निकलते ही उसकी मुश्कें कस लीं गईं और चाबुक पड़ने लगे। बूढ़ा दिलदार सिपाही तिलमिलाकर तड़प उठा। इसके कुछ क्षण बाद ही उसने देखा, रघुपतिसिंह लपका हुआ आ रहा है।

सिपाही ने संकेत से कहा—“भाग जाओ, भाग जाओ, मैं नाचीज मर रहा हूँ, कुछ परवाह नहीं। मगर तुम कौम के सितारे हो। तुम पर एक मामूली दुश्मन की जान कुर्बाना”

परन्तु रघुपति ने आगे बढ़कर कहा—“धर्मात्मा यवन, राजपूत अपने लिए अपने मित्रों को कभी संकट में नहीं डालते।” उसने पुकारकर कहा—“फौजदार, रघुपति हाजिर है, इसे पकड़ लो और इस बेगुनाह सिपाही को छोड़ दो।” रघुपति की मुश्कें कस लीं गईं।

दोनों को कत्ल का हुक्म हुआ। दोनों बांधकर वध्य भूमि में लाये गए। जल्लाद नंगी तलवार लिये खड़े हो गए। हजारों लोगों की भीड़ लग गई थी। रघुपति को देखने को सभी उत्सुक थे। सब कुछ तैयार था। बादशाह सलामत के आने की देर थी। जहांपनाह का स्वास हुक्म मिला था कि ये सजा उनके रूबरू दी जाएगी।

रघुपति ने सिपाही से कहा—“भाई, मुझे यही अफसोस रहा कि तुम्हारे एहसान का बदला न दे सका।”

सिपाही ने कहा—“कुछ नहीं बहादुर, तुम्हारे लिए मरने में कुछ रंज नहीं है।”

क्षण- भर में सवारों की एक टुकड़ी आ पहुंची। सबसे पहले जो सवार उतरकर खड़ा हुआ, वह शहशाह अकबर था। फौजदार ने जमीन तक झुककर आदाब बजाया। बादशाह उधर न देखकर आगे को सिपाही की ओर बढ़ा। सर्वत्र सन्नाटा था। सिपाही के पास पहुंचकर बादशाह ने कहा, “ऐ नेकबख्त, जो मुसीबतजदों पर रहम नहीं करता, वह सच्चा सिपाही नहीं- खूंखार जानवर है। तूने अपनी लियाकत से ऊंचा फर्ज पूरा किया है। तेरा कोई कसूर नहीं जो माफ किया जाए। अलबत्ता इस तबीयतदारी के इनाम में आज से तुम फौजदार बनाये गए।” इतना कहकर बादशाह ने अपने हाथ से सिपाही की बेड़ियां खोल दीं। सिपाही कुछ न कह सका। वह रोता हुआ वहीं बादशाह के कदमों पर गिर गया। बादशाह रघुपति की ओर बढ़े और कहा- “बहादुर! मैं चाहता हूँ कि दुनिया जाने कि अकबर बहादुरी का ना- कदर नहीं है। तुम्हारा जैसा वीर इस तरह कुत्तों की मौत नहीं मर सकता। जाओ, मैं तुम्हें छोड़ता हूँ। जी चाहे तो राणा के पास लौट जाओ।” रघुपति का मुंह एक बार लाल हो गया, फिर पीला पड़ गया। क्षण- भर वह खड़ा रहा और फिर उसने अपनी तलवार धरती पर फेंककर कहा—“शहशाह आपकी तेज तलवार और शाही जलाल जो कुछ न कर सका, वह आपकी उदारता ने कर दिखाया। आज से रघुपति आपका मित्र हुआ।” बादशाह ने प्रेम से उसे छाती से लगाया और तलवार उसकी कमर से बांध दी।

राणा के पास ऐसी ही वीर और सत्यवादी सरदार थे। उन्होंने जब उसका यह कार्य सुना तो उन्हें गर्व हुआ और उन्होंने उसे क्षमा कर दिया।

अंत में अनेक कष्ट और बाधाओं को सहते हुए राणा ने भामाशाह की अतुल धनराशि पाकर फिर सैन्य शक्ति एकत्रित की और छापामार युद्ध करके मुगलों से किले वापस लेने आरम्भ किए। किले की मुगल छावनियों में सैनिकों को काट डाला गया। धीरे- धीरे अजमेर, चित्तौड़ और मंडलगढ़ के किलों को छोड़कर शेष सारा मेवाड़ राणा ने जीतकर अपने अधीन कर लिया। उन्होंने बाईस वर्ष अकबर से युद्ध किया और प्रण किया कि जब तक मैं चित्तौड़ दुर्ग न ले लूंगा, तब तक शैंौया पर न सोऊंगा, सोने- चांदी के थालों में भोजन न करूंगा, सेना का वाद्य सेना के आगे न बजकर पीछे बजेगा। प्रताप जीवन- भर युद्धरत रहे, परन्तु चित्तौड़ न ले सके। प्रताप के अंतिम वर्षों में अकबर ने भी अस्वस्थ रहने के कारण उन पर नये आक्रमण नहीं किये। अन्तिम श्वास लेने से पूर्व उन्होंने अपने सरदारों से कहा कि चित्तौड़ विजय जारी रखना, युवराज अमरसिंह की तलवार न झुकने पाए।

4

असीरगढ़ का किला अजेय था। बादशाह अकबर स्वयं असीरगढ़ को छः मास तक घेरे पड़ा रहा, परन्तु किलेदार मुस्तफा ने बड़ी वीरता से बादशाह का मुकाबला किया। किले पर न तो किसी हथियार की मार ही काम दे सकती थी और न किसी तरह उसकी फसीलों तक पहुंचना ही सम्भव था।

धीरे- धीरे किले में रसद की कमी होने लगी। पानी बिलकुल खत्म हो चुका था और सिपाहियों के भूख के साथ प्यासे मरने की नौबत आ गई थी। मलिक मुस्तफा वीर तो था ही, साहसी, दूरदर्शी तथा उन्नत मन भी था। उसने एक साहपूर्ण कार्य किया, उसने फाटक खोल दिया। अकेला पांच सेवकों को साथ लेकर बाहर निकला और सीधा शाही लश्कर की ओर चला।

पहरेवालों ने उसे घेर लिया। मलिक ने निर्भय होकर कहा—“मुझे अकबर के पास ले चलो।” सिपाही उसे अकबर के पास ले गए। उसने आदर से वीर शत्रु का स्वागत किया।

मुस्तफा ने कहा—“और तो सब खैरियत है, सिर्फ पानी चुक गया। किले में आज रात- भर का पानी बाकी है। आप बड़े भारी शहंशाह हैं, मेरे सब दोस्त- सलाहकार इस मुहिम में मारे गए, इसलिए मैं आपसे ही मशविश करने आया हूं कि मुझे क्या करना चाहिए?”

बादशाह ने कहा—“आपने दुश्मन पर दोस्त की तरह भरोसा किया है, इसी तरह खुदा पर भरोसा कीजिए। आप कहते हैं रात- भर के लिए पानी है, जिसके बीच में रात, उसकी फिर क्या बात? देखिए खुदा को क्या मंजूर होता है।”

मलिक मुस्तफा किले में लौट आया। बादशाह की बात से उसे बहुत धीरज बंधा था। ईश्वर की कृपा से रात में ऐसी घनघोर वर्षा हुई कि किले के सब खतरे- तालाब पानी से भर गए और लश्कर उस आंधी- पानी में बिलकुल तबाह हो गया। बादशाह ने सुबह ही नमाज पढ़ी और ईश्वर से दुआ की—“ऐ खुदा, तू मुस्तफा की ओर है, तो बन्दा आज रुखसत होता है।”

अकबर ने उसी समय घेरा उठाने की आज्ञा दे दी।

अहमद की चांद बीबी ने भी बड़ी वीरता से तलवार लेकर सम्राट अकबर के दांत खट्टे किए थे, परन्तु निरन्तर लड़ने तथा किले में घिर जाने और रसद की कमी से उसे आत्मसमर्पण करना ही पड़ा, परन्तु वह अपने अटूट स्वर्ण-भण्डार को बादशाह के हाथों सौंपना नहीं चाहती थी। सोच-विचार कर उसने एक अद्भुत युक्ति काम में ली। उसने अपने तमाम सोने को गलाकर चार-चार सेर वजन के गोले ढलवा लिए और उन पर यह वाक्य खुदवा दिया—‘यह गोला उसी की मिल्कियत है, जो इसे पाए। दूसरा कोई आदमी उससे इसे नहीं छीन सकेगा।’

गोलों को तोप में भरवाकर उसने अकबर की सेना पर फायर करा दिए और आत्मसमर्पण कर दिया। खेत से लौटते समय एक घसियारे को एक गोला मिल गया। वह नहीं जानता था कि वह ठोस सोने का गोला है। वह उसे अपने घर ले आया। बालक गोले को पाकर बहुत खुश हुआ। उसके साथ गांव-भर के बालक गोले से खेलते रहे, फिर शहर जाकर उसे किसी बर्तन से बदलने के लिए एक कसेरे को दिया।

कसेरा गोला देखकर डर गया। उसने कहा—“यह तो सरकारी गोला है, तुझे कहां से मिला?” परन्तु वह गोला ठोस सोने का है, यह उसने भी नहीं जाना। उसने घसियारे को कोतवाल के सुपुर्द कर दिया।

धीरे-धीरे यह मामला बहादुरखां फौजदार के सामने पहुंचा। उसे यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि गोला सोने का है और जब उसने उसकी इबारत पढ़ी, तो उसको लालच आया और कहा—“यह गोला तो हम ही ने पाया है और यह हमारा है।”

गोला बहादुरखां ने छीन लिया। घसियारा बेचारा जान बचाकर भागा। वह अब भी नहीं समझ सका कि गोला सोने का था।

किन्तु यह खबर छिपी न रही और घूमते-फिरते अकबर के कानों तक पहुंची। अकबर ने बहादुरखां और घसियारे को अपने सम्मुख बुलाकर सब किरसा सुना। गोला घसियारे को दिला दिया और बहादुरखां का रुतबा कम कर दिया।

बंगाल में दाऊदखां अफगान की अमलदारी अब भी थी। समय पाकर अकबर ने आगमदल के युद्ध में सदा के लिए उसे भी नष्ट कर दिया। राज टोडरमल बंगाल के हाकिम बने। वे प्रथम श्रेणी के सेनापति और प्रबन्धक थे। मुसलमान बादशाह का वह पहला हिन्दू सरदार था। इसके बाद उसने कश्मीर, सिन्धु और कन्धार को फतह किया। इन प्रान्तों को राजा बीरबल ने फतह किया और वह वहीं काम आये।

जिस समय आगरा में बैठकर अकबर समस्त उत्तर भारत को अधिकृत कर रहा था, उस समय दक्षिण में एक प्रबल हिन्दू राज्य विजयनगर था। यहां के राजा के पास सात लाख सेना थी और वहां का वैभव अद्भुत था। उस प्रबल राज्य को पड़ोसी मुसलमान राज्यों ने मिलकर तामीकोट के मैदान में विजय कर लिया और बड़ी क्रूरता से हिन्दुओं का विध्वंस किया, फिर वे

परस्पर लड़ने लगे। अवसर पाकर अकबर ने अपने पुत्र मुराद को सेना लेकर दक्षिण में भेजा और शीघ्र ही अहमदनगर, बरार और खानदेश अधिकृत कर लिए।

अकबर ने अपनी चतुराई और विलक्षण राजनीति से शक्तिशाली राजपूतों को मित्र बना लिया। उसने राजपूत सरदारों की अधीनता में राजपूतों की सेनाएं भेजीं और उन्हें परास्त किया। उसने गुजरात को विजय किया, फिर बुरहानपुर और दौलताबाद तक फतह करता चला गया और दक्षिण में अपना पूरा दबदबा पैदा कर लिया। इसके बाद उसने कश्मीर को फतह किया। उसने बंगाल, ठाटा, सिन्धु का इलाका भी फतह किया। इसी बीच में बादशाह के पुत्र सलीम ने विद्रोह किया, पर वह कैद कर लिया गया। उसने फतहपुर- सीकरी और आगरा बसाया, क्योंकि मथुरा साम्राज्य के विद्रोह का एक मजबूत अड्डा था।

अकबर ने तोपखाने की उन्नति की और फिरोज़ी तोपची रखे। एक बार उसने तोपों की चांदमारी देखने की इच्छा प्रकट की। प्रधान तोपची को बुलाया गया। जमुना पर चादर तानी गई पर तोपची ने जान-बूझकर गलत गोला चलाया।

अकबर ने क्रुद्ध होकर सम्मुख बुलाया और कहा—“क्या तुम ऐसे ही निशानेबाज हो? तुम्हारी तो बहुत तारीफ सुनी थी।”

तोपची ने अर्ज की—“खुदावन्द, निशाने को देख नहीं सका, यदि शराब पी होती, तो सम्भव था, निशाना खाली न जाता।”

बादशाह ने शराब लाने का हुक्म दिया। तोपची ने सारी बोतल चढ़ा ली और फिर मूँछें पोंछता हुआ बोला—“हुजूर, चादर हटा लीजिए और लकड़ी पर एक बर्तन रख दिया जाए।”

यही किया गया। तोपची ने ऐसा गोला मारा कि लकड़ी और बर्तन के धुरे उड़ गए। बादशाह ने तब से फिरोज़ियों को अपने पीने के लिए शराब खींचने की आज्ञा दे दी। अकबर के दरबार में सुनार, तोपच, डाक्टर आदि बहुत-से फिरोज़ी नौकर थे। उन्होंने अर्ज की कि हमें एक पादरी दिया जाए। तब अकबर ने गोआ से पादर बुलवाया और आगरा में गिरजाघर बनाने की आज्ञा दे दी।

अकबर ने अपनी पुत्री की शादी एक अमीर के साथ कर दी थी। कुछ दिन बाद वह विद्रोही हो गया और उसे प्राणदण्ड दिया गया। उसी समय से उसने यह कानून बनाया कि शाही खानदान की लड़कियों की शादियां न की जाएं। आगे चलकर अकबर के इस कानून को औरंगजेब ने अपनी बेटी की शादी करके तोड़ा। शहजादियों की शादी न होने से मुगल खानदान में बहुत-से भीतरी गुल खिलते रहे।

सलीम ने पिता से विद्रोह किया, फिर भी अकबर उसी को उत्तराधिकारी बनाना चाहता था, परन्तु दरबार में राजा मानसिंह और खान-ए-आजम सलीम के बजाय सलीम के बड़े पुत्र खुसरू को मुगल तख्त का उत्तराधिकारी बनाना चाहते थे। मानसिंह खुसरू के मामा और खान-ए-आजम उनके ससुर थे। अकबर को जब मानसिंह के विचार ज्ञात हुए तो वह मानसिंह

को दण्ड देने का उपाय करने लगा, परन्तु मानसिंह बहुत प्रभावशाली दरबारी थे।

अकबर की माता कुछ दिन बीमार रहकर मर गई। उस समय अकबर सलीम से युद्ध करने के लिए इलाहाबाद गया हुआ था, जहां सलीम ने सत्तर हजार फौज एकत्र कर रखी थी। माता की मृत्यु की खबर सुनकर अकबर अपनी राजधानी में लौट आया। सलीम भी अपनी दादी का शोक मनाने आगरा आया।

अकबर ने यह अवसर सलीम को क्षमा करने के लिए उपयुक्त समझा। ज्योंही सलीम ने दरबार में आकर पिता का अभिवादन किया, अकबर उसे पकड़कर कमरे में ले गया और पितृरुनेह से उसके गाल पर एक चपत मारा। कुछ दिन उसे नजरबन्द रखा, बाद में पृथक् महल में स्वतन्त्र रहने दिया।

अकबर ने सलीम का विद्रोह- भाव नष्ट होता देखकर मानसिंह को दण्ड देने का निश्चय किया। उसने मानसिंह को दरबार में बुलाकर अपने पानदान से एक गोली स्वयं खायी और एक गोली मानसिंह को नजर की। कायदे के मुताबिक मानसिंह ने झुककर गोली को लिया और खा लिया।

अकबर ने जहर की गोली मानसिंह को देनी चाही थी, पर वह भूल से जहर को स्वयं खा गया और सुगंधित गोली मानसिंह को मिल गई।

अकबर को अपनी भूल मालूम हुई, परन्तु विष का प्रभाव उसके शरीर पर तेजी से हो रहा था। हकीमों के अनेक यत्न करने पर भी उसकी मृत्यु आ खड़ी हुई। उसकी जबान बन्द हो गई। उसने संकेत से दरबारियों को कहा कि सलीम के सिर पर पगड़ी रख दें। संकेत समझकर दरबारियों ने सलीम को पगड़ी पहनाई, कमर में हुमायूँ की तलवार बांधी और तख्त- नशीनी की रस्म पूरी की। इसके बाद अकबर के प्राण- पखेरू उड़ गए।

5

फारस से एक युवक गयासबेग नौकरी की तलाश में भारत की ओर अकबर के दरबार में नौकरी पाने की इच्छा से चल दिया। साथ ही उसकी सगर्भा पत्नी भी थी। वे लोग भारत की ओर बढ़ रहे थे कि मार्ग कन्धार के पास उसकी पत्नी ने एक पुत्री को जन्म दिया। शिशु पुत्री को पाकर उनका दायित्व बढ़ गया और वे कुछ दिन कन्धार में ठहर फिर आगे बढ़े। आगरा पहुंचकर गयासबेग ने अकबर से नौकरी की याचना की। अकबर ने उस पर सदय होकर उसे फौज में रख लिया। शीघ्र ही अपनी योग्यता और मिलनसारि से उसने उन्नति की। उसकी पुत्री मेहरुन्निसा भी चन्द्रकला की भांति बढ़ने लगी। सलीम और मेहरुन्निसा का साक्षात्कार मधुर स्वप्न की भांति हुआ था।

उस समय सलीम की उम्र छब्बीस बरस की थी। उसे युवराज का पद मिल चुका था। एक दिन गयासबेग उसे सादर आमंत्रित कर अपने घर ले गया। युवराज के स्वागत- सत्कार में

बहुत- से अमीर- उमराव आए। नाच- गाने हुए। मनोरंजन की अनेक व्यवस्थाएं की गई। ठाठादार दावत हुई। जब जश्न खत्म हो गया और बाहरी मेहमान विदा हो गए, तो एकान्त कक्ष में शाहजादा को ले जाकर बैठाया गया। शराब के जाम पेश किये गए और रस्म के मुताबिक घर की महिलाएं शाहजादे के सामने सलाम करने को हाजिर हुईं। उस समय मेहरुन्निसा की उम्र केवल चौदह बरस की थी। उसने भी नीचे आंखें किए उठकर शाहजादे के सामने आकर कोर्निश की। सुर्ख- सफेद रंग, ताजा कश्मीरी सेब के समान मुख, उज्ज्वल हीरे के समान दमकती आंखें, अर्द्धविकसित यौवन, फूलों के ढेर के समान शरीर- सम्पत्ति, सांचे में ढला एक- एक अंग, तिस पर लज्जा, भावुकता, सुकुमता, भोली अल्हड़ता। सलीम ने देखा तो आपा खो दिया। वह उसे अपलक देखता ही रह गया। उसने गाया तो, तो वह सकते के आलम में आ गया। उसने नृत्य किया, तो उसे अपने आसन पर बैठे रहना दूभर हो गया। शाहजादे की जलती हुई नजरें जब उस मुग्धा पर पड़ रही थीं, अकस्मात् ही उसका दुपट्टा हवा के एक झोंके से उड़ गया और सलीम की आंखों में सौन्दर्य के जादू का समुद्र लहरा उठा।

चिराग जल गए। शराब के प्याले पेश किए जा रहे थे। और वह चुपचाप पीता जा रहा था। उसे ऐसा प्रतीत हो रहा था कि जैसे उसकी रंगों में खून नहीं, पिघला हुआ सीसा बह रहा हो।

वह प्रेम का घाव लेकर लौटा। खाना, पीना, सोना उसके लिए दूभर हो गया। वह ठंडी सांसें लेता और बेचैनी से करवटें बदलता रहता। वह समझ नहीं पा रहा था कि क्या करे। वह इतनी बड़ी बादशाहत का उत्तराधिकारी था, पर इस समय वह एक दीन- हीन, आकुल- व्याकुल प्रेमी था।

बादशाह अकबर से भी शाहजादे की यह दशा छिपी न रही। वह एक दूरदर्शी बादशाह ही न था, नई जातीयता और नई भावनाओं को जन्म देने की आकांक्षा भी रखता था। भारत में हिन्दू- मुस्लिम संयुक्त जीवन का महत्त्व उसने समझ लिया था। सात सौ वर्ष से चले आते हुए धर्म- विग्रह को त्यागकर उसने हिन्दुओं के सामने मैत्री का हाथ बढ़ाया था। वह चाहता था कि हिन्दू- मुसलमानों में रोटी- बेटी के सम्बन्ध जारी हों और दोनों जातियां एक हो जाएं। इसी से उसने सलीम का ब्याह एक राजपूत राजकुमारी से किया था। वह नहीं चाहता था कि शाहजादे की इस नवीन उम्र में ही राजपूत बाला के प्रेम पर डाका पड़े। उसने राजपूत बाला को सलीम की प्रधान बेगम बना दिया था और तय किया था कि इसी का पुत्र बादशाह होगा। उसका दृष्टिकोण शुद्ध राजनीतिक था। उसे सलीम के प्रेम को जानकर चिंता हुई। उसने तत्काल एक अन्य फारसी युवक अली कुली बेग इस्तजहीं 'शेर अफगान' के साथ मेहरुन्निसा की निसबत पक्की करा दी।

यह खबर सलीम के लिए मौत से बढ़कर थी। उसने पिता के कदमों में गिरकर निवेदन किया कि वह मेहर की शादी उससे करा दे। सलीम ने कहा, “बिना मेहर के मैं जिन्दा न रहूंगा।” सलीम अकबर का बड़ी साध का बेटा था, फिर भी बादशाह ने उसकी प्रार्थना अस्वीकार कर दी। उसने अपने वजीर अबुलफजल से सलाह ली। मेरुन्निसा का निकाह शेर अफगान के साथ कर दिया गया और शेर अफगान को बर्दवान का हाकिमे आला बनाकर बंगाल भेज दिया गया। विवाह के समय मेहर की आयु सत्रह वर्ष थी।

सलीम छटपटाकर रह गया। उसी क्षण से वह अपने प्रतिद्वन्दी का जानी दुश्मन बन गया। अपने पिता अकबर के प्रति भी वह उद्धत और क्रुद्ध हो उठा। उसने पिता से विद्रोह किया। जिस समय अकबर दक्षिण में असीरगढ़ के किले का घेरा डाले हुए था, सलीम ने इलाहाबाद में अपने को बादशाह घोषित कर दिया। इस समय सलीम की उम्र तैंतीस बरस की थी।

जिस अबुलफजल ने अकबर को मेहर की शादी शेर अफगन से करने की सलाह दी थी, उसे भी सलीम ने ओरछा के राजा वीरसिंह बुन्देला के हाथ से मरवा डाला। अकबर इन सब बातों से सलीम पर एकदम अप्रसन्न हो गया। बादशाह का एकमात्र पुत्र मुराद अत्यधिक शराब पीने से पहले ही मर चुका था और अब दूसरा दानियाल भी शराब पीने से मर गया। तब बेगमात के कहने- सुनने से उसने सलीम को क्षमा कर दिया। अब वही उसका इकलौता उत्तराधिकारी था। यद्यपि वह भी अपने भाइयों के समान शराबी था, परन्तु उसकी आयु शेष थी।

जिस समय सलीम ने सिंहासन पर आरोहण किया, उसकी उम्र छत्तीस बरस की थी। वह एक सुन्दर, छरहरे बदन और लम्बे कद का आकर्षक व्यक्ति था। रंग उसका गोरा था। वह गलमुच्छे रखता था। आंखें उसकी तेज और चमकदार थीं। शिष्टाचार वह खूब जानता था। स्वभाव का सरल और बातचीत में पटु था। दरबार के सब लोगों को उसने अपने व्यवहार से प्रसन्न कर लिया। अपने विरोधियों को भी उसने क्षमा कर दिया। उसकी न्यायप्रियता की शीघ्र ही लोगों पर धाक बैठ गई।

जहांगीर को अब सब कुछ मिल गया था, पर मेहरुन्निसा का कांटा उसके कलेजे में अब भी कसक रहा था। मेहरुन्निसा को वह नहीं भूल सका था। उसके रंगमहल में अनगिनत सुन्दरियां थीं, पर वह चौदह बरस की अल्हड़ मेहर, जिसका अकस्मात् ही दुपट्टा उड़ गया था, उसके दिल से दूर नहीं हो सकी थी।

शेर अफगन अब बर्दवान में एक बहुत बड़े बाग में आलीशान महल बनवाकर रह रहा था। वह अपनी प्रिय के दुर्लभ, अछूते यौवन का आनन्द दामोदर नदी की तरंगित धाराओं के समान ले रहा था। दोनों सुखी थे, प्रसन्न थे। मेहर के हृदय में भी सलीम की वह नजर घुस गई थी। वह कभी- कभी सलीम की उस चितवन के सम्बन्ध में सोचा करती थी। उसे यह भी ज्ञात था कि सलीम विवाह करना चाहता था। वह कभी- कभी यह भी सोचती थी कि यदि ऐसा होता, तो वह एक दिन हिन्दुस्तान की मलिका बन जाती, परन्तु ये सब बातें धुंधली होती हो रही थीं। शेर अफगन का प्यार उसे झकझोर रहा था। अपने सौभाग्य पर उसे गर्व था। इसी समय उसे एक पुत्री की उपलब्धि हुई।

इस समय बंगाल राजद्रोह का अड़्डा बना हुआ था। बंगाल का सूबेदार इस समय कुतुबुद्दीन था। उसके पास एक गुप्त शाही फरमान आया। कुतुबुद्दीन ने शेर अफगन को अपने दरबार में बुलाकर कहा, “तुम पर राजद्रोह का अभियोग है।” उसने शेर अफगन के साथ कुछ ऐसा अशिष्ट व्यवहार किया कि शेर अफगन क्रुद्ध हो उठा। दोनों आपस में तलवार लेकर जुट गए और दोनों ही लड़कर मर गए। इसके बाद ही शेर अफगन की बेवा मेहरुन्निसा को आगरा ले जाने के लिए शाही फौज आयी।

कक्ष में दीप जल रहा था। एक भद्रवेशधारिणी वृद्धा बहुत- सी छोटी- बड़ी पोटलियां कभी खोलती, कभी बांधती, कभी आप ही आप बड़बड़ाती। वृद्धा के बाल श्वेत थे, शरीर गौर था, आंखें बड़ी- बड़ी थीं, वस्त्र सादा, निरलंकार शरीर कुछ स्थूल था। नाक जरा ऊंची, दृष्टि पैनी और इस बेला चंचल। हवा के झोंके से दीप बुझने को हो जाता। उसकी लौ कांपती और फिर स्थिर हो जाती। कुछ पोटलियां बंधी थीं, कुछ खुली पड़ी थीं। उनमें से किसी में हीरे- मोती, मणि- मणिक, किसी में स्वर्ण की मुहरें, किसी में जड़ाऊ गहने, किसी में बहुमूल्य कमरूबाब और जरबफ्रत की पोशाकें। सभी कुछ सामने फैला पड़ा था। क्या साथ ले, क्या छोड़ दे- वृद्धा इसी असमंजस में बैठी, बड़बड़ाती हुई, कभी इस और कभी उस पोटली को बांध और खोल रही थी।

इसी समय कृशांगी मेहर ने निःशब्द कक्ष में प्रवेश किया। उस समय मेहर की उम्र इक्कीस वर्ष की थी।

मेहर ने देखकर दीर्घ निःश्वास छोड़ा। फिर आहिस्ता से कहा, “मरजीना, यह सब क्या है?”

“जो-जो साथ ले चलना है, वही सब बांध-बूंध रही हूं।”

“तो तू समझती है कि मैं ससुराल जा रही हूं।”

वृद्धा की आंखों में आंसू आ गए। उसने एक बार मेहर की ओर देखा, फिर आंखें नीची करके कहा, “बीबी, यह सब आगरा में काम आएंगे।”

“तुमसे किसने कहा कि मैं आगरा जाऊंगी?”

बूढ़ी दासी मेहर को प्यार करती थी। उसने गुस्सा होकर कहा, “आगरा भी नहीं जाओगी, यहां भी नहीं रहोगी, तो फिर इस दुनिया में तुम्हारे लिए ठौर कहां है?”

बरबस एक आंसू मेहर की आंख से टपक ही पड़ा, पर उसे मरजीना ने देखा नहीं। उसने आहिस्ता से कहा, “बीबीजान, जितना, जरूरी है, वही ले चल रही हूं।”

“आखिर किसलिए?”

“अपने काम आएगा, बीबी। अभी जिन्दगी बहुत है।”

“बोझ तो जिन्दगी का ही काफी है। इस कंकड़- पत्थरों का बोझ लादकर क्या करोगी?”

“जिन्दगी का बोझ हल्का करूंगी। बीबी, तुम्हें नहीं लादना होगा। मैं ही ले चलूंगी।”

“जिन्दगी मरजीना, यह सब दामोदर के पानी में फेंक दे।”

बांदी ने खीझकर कहा, “यह सब दामोदर के पानी में फेंक दोगी तो खाओगी

क्या?”

“हाथी से चींटी तक को जो देता है, वही दाता इस यतीम बेबा को भी देगा। न होगा, तो राह- बाट में कहीं भूख से मर जाऊंगी। कुत्ते और सियार जिस्म को ठिकाने लगा देंगे।”

“तोबा, तोबा! यह क्या कल्मा कहा, बीबी।”

“इन कंकड़- पत्थरों पर मोह है, तो तू ले जा तुझे छुट्टी।”

“खूब छुट्टी दी, बीबी! छाती पर बोझ लेकर दामोदर के पानी में डूब मरने में इस बदबख्त बुढ़िया को कुछ तकलीफ न होगी।”

“नाराज हो गई मरजीना? राह में चोर- डाकुओं का क्या डर नहीं है? हम औरत ज्ञात किस- किस मुसीबत का सामना करेंगी?”

मरजीना की आंखों से टप से दो बूंद आंसू टपक पड़े।

मेहर ने देखा। उसने कहा, “अब देर न कर । तीनपहर रात बीत चुकी। दिन निकलने पर निकलना न हो सकेगा।”

मरजीना ने सटपट सब ढीरे- जवाहरात कूड़े के ढेर की तरह एक गठरी में बांधे और उसे बगल में दबाकर उठ खड़ी हुई, फिर एक दीर्घ निःश्वास फेंककर कहा, “चलो, बीबी, लेकिन बच्ची सो रही है। तुम गठरी लो। मैं बच्ची को लिये लेती हूँ।”

“नहीं, बच्ची को मैं ही ले चलती हूँ।”

मेहर ने बच्ची को गोद में ले लिया, काले वस्त्र से शरीर को अच्छी तरह लपेटा। दोनों असहाय स्त्रियां प्रासाद की सीढ़ियां उतर, निबिड़ अन्धकार में पौड़ी, द्वार, आंगन, दालान पारकर, बाग की रविशों पर चलती हुई नदी- तीर की ओर बढ़ चलीं। सामने दामोदर का विशाल विस्तार था, हवा तीर की तरह चल रही थी। हवा के एक झोंके ने मेहर का वस्त्र उड़ा दिया। उसे अच्छी तरह शरीर से लपेट और बच्ची को छाती से लगा, उसने कदम बढ़ाए। पीछे से आंचल खींचकर मरजीना ने कहा, “बीबी, बड़ा डर लग रहा है। चलो, लौट चलो।”

“लौट चलने को घर से नहीं निकली हूँ और पास आ जा। किनारा दूर नहीं है। वह सामने किशती है। किशती पर चिराग जल रहा है।”

“लेकिन यह पैरों की आहट कैसी है?...कोई आ रहा है।”

“जंगल है। सियार-कुत्ते रात में घूमते ही हैं।

“बड़ी खौफनाक रात है, बीबी। कोई हरवा- हथियार भी साथ नहीं लिया। बड़ी गलती की।”

“सबसे बड़ा हथियार है मेरे पास—तेज जहर। आनन- फानन तमाम डर- खतरों से दूर करने की इसमें ताकत है।”

“अपनी ही जान खोना हुआ दुश्मन का क्या बिगड़ेगा?”

“मैं यतीम बेवा औरत दुश्मन का क्या बिगाड़ सकती हूँ? फिर बिगाड़- सुधार जो होना था, हो चुका। किस्मत में जो लिखा है वही तो होगा, फिर दुश्मन पर गुस्सा क्या, किसी से शिकायत क्या।”

मरजीना की चीख निकल गई, “बीबी, वह क्या?”

काली- काली भूत- सी दो मूर्तियां अंधकार में आगे बढ़ रही थीं। देखकर मेहर रुक गई। बच्ची को उसने जोर से छाती पर कस लिया।

पास आने पर देखा आने वाले दो पुरुष थे। दोनों उच्च सैनिक पदाधिकारी प्रतीत होते थे। उनकी कीमती पोशाक पर शस्त्र अंधेरे में भी चमक रहे थे। जो आगे था, उसी ने कहा, “आप कौन हैं?”

इधर से किसी ने कोई जवाब नहीं दिया। उस पुरुष ने फिर वैसे ही स्वर में कहा, “आप जो कोई भी हों— जहां हैं, वहीं खड़े रहें।”

उसने अपने साथी को मशाल जलाने को कहा। साथी के एक हाथ में नंगी तलवार थी और दूसरे में मशाल। तलवार म्यान में करके उसने मशाल जला दी। मशाल के पीले- कांपते प्रकाश में उस व्यक्ति ने देखा, दो स्त्रियां हैं। आगे एक अनिंद सुन्दरी बाला है।

मेहर ने जल्द- गंभीर स्वर में कहा, “तुम लोग कौन हो? और किसके हुक्म से तुमने हमारे बाग में घुस आने की जुर्रत की?”

“मुआफ कीजिए, मैं हुक्म का बन्दा हूँ।”

“किसके?”

“नूरुद्दीन गाजी मुहम्मद जहांगीर शहंशाहे- हिन्द का।”

“लेकिन यह तो शहंजाहे- हिन्द का दौलतखाना नहीं है।”

“जी, जानता हूँ।”

“तुम्हारा रुतबा क्या है?”

“मैं शाही सेना का एक सिपहसालार हूँ।”

“तो हजरत बादशाह ने तुम्हें मेरा घर- बार लूटने के लिए भेजा है?”

“जी नहीं, बेअदबी मुआफ हो। हम लोग आपको बाइज्जत दिल्ली ले जाने के लिए आए हैं?”

“एक बेबस बेबा को कैद करने के लिए शहंशाहे- हिन्द ने इतनी बड़ी फौज भेजी है? यह तो शहंशाह की शान के खिलाफ है।”

“बेअदबी माफ हो! कैद करने को नहीं, शहंशाहे- हिन्द का हुक्म है कि आपको बाइज्जत दिल्ली ले जाया जाए।”

“लेकिन तुम तो चोर की तरह रात को मेरे महल में घुसे हो। क्या यह शर्म की बात नहीं? तुम शाही सिपहसालार हो, फिर भी- - ।”

“गुलाम हुक्म का बन्दा है। इसमें हमारा कसूर नहीं है।”

“खैर, तो तुम मेरे साथ में कैसा सलूक करना चाहते हो? तुमने कहा था- - - बाइज्जत- - -”

“जी हां, बादशाह का हुक्म है कि आपके साथ हर तरह एक मलिका के दर्जे का व्यवहार किया जाए।”

“तो तुमने महल क्यों घेरा?”

“मुझे खबर मिली थी कि आप आज रात बर्दवान छोड़ रही हैं। अगर आप चली जातीं, तो मेरा सिर धड़ से उड़ा दिया जाता।”

“क्या तुम मेरी एक आरजू पूरी कर सकते हो?”

“आपके हर हुक्म को बजा लाने का मुझे शाही हुक्म है।”

“तो मेरे पास जो जर- जवाहर है, वह सब मैं तुम्हें देती हूँ। इसके अलावा दस हजार अशर्फियां और। तुम मुझे चली जाने दो।”

“बादशाह को क्या जवाब दूंगा?”

“कह देना कि कैदी ने रास्ते में जहर खा लिया। इतमीनान रखो, तुम फिर कभी यह सूरत दुनिया में न देखोगे।”

“शहंशाहे-हिन्द के जानिसार नौकर नमकहराम नहीं होते।”

“खैर, देखूं, शाही फरमान कहां है?”

रहमतखां ने अंगरखे की जेब से निकालकर फरमान मेहर के हाथ में दिया। मशाल की रोशनी में उसने पढ़ा, लिखा था: “शेर अफगन की बेवा को बाइज्जत ले आओ।”

फरमान पढ़कर एक वक्र मुसकान मेहर के होंठों पर खेल गई। उसने घृणा से फरमान रहमतखां को वापस देते हुए कहा, “यह तो मेरे नाम नहीं, तुम्हारे नाम है। जब तक मेरे नाम फरमान नहीं आता, मैं दिल्ली नहीं जाऊंगी।”

“आपका हुक्म मुझे बसरोचश्म मंजूर है। आप महल में तशरीफ ले जाएं। मैं दूसरा शाही परवाना मंगवाता हूँ।”

सिपहसालार ने झुककर सलाम किया और पीछे हट गया। मेहर क्षण-भर खड़ी रही और फिर पीछे लौट पड़ी।

“मरजीना, बूढ़ा घाघ है। झुककर मीठी बातें बनाता है, मगर नजर किस कदर सख्त है कि महल तातारी बांदियों ने घेर रखा है। बाहर फौज का घेरा है। महल में पंछी भी पर नहीं मार सकता।”

मरजीना ने कहा, अब क्या होगा, बीबी?”

“तुझे अभी जाना होगा।”

“कहां?”

“महारानी कल्याणी के पास जा और उन्हें संग ले आ। ले, खर्च के लिए दस अशर्फी। एक पालकी ले आना।”

“लेकिन जाऊंगी कैसे? महल तो हथियारबन्द तातारी बांदियों ने घेर रखा है।”

मेहर कुछ सोचती रही, फिर उसने दस्तक दी। एक तातारी बांदी हाथ बांधकर आ खड़ी हुई। उसने कोर्निश करके पूछा, हुक्म है, बेगम साहिबा?”

“रहमतखां सिपहसालार को अभी हाजिर करा।”

थोड़ी देर में वृद्ध रहमतखां ने ड्योढ़ी पर आकर सलाम किया।

मेहर ने परदे की आड़ ही से कहा, “एक कैदी के साथ इस कदर अदब-आदाब की जरूरत नहीं। मैंने एक बात जानने के लिए तुम्हें तकलीफ दी है। मेरी एक बांदी एक जगह जा रही है। किसी सिपाही को उसके साथ भेज दो। वहां से मेरी एक सहेली आएगी। खबरदार, उनकी पालकी की जांच कोई न करे।”

“बिना जांच-पड़ताल के कोई पालकी भीतर नहीं आ सकती।”

“बादशाह ने क्या तुम्हें ऐसा भी हुक्म दिया है?”

“जी नहीं, लेकिन हिफाजत के ख्याल से हमें मजबूरन यह करना पड़ता है।”

“लेकिन तुम पर हमारे हर हुक्म की तामील लाजिम है। क्या तुम्हें बादशाह ने ऐसा हुक्म नहीं दिया है?”

“दिया है, बेगम साहिबा।”

“तो मेरा हुक्म है कि जो सवारी आ रही है, उसकी जांच- पड़ताल न की जाए और वह बाइज्जत हमारे पास आने दी जाए।

“सवारी कहां से आ रही है?”

“काटवा के किलेदार महाराज जगपतिसिंह की महारानी कल्याणी देवी। वे मेरी सहेली हैं। आड़े वक्त पर मैं उनसे सलाह- मशविरा लेती हूं। दिल्ली की बाबत मैं उनसे मशविरा करना चाहती हूं।”

“बहुत खूबा मैं खुद काटवा जाकर महारानी को साथ ले आता हूं। आप आराम फरमाएं।”

मेहर ने मुंह फेरकर देखा और वह दौड़कर रानी कल्याणी के गले से लिपट गई। कल्याणी ने व्यथावरुद्ध स्वर में कहा, “इतना हो गया और मुझे खबर भी नहीं दी। दो ही दिन में यह सूरत बन गई। चेहरा स्याह हो गया। बिखरे- रूखे बाल, सूखे होंठ जैसे कमल पर बिजली गिरी हो। बहन, मुझे खबर क्यों नहीं दी?”

मेहर के मुंह से बात नहीं फूटी। कल्याणी के वक्ष पर सिर रखकर वह फफक-फफकर रोने लगी।

“अब रोने- धोने से क्या होगा? जो होना था, हो गया।”

“जो हुआ वह शायद काफी न था। इसी से उस संगदिल बादशाह ने मुझे गिरफ्तार करके आगरा ले जाने के लिए फौज भेजी है।”

“आगरा तो अब तुम्हें जाना ही होगा और उपाय ही क्या है?”

“मैं जहर खा लूंगी, पर उस संगदिल का मुंह न देखूंगी।”

रानी कल्याणी सोचने लगी। उन्होंने कहा, “कौन जाने, तुम्हारी किस्मत में शायद हिन्दुस्तान की मलिका होना ही लिखा हो।”

“आह, इस कदर बेरहम मत बनें, महारानी। मैंने बड़ी बहन समझकर इस विपदा में आपको मशविरा करने के लिए बुलाया है।”

“मेहर, मैं भाग्य में विश्वास करती हूं। जो कुछ हुआ, सब भाग्य का खेल था। अब आगे जो भाग्य में है, उसे कौन मेट सकता है। तुम जानती हो कि जन्नतनशीन बादशाह अकबर

यदि जिद न पकड़ते, तो तुम शाहजादा सलीम की बीबी बनतीं और आज हिन्दुस्तान की अधीश्वरी होतीं, लेकिन भाग्य बड़ा प्रबल है। उसने तुम्हारे लिए अब फिर भारत की अधीश्वरी होने का द्वार खोल दिया है।”

“नहीं, मैं उस संगदिल की मरजी का खिलौना नहीं बनूंगी। मेरे नेक, बहादुर खाविन्द के खून का दाग उसके दामन पर है।”

“मेहर, तुम्हें आगरा ले जाने के लिए फौज आयी है। अब तुम क्या कर सकती हो?”

“शस्ते में जहर खा लूंगी। मेरी मिट्टी ही आगरा पहुंचेगी!”

“छि:- छि:! तुम जिन्दगी को इतनी बेकार समझती हो? मरने से तुम्हारा सब कुछ नष्ट हो जाएगा। बादशाह का क्या बिगड़ेगा? नहीं, तुम्हें एक बार बादशाह के सामने जाना ही चाहिए।”

“तो मैं उसकी छाती मारकर कहूंगी कि तुम दीनो दुनिया के बादशाह हो, लेकिन मैं तुमसे नफरत करती हूँ। तुमने एक हंसती- खेलती दुनिया को बरबाद किया है, एक मासूम, बेगुनाह औरत को बेवा बनाया है।”

“मेहर, लात खाकर भी अगर बादशाह इन चरणों को चूम ले और इनका सदा के लिए दास बन जाए तो?”

“ऐसी बात मत कहो, बहन!”

“तो बहन, किस्मत के दरिया में जिन्दगी की किशती को छोड़ दो और देखो कि कहां ठहरती है। पहले से कोई इरादा पक्का न करो। जब जैसा देखना, वैसा करना।”

“तो आप क्या सलाह देती हैं?”

“आगरा जाओ, और अवसर मिले तो हिन्दुस्तान की मलिका बनो और ऐसी हुकूमत करो कि हिन्दुस्तान तुम्हारी एक नजर से कांप उठे। बादशाह को अपने चरणों का गुलाम बनाओ, लेकिन अनादर ही पाओ, तो बेशक जहर पी लो।”

मेहर निरुत्तर हो गई। वह सिर नीचा करके सोचने लगी।

उसे अपनी छाती के निकट खींचकर रानी ने कहा, “मेहर, भारत की अधीश्वरी होकर तुम बहुतों का भला करोगी। इतिहास में तुम्हारा नाम अमर हो जाएगा।”

मेहर खिन्न आगरा पहुंची, लेकिन बादशाह ने उससे मुलाकात नहीं की। उसने उसे हरम के एक साधारण कक्ष में रहने की आज्ञा दी और उसे अपनी माता की सेवा में नौकर रख दिया।

मेहर यद्यपि बादशाह से अत्यन्त रुष्ट थी, पर उसे उससे ऐसे निष्ठुर व्यवहार की आशा न थी। उसके भावुक और गर्वीले हृदय को इससे ठेस पहुंची। उसे वे दिन भूले नहीं जब बादशाह शाहजादा सलीम था, और उसने उसके प्रति प्रेम में अन्धे होकर कितनी विकलता प्रकट की थी।

उसने बादशाह की आज्ञा मानकर राजमाता की सेविका होना स्वीकार कर लिया। पर माहवार मुशाहरा लेने से इनकार कर दिया। उसके पास काफी धन था। उसमें से बहुत-सा उसने अपनी बांदियों को बांट दिया और स्वयं एक प्रतिष्ठित विधवा की भांति रहने लगी।

वह अपने कक्ष की बारादरी में, जो महल के बाग के सामने पड़ती

थी, कीमती ईरानी कालीन पर जरदोजी की मसनद पर बैठकर हुक्का पीती।

उसने चुनकर सुन्दरी दासियां अपनी सेवा में रखी थीं। वे हर समय उसकी सेवा में उपस्थित रहतीं। पर वह बहुत कम उनसे सेवा लेती। वह उन्हें सखियों की भांति खूब ठाठ से सजा-धजाकर रखती। यद्यपि वह स्वयं सादा वेश में रहती, पर अपनी दासियों को हीरे-मोती और जड़ाऊ पोशाक में सजाए रखती थी। वह अरब से लाए हुए बहुमूल्य इत्र का खास शौक रखती थी। उसके चारों तरफ का वातावरण निहायत खुशनुमा रहता था, परन्तु उसका हृदय उदास रहता। वह बहुधा फारसी के प्रसिद्ध कवि हाफिज का एक शेर गुनगुनाया करती, जिसका भावार्थ यों था: ‘पछवा हवा का एक झोंका वातावरण को सुरक्षित कर देगा और तब पुरानी दुनिया नई में बदल जाएगी।’ उसके इस बन्दी-जीवन के दिन बीतते चले जा रहे थे, पर उसके निराश जीवन में न पछवा हवा का वह झोंका आता था और न उसकी दुनिया बदलती थी।

कलमी तस्वीरें बनाकर और कशीदाकारी का काम करके उसने अपनी आजीविका चलाना आरम्भ किया। शीघ्र ही उसके हाथ की बनी वस्तुएं दिल्ली और आगरा में ऊंचे मूल्य पर बिकने लगीं। राजधानी में इन वस्तुओं का बड़ा महत्व हो गया। दिल्ली और आगरा की ऊंचे घराने की महिलाएं और अमीर-उमरा मेहरुन्निसा के हाथों से रेशम पर बने चित्रें और कशीदों के प्रशंसक हो गए।

अचानक उसने सुना कि हरम में एक औरत आई है, जो भविष्यवाणी करती है। उसने उसे बुलाया। रम्माला बहुत बूढ़ी थी। उसके बाल सन के समान सफेद थे। इस उम्र में भी उसकी दृष्टि तेज थी। मेहर को देखते ही उसने अपने दोनों दुबले-पतले हाथ ऊपर उठाए और दोनों हाथों की उंगलियां परस्पर उमेठते हुए विक्षिप्त-सी मुद्रा में असम्बद्ध शब्द कहने आरम्भ किए, वे शब्द बड़े प्रभावशाली थे।

मेहरुन्निसा ने कुछ-कुछ भीत मुद्रा में कहा, “बड़ी बी, तुम्हारी इन बातों का मतलब क्या है? मैं अपने भाग्य और भावी जीवन के सम्बन्ध में कुछ जानना चाहती हूं। क्या तुम इस सम्बन्ध में कुछ बता सकती हो? यदि नहीं बता सकतीं, तो यह लो और यहां से चली जाओ।” यह कहकर उसने उसके हाथ पर सोने की एक मुहर रख दी।

चमचमाती मुहर को हथेली पर देखकर वृद्धा की आंखों में चमक आ गई। उसने कहा, “ऐ नेकबख्त, तू रेगिस्तान में पैदा हुई, लेकिन तेरी मौत तरल पर होगी। बचपन में जिसे भूखा रहना पड़ा, जवानी में वह दुनिया को रोजी देगी। भरोसा रख, और इस दूसरी हथेली पर अपने विश्वास का सबूत दे” और उसने दूसरी हथेली दी।

मेहरुन्निसा ने कांपते हाथ से एक और मुहर उसकी दूसरी हथेली पर रख दी। वृद्धा पागलों की भांति हंसती और बड़बड़ाती चली गई।

इसी तरह दिन बीतते गए। इसी बीच एक असाधारण घटना घटी। एकाएक यह अफवाह फैल गई कि एक अत्युत्तम अमीर उससे प्रेम करता है और उसने उससे विवाह का प्रस्ताव किया है, जिसे मेहर ने स्वीकार कर लिया है। एक दिन वह अधीर, उतावला प्रेमी उसके कक्ष में बिना उसकी अनुमति के जा पहुंचा और अत्यन्त नग्न और बेतुके ढंग से अपना प्रेम प्रकट करने लगा। मेहर ने उसे तुरन्त बाहर चले जाने का आदेश दिया, पर वह वासना का पुतला उसके आदेश की परवाह न करके उसे जबरदस्ती आलिंगित करने को बढ़ा। मेहर ने सिंहनी की भांति उछलकर अपनी कटार मूठ तक उसकी छाती में भोंक दी। आक्रमणकारी खून से लथपथ होकर फर्श पर छटपटाने लगा। आग की तरह यह खबर हरम में फैल गई।

तीन बरस बीत गए। इस बीच मानसिक द्रुण्ड ने दोनों को आन्दोलित किया। बादशाह बड़ी सावधानी से उसकी गतिविधि को देखता और अप्रकट रूप से उसकी यह व्यवस्था रखता कि उसे कोई कष्ट न होने पाए। सच पूछा जाए, तो मेहरुन्निसा के कशीदों और चित्रों की इतनी प्रशंसा तथा अच्छे दामों में उनकी बिक्री होना भी बादशाह के संकेतों पर ही था।

मेहर की दुर्दमनीय महत्वाकांक्षा कह रही थी कि वह इस प्रकार कशीदे वगैरह बनाने के लिए पैदा नहीं हुई है। तभी वृद्धा की भविष्यवाणी से उसकी आशाओं के पर लग गए। उसके बाद ही वह अमीरवाली घटना हुई। बादशाह के कानों तक इसकी खबर पहुंची। मेहर ने सुना कि बादशाह ने उसके साहस की प्रशंसा की है। सुनकर उसके होंठ फड़कने लगे और उसे एक नई बेचैनी सताने लगी, जैसे वह किसी आने वाले की प्रतीक्षा कर रही हो, परन्तु वह आने वाला कौन था, जिसके पैरों की आहट के लिए उसके कान चौकन्ने हो रहे थे? - - -

ईद का दिन था, संध्या का समय। रंगमहल में जश्न मनाया जा रहा था। मेहरुन्निसा अपने कक्ष में कालीन पर बैठी अस्तंगत सूर्य की नजरबाग में पड़ती आड़ी-तिरछी सुनहरी किरणों को निहार रही थी। उसकी बांदियां लकड़क पोशाक पहने, उसके आसपास खड़ी थीं।

अचानक बांदियों के मुंह से चीख निकल गई। मेहर समझ गई कि कक्ष में कोई आया है। उसने आंख उठाकर देखा, जहांगीर था।

बादशाह उसके रूप को देखकर धक् रह गया। अब उसकी पुरानी परिचिता अस्फुट कली न थी, उसका यौवन भरपूर निखरा हुआ था। वह ऐसा प्रखर था कि उसकी चकाचौंध से आंखें झप जाती थीं। मेहर ने उस समय कोई खास पोशाक नहीं पहन रखी थी। वह मस्लिन की सफेद सादा पोशाक पहने बैठी थी, किन्तु उसमें से भी छनकर उसका रूप अपनी अद्भुत छटा

दिखा रहा था।

बादशाह को देखते ही मेहर हड़बड़ाकर उठ खड़ी हुई और उसने अपनी आंखें जमीन में गड़ा दीं। लाज की ललाई उसके सुन्दर मुंह पर फैल गई।

बादशाह के दो कदम आगे बढ़े। उन्होंने उसका हाथ अपने हाथ में लेकर कहा, “स्त्रियों में सूर्य के समान मेहर इस तरह बांदियों की पोशाक में क्यों है?” रंग- बिरंगी जड़ाऊ पोशाकें पहने बांदियां खड़ी थीं।

मेहर ने सीने पर हाथ रखकर और सिर झुकाकर जवाब दिया, “बांदियां उसकी मरजी के माफिक रहती हैं, जिसकी सेवा में वे नियुक्त होती हैं। वे सब मेरी बांदियां हैं और अपनी हैसियत के अनुसार मैं इन्हें सजाती- पहनाती हूं लेकिन शहंशाह, मैं जिसकी बांदी हूं, वे मुझे जिस तरह रखना चाहते हैं मैं उसी तरह रहने को मजबूर हूं।”

“मेहर शहंशाह- हिन्द तेरे रूप का पुजारी यह जहांगीर तेरे कदमों पर अपने प्रेम के फूल चढ़ाता है। क्या तुझे जहांगीर की सुल्ताना बनने में कोई उज्र है?”

मेहर ने नजर उठाकर क्षण- भर बादशाह की ओर देखा और फिर नजर नीची करके कहा, “ऐ शहंशाहे- हिन्द की सुल्ताना, अब से तू ही इन्साफ की तराजू को सम्भाल। जहांगीर तो सिर्फ तेरी मुहब्बत का भिखारी है।” और उसने उसे खींचकर हृदय से लगा लिया। मेहर ने बादशाह की छाती को आंसुओं से तर कर दिया।

6

सलीम ने अपना नाम जहांगीर रखकर बाईस वर्ष तक मुगल तख्त पर राज्य किया। वह शराबी, ऐयाश और निष्ठुर तो था, पर राज्यशासन उसने बड़ी ही चतुराई और तत्परता से किया। उसके राज्यकाल में कला-कौशल, व्यवस्था और शांति रही। मलिका नूरजहां का भी इस शासन में भारी हाथ रहा।

उसके गद्दी पर बैठने के बाद ही उसके पुत्र खुसरू ने विद्रोह किया, पर उसे कैद कर लिया गया और उसके साथी कत्ल करा दिये गए। इसने उदयपुर के राणा से सन्धि की और उनका पद दरबार में जहांगीर से दूसरा नियत किया। उसी के शासनकाल में इंग्लैंड का दूत टमस रो भारत में आया और अपनी कम्पनी के लिए व्यापार का अधिकार प्राप्त किया।

जहांगीर ऐयाश और खुशमिजाज तबीयत का आदमी था। वह न रोजे रखता, न मुसलमानी धर्म की परवाह करता था। शराब और अफीम का खूब सेवन करता था।

एक बार एक दरबारी ने शेर मारा और उसकी खाल का कोट पहनकर दरबार में आया। यह देखकर जहांगीर ने अपनी बन्दूक उठाई और अमीर को निशाना बनाया। वह बेचारा विल्लाकर गिरा। गोली टांगों में लगी थी। जहांगीर बोला- “यदि मैं इस शेर को न मारता, तो मारा

शेर जोश में आ जाता।” यदि कोई नवयुवक स्त्रियों का अत्यन्त प्रेमी होता, तो वह उसे पकड़कर किसी नीच जात की मैली और गन्दी स्त्री के साथ कई दिन तक बन्द रखता था।

जहांगीर अपने हकीम से बहुत चिढ़ता था, क्योंकि वह कट्टर मुसलमान और धर्मात्मा आदमी था। एक बार वह उस समय दरबार में पहुंच गया, जब बादशाह शराब पिए हुए था। उसे देखते ही जहांगीर ने कहा—“मेरा तीर-कमान लाओ, मैं इस खूंसट को खत्म करूंगा।”

नूरजहां पर्दे में बैठी हुई थी, उसने गुलामों को इशारा किया कि असली तीर न दिये जाएं, बेंत के तीर दिये जाएं।

जहांगीर ने तीर बरसाने शुरू किए। यह सब कुछ होने पर भी हकीम साहब झुक-झुककर सलाम किये जाते तथा आदाब बजाये जाते थे। अन्त में मलिका के इशारे पर गुलामों ने उसे संकेत किया कि अभागने लेट जा, क्यों जान का दुश्मन बना है। हकीम बेचारा लेट गया। जहांगीर ने समझा कि मर गया। तब बोला, “अच्छा हुआ, इसने भी बहुतों की जानें ली हैं।”

जहांगीर का नूरजहां से प्रगाढ़ प्रेम इतिहास प्रसिद्ध है। कदाचित् ही कोई ऐसा प्रेम-दीवाना पुरुष हो, जो किसी स्त्री पर इस भांति मुग्ध हो जाए। नूरजहां का मरते दम तक बादशाह पर अबाध अधिकार रहा, सारी सल्तनत नूरजहां के अधिकार में थी, स्याह- सफेद करने का उसे अधिकार था। नूरजहां ने एक बार उससे प्रतिज्ञा कराई कि वह शराब पीना कम कर देगा और दिन में नौ प्याले से ज्यादा नहीं पीयेगा। कुछ दिन तो यह प्रतिज्ञा चली, परन्तु एक बार भंग हो गई।

नौराजे का जलसा था। बदली के दिन थे, लखनऊ से भांड बुलाये गए थे और वे अपना करतब दिखाकर जहांगीर को खुश कर रहे थे। जहांगीर की बदशाहत रस- रंग की बादशाहत थी। शराब और नूर उसकी आंखों के आगे था। बादशाह अपनी अधखुली आंखों से नूर को देख- देखकर मसनद पर लुढ़क रहे थे। दरवाजे पर विलमन पड़ी थी, विलमन के बाहर दीवानखानों में भांड धमाचौकड़ी मचा रहे थे। विलमन के भीतर नूरजहां के पास में जहांगीर पड़ा- पड़ा कभी शराब के प्याले का, कभी भांडों का, कभी नूर की लामिसाल सुन्दरता का रस लूट रहा था। इतने बड़े साम्राज्य का भार इस समय उसे विचलित नहीं कर रहा था। वह भूल गया था कि मैं प्रतापी सम्राट् हूं, मेरे मस्तक पर करोड़ों प्रजा का शासन- भारत है। वह एक आनन्दी मस्ती पर उतारू एक भौरे की भांति नूरजहां- रूपी कमल पर चुपचाप पड़ा था। भांडों की नकल जारी थी। उसे देख कभी- कभी वह उनकी चातुरी पर हंस पड़ता था। नूरजहां के साथ छेड़खानी भी जारी थी। भांडों की एक चुटकीली नकल पर उसने हंसकर कहा- “एक प्याला और दो, नूर।”

“बस, अब नहीं, नौ प्याले हो चुके हैं।”

“फिर भी और दो अपने इन हाथों से!”

“हरगिज नहीं, जहांपनाह, हरगिज नहीं।”

“खुदा की कसम, एक प्याला और शराब पीऊंगा।”

“मैं अब आपको एक कतरा भी शराब नहीं दूंगी।”

“मैं हुक्म देता हूँ।”

“मैं जहांगीर हूँ, शहंशाह अकबर का बेटा।”

“मैं नूरजहां हूँ, शहंशाह जहांगीर की मलिका।”

“आह, दे दो। इतना मत सताओ, खुदा के लिए एक प्याला।”

“यह नहीं हो सकता। आप वायदा कर चुके हैं कि दिन- रात मैं नौ प्यालों से ज्यादा आप न पियेंगे। नौवां प्याला आप पी चुके हैं।”

जहांगीर को गुस्सा आ गया। उसने तैश में आकर आंखें तरेरकर नूरजहां की ओर देखा। नूरजहां संगमरमर की मूर्ति- सी स्थिर बैठी रही, सुराही और प्याला उसके पास ही हाथी दांत की चौकी पर रखे थे।

जहांगीर मसनद से उठा, जैसे सांप फन उठाता है। उसने बगल में धरे रेशमी तकिये की ओर हाथ बढ़ाया।

नूरजहां ने बादशाह को मसनद पर धकेल दिया। उसने दृढ़ स्वर में कहा-
“जहांपनाह क्या मेरे साथ जोरोजुल्म करने पर आमादा हैं?”

“हट जाओ नूर, खून हो जाएगा, मुझे मत रोको!”

“तब खून कीजिए, मेरे जीते- जी आप नहीं पी सकते।”

“खुदा की कसम हट जाओ।”

“चाहे जान चली जाए, हरगिज नहीं।”

दोनों आसाधारण व्यक्ति गुंथ गए, हाथापाई होने लगी। नूरजहां में काफी ताकत थी। उसने जहांगीर को पटक दिया, परन्तु वह चीते की भांति फुर्ती से नूरजहां को पलटकर शराब की सुराही की ओर बढ़ा।

बाहर खवास- बांदी, ख्वाजा- सरा और भांड सब सन्नाटे में आ गए। क्या करना चाहिए, यह समझ में नहीं आया। बादशाह- बेगम की कुशली दुनिया की निराली बात थी। एकाएक भांडों ने आपस में गुत्थमगुत्था शुरू कर दिया। सब एक- दूसरे से जुट गए लगे धौलधप्पा करने, चिल्लाने, एक- दूसरे को पटकने।

बाहर शोर सुनकर बादशाह-बेगम लड़ना भूल गए। जहांगीर चिक उठाकर बाहर आया, भांडों से तूफानी- बदतमीजी का कारण पूछा। उसकी आंखें लाल अंगारा हो रही थीं। और हाथ तलवार की मूठ पर था। नूरजहां भी बाहर निकल आई थी, वह भी भांडों की उस बेअदबी से

सिंहनी की तरह क्रुद्ध थी। भांडों ने बादशाह को गुरसे में देखा तो कदमों में लेट गए। उन्होंने दस्तबस्ता अर्ज की- “हुजूर, जहांपनाह और मलिका मुअज्जमा की लड़ाई रोकने की यही तरीक़ीब समझ आई। गुलामों से इसलिए गुस्ताखी हुई।”

यह सुनकर नूरजहां को हंसी आ गई। जहांगीर भी हंस दिया। भांडों को इनाम देकर विदा किया गया। नूरजहां महलों में चली गई।

नूरजहां ने बादशाह से मिलना- बोलना बन्द कर दिया। उसकी नाराजगी की चर्चा तमाम महलों में फैल गई। बादशाह ने बहुत- सी मिन्नतें कीं, पुर्जे भेजे, तोहफे नजर किए, वे सब उसने वापस कर दिए। हर तरह खुशमद की गई, परन्तु नूरजहां का दिल नहीं पसीजा। बादशाह ने दरबार के बड़े- बड़े मशीरों से सलाह की, परन्तु निष्फला। जहांगीर एक हृदयवान् पुरुषरत्न, नूरजहां के प्रेम का दीवाना था। उसे उसके बिना मुगल साम्राज्य फीका दीखने लगा। उसकी आत्मा शून्य का अनुभव करने लगी, रात- दिन वैन न था।

एक मुंहलगी बांदी नूरजहां की कृपापात्री थी। उससे बादशाह ने कहा- “अरी, तू मलिका को राजी कर, वे चाहती क्या हैं?”

बांदी ने भौहें मटकाकर कहा- “पनाहे आलम, मलिका बहुत नाराज हैं। वह कहती हैं कि जहांपनाह उनके कदमों में सिर रखकर माफी मांगें, तो माफ कर सकती हैं।”

“वाह यह कैसे हो सकता है। मैं तमाम हिन्दुस्तान का बादशाह जहांगीर हूँ!”

“यही तो मुश्किल है, जहांपना! मलिका कहती हैं कि मैं दीन-दुनिया के मालिक शहंशाह जहांगीर की मलिका हूँ।”

“अरी बदबख्त, तू कुछ रास्ता निकाल।”

“मेरी बताइए तरीक़ीब हुजूर काम में लाएंगे?”

“मगर तूने कहा कि मैं मलिका के पैरों पर सिर रगड़ू?”

“लाहौल-विल-कुव्वत! जहांपनाह, बांदी कुछ और ही तदबीर करेगी, जिससे सांप मरे न लाठी टूटे।”

“जाकर।” बांदी हंसती हुई कमर लचकाती, बलखाती, चली गई। गुलाबी दिन थे। बांदी ने बादशाह के पास आकर कहा- “चलिए जहांपनाह, आज मौका है।”

बादशाह जल्दी-जल्दी बांदी के पीछे चल दिया। नूरजहां नजरबाग में सुनहरी धूप में खड़ी गुलाब के फूलों को प्यार कर रही थी। उसे मालूम न हुआ कि जहांगीर उसके पीछे आकर खड़ा हो गया है। बांदी ने जहांगीर को चुपचाप ऐसे ढंग से खड़ा कर दिया कि उसके सिर की परछाई मलिका के कदमों में आ लगी। इसके बाद उसने आगे बढ़कर कोर्निश करके मलिका से कहा—“हुजुरे आला! जरा इस तरफ मुलाहिजा फर्माएं। देखिए तो, शहंशाह का सिर हुजूर के

कदमों में हैं।

नूर ने पलटकर देखा, तो बादशाह के सिर की ओर देखा और जहांगीर ने दौड़कर उसे गाड़ आलिंगन में बद्ध कर लिया। दो तड़पते हृदय फिर एक हो गए।

नूरजहां ने पति से मेल हो जाने की खुशी में हुक्म दिया कि आठ दिन रंगमहल में जलसे हों। रोशनी की जाए, नाच- रंग हों। इन आठ दिनों में बादशाह को जितनी वे चाहें, शराब पीने की छूट भी दे दी गई। बादशाह बाग- बाग हो गए। लाखों लुटाये गए।

सेनापति महावतखां ने, जो राजपूत से मुसलमान बना था और बड़ा वीर था, जहांगीर की ऐयाशी से क्रुद्ध होकर एक बार अवसर पाकर बादशाह को कैद कर लिया और कुछ अरसे तक जेल में रखा। उसे समझाया कि इस भांति शराब और औरत के फेर में पड़ना बादशाहों के लिए उचित नहीं, फिर सम्मानपूर्वक छोड़ दिया।

वह बहुधा वेश बदलकर शहर में घूमा करता था। एक बार वेश बदलकर घूमता- फिरता एक शराबखाने में जा घुसा। वहां एक जुलाहा बैठा मजे से ठर्रा जमा रहा था। जहांगीर उसके पास बैठ गप्पें लड़ाने लगा, दोनों दोस्त हो गए और प्याले पर प्याले उड़ाने लगे। चलती बार बादशाह ने उसका नाम- पता पूछा।

“सिकन्दर जुलाहे के नाम से प्रसिद्ध हूं। तुम कल मेरे मकान पर आना, ऐसा खाना खिलाऊं और शराब पिलाऊं कि खुश हो जाओ।”

इस पर बादशाह ने अवश्य आने का वायदा किया। दोनों दोस्त हंसते हुए हाथ मिलाकर विदा हुए। दूसरे दिन जब जुलाहा हथौड़ी से कीलें गाड़कर ताना बुनने की तैयारी कर रहा था कि बादशाह की सवारी आती दिखाई दी। बादशाह हाथी पर था। सेवकगण दायें- बायें चल रहे थे। जब उसके घर के निकट सवारी पहुंची तब गुलाम ने आगे बढ़कर पूछा- “सिकन्दर जुलाहे का घर कौन- सा है? बादशाह उसके घर दावत खाने आ रहे हैं।”

इस पर जुलाहे की आंखें खुलीं और रात के दोस्त का भेद पहचान गया। वह इतना घबराया कि जवाब ही न दे सका। इतने में सवारी आ गई। जुलाहे ने बिना आंख उठाये पुकारकर कहा—“जो शराबी की बात पर एतबार करे, वह इस हथौड़ी से पीटे जान के लायक है।”

जहांगीर यह सुनकर ठहाका मारकर हंस दिया और इतना रुपया उसे दिया कि वह अमीर बन गया।

7

जहांगीर बहुधा हाथी पर सवार होकर सैर- सपाटे को निकल जाता था। इस सैर- सपाटे में सब सरंजाम हाथियों पर साथ ही रहता था। किसी पर शराब की बोतलें और जमरुद की प्यालियां,

किसी पर अर्क वेद- मुश्क, केवड़ा, गुलाब, किसी पर मेवों की डालियां, किसी पर ताजे फलों के भरे हुए झब्बे चलते थे। कई हाथियों पर भांति- भांति की रोटियां पकती चलती थीं। खमीरी, मेवे वाली जाफरानी, तन्दूरी। कुछ हाथियों पर गोश्त पकता चलता था।

वह खाता- पिता, प्यालियां चढ़ाता, बाजार में झूमता हुआ निकलता था। सब सरदार, दरबारी, अमीर- उमरा हाथियों पर, घोड़ों पर, साथ रहते थे। मौज में आकर वह जिसे कोई खाने की चीज इनायत करता, तो उसे अदब से लेकर खानी पड़ती थी। कभी- कभी घुड़सवार अमीरों की इन खाने- पीने में बड़ी भद होती थी। घोड़े की पीठ पर बैठकर तश्तरी में कोई शोरबेदार चीज चलते- चलते खाना एक आफत की बात समझनी चाहिए परन्तु जहांगीर को इन बातों में बड़ा मजा आता था। वह जब किसी अमीर को पसोपेश में देखता या शोरबा उसके कपड़ों पर छलककर गिर जाता तो खिलखिलाकर हंस उठता। इस पर उस अमीर को अदब से बादशाह को कोर्निश करनी पड़ती फिर बादशाह उसे एक भारी खिलअत इनाम देता था। कभी- कभी वह किसी अमीर के मुंह में किसी गरमागरम चीज का एक बड़ा- सा लुकमा ठूस देता। बेचारे अमीर का बुरा हाल हो जाता था, उसकी आंखों में आंसू आ जाते थे, मुंह में जलता हुआ लुकमा रहता और उसे घोड़े या चलते हाथी की पीठ पर आधा खड़ा होकर बादशाह को कोर्निश करनी पड़ती थी। यह सब जहांगीर के मनोरंजन थे।

बादशाह अपने जीवन के अन्तिम दिनों में अंग्रेजों से क्रूरुद्ध हो गया। था। उन्होंने सूरत बन्दर में मक्का के कुछ यात्रियों के साथ अनुचित व्यवहार किया था। बादशाह ने पहले तो बहुत कुछ नरमी से काम लिया पर जब काम न चला तो गिरफ्तारी का हुक्म दिया, जिसे उन्होंने मानने से इनकार कर दिया। इस पर क्रुद्ध होकर उसने उनके कत्लेआम का हुक्म दे दिया। बहुत-से अंग्रेज काट डाले गए। बंगाल में उसने पुर्तगीजों को कोठियां बनाने की आज्ञा दे दी थी।

वह ग्रीष्म में कश्मीर चला जाता और सर्दियों में लाहौर लौट आता था। एक बार वह जब कश्मीर से लौट रहा था तो मार्ग ही में दमे से उसका शरीरान्त हो गया।

जहांगीर अपनी पहली सन्तान शाहजादा खुसरू के प्रति कटु था। खुसरू ने अपने दादा अकबर के समय में ही अपने पिता सलीम की जड़ उखाड़कर स्वयं तख्त के लिए प्रयत्न किया था। इसी से अकबर और सलीम दोनों का ही प्रेम वह खो बैठा। अतः जहांगीर ने अपनी तीसरी सन्तान शाहजादा खुर्रम को तख्त पर बैठाने का निश्चय किया। इससे खुसरू खुर्रम से भी विद्रोह हो गया। अकबर के समय में खुसरू के समर्थकों की संख्या अधिक थी, परन्तु सलीम के तख्त पर बैठते ही यह संख्या घटने लगी। लोगों की केवल सहानुभूति ही उसके प्रति रह गई। सलीम ने गद्दी पर बैठते ही खुसरू को दण्ड दिया। उसे एक हाथी पर बैठाकर बाजार में घुमाया गया। हाथी के आगे एक चोबदार व्यंगपूर्वक सलाम झुकाता हुआ चला। सारे शहर में घुमाने के बाद उसे कैद में डाल दिया। कैद में भी लोहे की जंजीर से उसके हाथ बांध दिये गए और होंठों को सी दिया गया।

खुर्रम एक निपुण योद्धा और साहसी युवक था। उसने कई युद्ध अपने बुद्धि कौशल से जय किए। जहांगीर ने मेवाड़ को जीतने के अनेक प्रयत्न किए, परन्तु उसे सफलता नहीं मिली।

अन्त में उसने खुर्रम को भेजा। उन दिनों मेवाड़ की गद्दी पर महाराणा प्रताप के पुत्र राणा अमरसिंह थे। उसके साथ खुर्रम ने युद्ध कम किया, रणनीति अधिक बरती, जिससे झुककर राणा ने खुर्रम से सुलह कर ली और अपने पुत्र करणसिंह को शाही दरबार में भेज दिया। जहांगीर ने भी राणा की प्रतिष्ठा का ध्यान कर उन्हें शाही दरबार में हाजिरी से मुक्त रहने दिया। इसके बाद खुर्रम की कमान ने दक्षिण में सेना भेजी। अहमदनगर तथा अन्य दृढ़ किले जय कर लिए। दक्षिण की इस विजय से खुर्रम की कीर्ति फैल गई। जहांगीर ने खुश होकर उसे शाहजहां की उपाधि दी तथा तीस हजारीजात और तीस हजार सवारों बड़ा का ओहदा प्रदान किया। अन्य भेंटें भी दीं। नूरजहां ने अपने भाई आसफखां की पुत्री के साथ खुर्रम का ब्याह कर दिया। इससे नूरजहां और सेनापति आसफखां का समर्थन उसे प्राप्त हुआ। अब खुर्रम भाग्य की राह पर दौड़ रहा था।

जहांगीर को कश्मीर की सुरम्य घाटियों में सूचना मिली कि दक्षिण में मलिक अम्बर ने सिर उठाया है। उसने खुर्रम को उस पर चढ़ाई करने की आज्ञा भेजी। युद्ध की आज्ञा पाकर खुर्रम के मन में यह भाव उत्पन्न हुआ कि वह क्यों व्यर्थ पिता के लिए बार-बार युद्धों में अपने प्राणों को संकट में डाले। वह कुछ दिन बहाने बनाता रहा। अन्त में पिता से स्पष्ट कहला भेजा कि वह इस युद्ध में तभी जाएगा, जब उसी को तख्त का उत्तराधिकारी बनाने का वचन दिया जाएगा, जहांगीर ने वचन दे दिया और नूरजहां के कहने से कैदी शाहजादे खुसरू को भी उसी के पास भेज दिया और खुसरू के सिले हुए होंठ खोल दिए गए। अब आश्वस्त होकर खुर्रम खुसरू को बन्दी बना अपने साथ दक्षिण ले गया। वहां उसने खुसरू के साथ दुर्व्यवहार किया। दक्षिण की जलवायु ने भी उसे पीड़ित किया। अन्त में थोड़े ही दिनों में दक्षिण में ही खुसरू की मृत्यु हो गई। उधर मलिक अम्बर ने भी युद्ध में हारकर क्षमा मांग ली तथा बहुत-सा हर्जाना बादशाह को दिया। खुसरू के कांटे को निकालकर और जयश्री प्राप्त करके खुर्रम राजधानी लौटा।

खुर्रम उद्धत स्वभाव और शान्त प्रकृति का युवक था। नूरजहां को खुसरू और खुर्रम दोनों ही अप्रिय थे। वह जहांगीर के बाद ऐसे उत्तराधिकारी की इच्छा रखती थी, जो उसी की अधीनता में शासन करे। खुसरू से यह आशा पूरी होती न देख उसने उसके नाश और खुर्रम के उदय की राह बनाई, परन्तु मलिक अम्बर को पराजित करके लौटने पर खुर्रम में भी उसने परिवर्तन पाया। खुर्रम उसकी अधीनता स्वीकार नहीं कर सकता था। अतः उसने शाहजादे शहरयार को शेर अफगन से उत्पन्न हुई अपनी पुत्री ब्याह दी और उसी को गद्दी पर बैठाने का स्वप्न देखने लगी।

परन्तु भाग्य खुर्रम के साथ था। कुछ वर्षों के बाद शाहजादा परवेज अफीम के व्यसन से बुरहानपुर में मर गया। शहरयार कश्मीर में बीमार हो गया और लाहौर की राह में जहांगीर की मृत्यु हो गई। बादशाह की मृत्यु होने पर खुर्रम और शहरयार तख्त की ओर बढ़े।

खुर्रम उन दिनों दक्षिण में बीजापुर के राजा के यहां आश्रित था। नूरजहां ने उसकी अनुपस्थिति गनीमत समझकर शहरयार को इशारा किया और उसने लाहौर पहुंचकर स्वयं को बादशाह घोषित कर दिया और वहां के खजाने पर अधिकार कर लिया। उसने बीजापुर के राजा को कहला भेजा कि खुर्रम को नजरबन्द कर लो, यदि हुवम की पाबन्दी में ठील हुई तो बीजापुर की ईंट से ईंट

बजा दी जाएगी। बीजापुर के राजा ने डरकर खुर्रम पर पड़े बैठा दिया।

शहरदार का पक्ष केवल नूरजहां ने लिया, परन्तु खुर्रम का पक्ष वजीर आसफखां, महावतखां तथा अनेक दरबारियों ने लिया। आसफखां ने खुर्रम को चिट्ठी भेजी कि किसी तरह भागकर बुरहानपुर के हाकिम से मिल जाओ और उसे लेकर आगरा पहुंच जाओ तो ताज तुम्हारा है। साथ ही उसने आगरा के तख्त को खाली छोड़ना राजनीति के विपरीत समझकर खुसरू के पुत्र दावरबख्श को खुर्रम के आने तक अस्थायी रूप से तख्त पर बैठा दिया। इसके बाद वह लाहौर पहुंचा और नूरजहां को नजरबन्द करके शहरदार को परास्त किया। शहरदार को बन्दी बनाकर अन्धा कर दिया गया। उधर खुर्रम बीजापुर से युक्ति से भाग निकला। आगरा पहुंचने पर आसफखां बारह हजार सवार लेकर उससे जा मिला। खुर्रम ने धूमधाम से नगर में प्रवेश किया। दावरबख्श को तख्त से हटाकर बन्दी बना लिया गया, बाद में पर्शिया के शाह को सौंप दिया गया। शहरदार का सिर काट लिया गया।

इस प्रकार खुर्रम 'अबुल-मुजफ्फर-शिहाब उद्दीन- मुकम्मद साहिबे किरान-द्वितीय-शाहेजहां-बादशाह-गाजी' के खिताब से सुखरू हो शाहजहां के नाम से तख्त पर बैठा। उसके शासनकाल में मुगल साम्राज्य का वैभव मध्याह्न के सूर्य की भांति शिखर पर पहुंच गया।

8

शाहजहां कामुक पुरुष था। मुमताज की मृत्यु के बाद उसे अन्य स्त्रियों से मिलने में कोई बाधा नहीं रही। वह अपने महल की ही स्त्रियों से संतुष्ट नहीं था, बल्कि उमरावों की स्त्रियों पर भी हाथ साफ करता था। बादशाह के हरम में दो हजार से ऊपर स्त्रियां थीं। उस हरम के वैभव-विलास और ऐशो-आराम की कहानियां अनेक रूप धारण करके देश-देशांतर में विख्यात हो गई थीं। सर्वत्र मुगल एश्वर्य की धूम थी। बेगममहल का शाही खर्चा सालाना एक करोड़ रुपये था। इसमें वे खर्च

सम्मिलित नहीं थे, जो समय-समय पर बादशाह और शाहजादियां प्रसन्न होकर दान, खिलअल या भेंट के रूप में अपने कृपापात्रों को देते थे। इन और सुगन्धित द्रव्यों की सदैव ही महल में नदी बहती थी। पानी में मोतियों का चूरा काम में लाया जाता था। एक-एक बेगम हजारों रुपये रोज का पान का खर्च रखती थी। हरम चारों ओर फसीलों से घिरा था। फसील के बाहर हिजड़े और राजपूत सामन्त, राजा लोग बारी-बारी से पहरा देते थे। दरवाजों पर दरबान रहते थे।

उन शाही महलों के बीच बादशाह का एक खास कमरा 'खासगाह' था। यह कमरा चौबीस हाथ लम्बा और आठ हाथ चौड़ा था। इसके चारों ओर बड़े-बड़े कढ़ेआम शीशे लगे थे, जो बड़े खर्च से विलायत से मंगवाए गए थे। इस कमरे की सजावट में जो सोना खर्च हुआ था, उसकी लागत डेढ़ करोड़ थी। इसके सिवा जो हीरे-मोती इसमें लगे थे, उनकी कीमत का अंदाजा लगाना बिल्कुल असम्भव था। कमरे की छत में दो विशाल शीशों के बीच सोने की धारियां पड़ी थीं। जिनमें जवाहरात जड़े थे। शीशों के किनारों पर बहुमूल्य मोतियों के गुच्छे लटकाए गए थे। दीवारें संगेअसवद की थीं। अवर्ण्य शोभा उस कमरे की थी। तमाम शीशे जो उसमें लगाए गए थे, इस ढंग

पर थे कि जब बादशाह अपनी प्रेमिकाओं के साथ विहार करे तो उस दृश्य को अपनी आंखों से देख ले। शीशे की गोशों में मोतियों के गुच्छे लटकते थे। उस कमरे में हर किसी का आना निषिद्ध था। खास- खास ख्वाजासरा ही उसमें आ पाते थे।

कमरे के बाहर दौं सौ ततारी बांदियां नंगी तलवार हाथ में और तीर कमान पीठ पर कसे, रात- दिन पहरा देती थीं। ये बड़ी फुर्तीली और बहादुर होती थीं तथा शराब नहीं पी सकती थीं। इन सबका सरदार एक कद्दावर ख्वाजासरा था, जिसका नाम अब्बास था। वही उस कमरे के भीतरी भेदों का जानकार था। कमरे के चारों कोनों पर चार कोठरियां थीं, जिनमें चारप्रधान बांदियां रहती थीं। वे नाम की बांदी थीं। तनख्वाह और इनाम- इकराम में उन्हें बेअन्दाज धन मिलता था। उनके नाम चारों दिशाओं पर नियत थे और उसके जिम्मे बादशाह के शयानागार का भीतरी प्रबन्ध था। वे बड़ी सुन्दरी थीं और ठाठ- बाट से रहती थीं। इनमें जो सरदार थी, उसका नाम खुर्शीद वानू था। वह बड़ी चपल, नौजवान और बादशाह की मुंहलगी थी।

शाहजहां की प्रेमी औरतों में सबसे प्रमुख स्त्री जफरअलीखां की पत्नी थी। उसके प्रेम में अन्धा होकर बादशाह जफरअलीखां की जान लेने पर तुला हुआ था, पर स्त्री ने बादशाह की अनुनय- विनय करके उसे रोक रखा था। बादशाह की दूसरी प्रमुख प्रेमिका अमीर खलीलुल्लाखां की पत्नी थी। अमीर खलीलुल्लाखां एक प्रभावशाली सिपहसालार था, बादशाह की तीसरी प्रमुख प्रेमिका उसके साले शाइस्तखां की पत्नी थीं। इन सभी उमरावों की हवेली फैज बाजार और कूचा चेलान में थीं। शाइस्तखां की विशाल हवेली फैज बाजार में थी। वह एक चतुर और उच्चशय अमीर था। उसकी स्त्री एक ईरानी अमीर की इकलौती बेटी थी। बड़ी सच्चरित्र और पवित्रत्मा थी। जैसी अद्वितीय सुन्दरी थी, वैसी ही अस्मत्वाली थी। वह नई उम्र की बड़ी नाजुकमिजाज भावुक युवती थी।

शाहजहां की उस पर एक अमीर के यहां दावत में दृष्टि पड़ी। रिश्तेदार होने के कारण वह बादशाह के सामने आने को विवश की गई। बूढ़े कामुक बादशाह ने अपनी बड़ी बेटी जहांआरा के द्वारा उसे एक जियाफत देने रंगमहल में बुला लिया। बेगम जफरअली उसे फुसलाकर बादशाह के उस रहस्यपूर्ण खासगाह में ले गई, जिसमें अनगिनत सतियों की लाज लूटी जा चुकी थी। भोली- भाली लड़की दांव में फंस गई और जब वहां उसने स्वयं को बादशाह के चंगुल में फंसकर असहायावस्था में पाया तो छूटने को बहुत हाथ- पैर मारे, बड़ी छटपटाई, पर अपने को बचा न सकी। शाहजहां ने उसका सतीत्व भंग कर दिया, फिर वह बहुत- सी भेटें और नजराने देकर वापस भेज दी गई।

परन्तु उस मुगल राज्य में जिस प्रकार अन्य अमीरों की औरतें होती थीं, वह वैसी न थी। उसने घर जाकर सब हाल अपने पति से कह दिया और खाना- पीना तथा वस्त्र बदलना भी छोड़ दिया। उस घटना को पन्द्रह दिन बीत चुके थे, पर वह कुचली हुई फूलमाला की भांति बिस्तर पर पड़ी रहती थी। घर- भर में उदासी छायी हुई थी। प्रातःकाल का समय था, उसके नेत्रों में मरने का दृढ़ संकल्प था। उसके पलंग के पास उसका प्यारा पति बैठा था। दोनों खूब रो चुके थे। अब जिस कठोर संकल्प करने का भाव उस सती के मुख पर था, उसी प्रकार से बदला लेने का कठोर भाव उस वीर युवक अमीर के मुख पर भी था।

उसने कोमलता से पत्नी का हाथ अपने हाथ में थामकर कंपित स्वर में कहा- “प्यारी, अपना यह खौफनाक इरादा छोड़ दो, जीती रहो। मेरी नजर में तुम पाक- साफ हो। मैं उस जालिम बादशाह से ऐसा बदला लूंगा कि दुनिया देखेगी।” बात पूरी करते- करते उसकी आंखों से आग निकलने लगी और बदन कांपने लगा।

बेगम ने पति का हाथ दोनों हाथों में लेकर अपनी छाती पर रखा। कुछ देर चुपचाप आंखें बन्द किए पड़ी रही, फिर उसने क्षीण स्वर में कहा- ‘मेरे प्यारे शौहर, इतने ही दिनों में मैंने तुमसे वह प्यार पाया कि जिन्दगी का सब लुप्त उठा लिया। अब मेरी जिन्दगी में किरकिरी मिल गई। मैं नापाक कर दी गई। अब मैं तुम्हारे लायक न रही। प्यारे, मेरे जिस जिस्म को नापाक कुत्ते ने छुआ है, मैं उसमें न रहूंगी और ताक्यामत तुम्हारा इन्तजार करूंगी।’

“मगर प्यारी बेगम, मैं तुम्हारे बिना कैसे दुनिया में जिन्दा रहूंगा? मेरी जिन्दगी तुम हो, मेरी आंखों में सिर्फ तुम्हारी रेशमी है। तुम्हारे बिना कोई नहीं है।”

युवती की आंखों से आंसू ढलकने लगे। उसने पति के हाथों को प्यार से चूमकर कहा- “रहना पड़ेगा, मेरे मालिक! मैं जिन्दा नहीं रह सकती, मैं आबोदाना नहीं ले सकती। आह, उसके जालिम ने न मालूम मुझ जैसी कितनी बेबस- कमजोर औरतों को बर्बाद किया होगा। मुमकिन है, वे सब अस्मत्फरोश न हों, लेकिन इस मुगल सल्तनत में एक भी ऐसा बहादुर आदमी नहीं, जो हम बेबसों को उस जालिम भेड़िये से बचाये। मेरे प्यारे मालिक, तुम वायदा करो कि बदला लोगे।”

“मैं वायदा करता हूं जब तक मैं तुम्हारी बेहुर्मती का बदला न ले लूंगा चैन से न बैठूंगा। चाहे जान भी चली जाए।”

“तो मैं खुशी से मर सकती हूं। इसका मुझे बड़ा फायदा है।”

“मगर मेरी प्यारी बेगम, तुम अपने मरने के इरादे को बदल दो खुदा के लिए मुझ पर रहम करो, मैं तुम्हें उसी तरह आंखों की पुतली बनाकर रखूंगा।”

उसने विह्वल होकर मुमूर्षु पत्नी के अनगिनत चुम्बन ले डाले, फिर उसकी छाती पर सिर रखकर फफक- फफक रोने लगा।

बेगम भी रो रही थी। कुछ देर रो लेने पर जब जी हल्का हो गया तो शइस्तखां ने कहा — “तो प्यारी, कह दो कि हम लोग जीयेंगे।”

“नहीं प्यारे, हमारी जिन्दगी में कीड़ा लग गया है। अब हम उस तरह नहीं जी सकते। औरत की जिन्दगी में उसकी अस्मत् है, वह गई तो जिन्दगी भी गई। मेरे प्यारे शौहर, मुझे जाना होगा, मुझे मरना, होगा। मगर ओफ्, यह कभी न सोचा था कि इतनी जल्दी। ओफ, ओफ!” वह बेहोश होकर लुढ़क गई।

शाइस्तखां ने घबराकर जफरअलीखां को बुला भेजा। जफरअलीखां को जब यह ज्ञात

हुआ कि बेगम शाइस्तखां ने बादशाह द्वारा सतीत्व भंग होने के कारण आत्मघात करने की ठानी है और उसका सतीत्व भंग करने में उसकी पत्नी का हाथ है, तो वह अत्यन्त क्रोध और क्षोभ में भरकर घर पहुंचा और अपनी पत्नी को इस पतन, विश्वासघात और कुटनी कार्य के लिए बहुत धिक्कारा। बेगम जफरअलीखां मूढ़ और हतप्रभ हो उठी और बदहवास के पास पहुंची।

दरबार से लौटकर शाहजहां सीधे अपने खासगाह में आकर एक निहायत मुलायम गद्देदार कोच पर मसनद के सहारे लुढ़का हुआ था। इस समय उसका चित्त प्रसन्न था और आंखें चमक रही थीं।

अब्बास ने उसके कपड़े बदले और आदाब झुकाकर दस्तबस्ता अर्ज की- “खुदाबन्द, बेगम जफरअलीखां बड़ी देर से हुजूर की कदमबोसी के लिए बैठी हैं।”

बादशाह ने मुस्कराकर कहा- “खुर्शीद को भेज दें और एक गिलास शीराजी भी।”

अब्बास अदब से पीछे हटा और कुछ देर में खुर्शीद धीरे से कमरे में आयी। उसके पीछे दो बांदियां और थीं। एक के हाथ में शीराजी का गिलास और दूसरी के हाथ में जड़ाऊ पानदान था। उसने गिलास बादशाह के सामने पेश किया।

शराब पीते- पीते बादशाह ने कहा—“माजरा क्या है बानू, आज बेवक्त जफरअली क्यों आयी हैं?”

“हुजूर वह बहुत ही बदहवास हैं। मैंने इतना समझाया है, मगर रोती ही जा रही हैं।”

बादशाह की भ्रूकुटि में बल पड़ गए। उसने कहा- “उन्हें भेज दें और ख्याल रखें कि भीतर कोई आने न पाए।”

आदाब बजाकर खुर्शीद चली गई। कुछ ही देर में बेगम जफरअली ने आंधी की भांति कमरे में प्रवेश किया। अदब- कायदे का बिना विचार किए ही उसने बादशाह के सामने जाकर कहा- “हुजूर, मैं बर्बाद हो गई, मुझे बचाइए, मेरी इज्जत बचाइए, वरना मेरी जान चली जाएगी।”

बादशाह खड़ा हो गया। उसने बेगम का हाथ अपने हाथों में लेकर तसल्ली के स्वर में कहा- “प्यारी बेगम, हुआ क्या है, जो इस कदर परेशान हो? खुलासा हालात तो कहो।”

“हुजूर, मेरे खाविन्द को सब- कुछ मालूम हो गया है और वह या तो मुझे मार डालेंगे या तलाक दे देंगे।”

“उसकी इतनी मजाल!” गुरसे से बाहर होकर बादशाह ने जवाब दिया, “मैं अभी उसे सांप से डसवाने का हुक्म देता हूँ।”

बेगम ने लपककर बादशाह के हाथ चूमते हुए कहा—“नहीं- नहीं जहांपनाह, रहम कीजिए, मुझे बेवा न बनाइए। वह ऐसा खाविन्द है, जो किसी भी औरत के फस्र का बाइस हो सकता है। वह बहुत नेक, दिलेर मर्द है। मुझे जान से ज्यादा प्यार करता है, मैं बदबख्त- - -”

बेगम बादशाह आसमान के ऊपर गिरकर फफक- फफककर रोने लगी।

बादशाह को अभी भी गुस्सा आ रहा था। उसने कहा—“मगर वह बदबख्त मेरे रास्ते का रोड़ा नहीं हो सकता उसे मैंने जमीन से उठाकर आसमान तक पहुंचा दिया।”

बेगम चुपचाप पड़ी रोती रही। वह बारीक धानी पोशाक पहने थी। उसमें से उसका स्वर्णिम शरीर छन- छनकर दीख रहा था। वह बाईस वर्ष की छरहरे बदन की अप्रतिम सुन्दरी स्त्री थी।

इस अत्यन्त दुःखित अवस्था में भी उसकी सुषमा और लावण्य के प्रभाव से बादशाह के मन में राग जाग उठा। उसने क्रोध त्यागकर धीरे से कहा—“हुआ क्या बेगम, मुख्तसर कहो। वल्लाह, रोना- धोना बन्द करो, इससे क्या होगा?”

बेगम ने आंसू पोंछे। हटकर एक तरफ बैठ गई। बादशाह को देखकर कहा—“उन्हें सब- कुछ मालूम हो गया।”

“तो यह तो उसके लिए बाइसे फ़य़ होना चाहिए।”

“वे ऐसे नहीं हैं, हुजूर।”

बादशाह की भौंहों पर फिर बल पड़ गया। उसने कहा—“तो बेगम, तुम्हें भी पछतावा हो रहा है?”

“जहांपनाह, इस लौंडी ने तो अपना सब- कुछ हुजूर को लुटा दिया। अब आप ऐसी बातें क्यों फर्माते हैं?”

“मैंने भी तुम्हारी खाविन्द को ऊंचा रुतबा दे दिया है।”

“मेरे हुजूर, गैरतमन्द लोग इस्मत को सबसे बड़ी चीज समझते हैं।”

“तो बेगम, शायद तुम्हें इस्मत का बहुत ख्याल है।”

“हुजूर, शाकी न हों, मेरी बातें पूरी सुन लें।”

“कहो।”

“शाइस्तखां की बीवी पागल हो गई है।”

यह सुनकर बादशाह एकदम घबरा गया, वह कहने लगा—“खुदा के वास्ते ऐसा न कहो!”

“वह हुजूर का नाम ले-लेकर बुरी-बुरी बातें कह रही है और शाइस्तखां ने मेरे खाविन्द को बुलाकर कुछ सलाह की है।”

“सलाह की है?” बादशाह ने तलवार की मूठ पर हाथ रखा।

“हुजूर, अजब नहीं कि शाइस्ताखां, हुजूर के दुश्मनों की कुछ बुराई करें। हुजूर खबरदार रहे।”

बादशाह का चेहरा भय से पीला पड़ गया। उसने कहा- ‘क्या उसका इरादा कुछ बद है?’

“मगर उसकी बीवी का क्या होगा? उसके साथ तो हुजूर ने बहुत ज्यादाती की है।”

“यह ज्यादाती तो उसके बेमिसाल हुरन की है, फिर भी मुझे अफसोस है, बानू पर मैं क्या करूँ, वह राजी ही नहीं होती थीं। मुझे मजबूरन जोरोजुल्म करना पड़ा, मैं यह बर्दाश्त नहीं कर सकता कि कोई औरत मेरे हुक्म में दरेग करे।”

“आह हुजूर, आप बड़े बेदर्द हैं।” बेगम ने आंखों में आंसू भरकर करुण स्वर में कहा। बादशाह का दिल पसीज गया, उसने कहा- “नहीं जानेमन, क्या तुमने कभी कोई शिकायत की बात देखी?”

“हुजूर, मैं कुबूल करती हूँ कि लौंडी पर हुजूर की खास मेहरबानी है।”

“खैर, तो यह कहो कि किस तरह उसका मुँह बन्द हो सकता है?”

“उसने आबदाना छोड़ दिया, जमीन में मुर्दे की तरह पड़ी है, उसका दिमाग फिर गया है। वह न रोती है, न चिल्लाती है। वह पागल हो गई है, हुजूर, उसके सामने जाते डर लगता है।”

“यह क्या कहती हो, प्यारी बेगम?”

“जहांपनाह, किसी औरत पर जितना जुल्म किया जा सकता था हो चुका वह बर्बाद हो गई, अफसोस!”

बेगम चुपचाप नीची गर्दन करके बैठ गई। बादशाह भी कुछ देर चुपचाप आंखें नीची किए बैठा रहा, फिर उसने व्याकुल स्वर में पूछा—“तुम कोई रास्ता बता सकती हो, प्यारी बेगम?”

“जहांपनाह, मुझे तो अपनी ही फिक्र है, उसने मेरे विषय में ऐसी बातें मुँह से निकाली हैं कि मेरा लोगों को मुँह दिखाना भी मुमकिन नहीं रहा। आह, मैंने क्यों इस बुरे काम में हुजूर की मदद की?”

“बीती बात को बिसार दो बेगम, अब सलाह दो, मैं क्या करूँ?”

“जहांपनाह, मेरी एक अर्ज है।”

“जल्द कहो, ताकि इसके बाद हम लोग फिर प्यार की बातें करें।”

बेगम ने उपेक्षा के भाव को छिपाकर विनय से कहा- “आप मेरे खाविन्द को पटना का हाकिम बनाकर भेज दें।”

बादशाह मुसकरा दिया। उसने कहा- “अच्छा बेगम, मैं आज ही उसे खाना होने का हुक्म दे दूंगा।”

“और हुजूर, शाइस्तखां से खूब चौकन्ने रहिए।”

“शाइस्तखां क्या करना चाहता है?”

बेगम के चेहरे पर भय के चिह्न उभर आए। उसने बादशाह के पास खिसककर कहा- “हुजूर वह छिपे- छिपे औरंगजेब से मिल गया है। वह उसे तख्त के लिए हुजूर, के खिलाफ भड़का रहा है।”

बादशाह क्रोध से कांपने लगा। उसने कहा- “तो मैं उसे कत्ल करा डालूंगा।”

“नहीं हुजूर, इससे तो दूसरे अमीर बदजन हो जाएंगे। उसकी औरत की बात बहुत फैल गई है। फिर वह हुजूर का रिश्तेदार भी है।”

“तब क्या तुम चाहती हो कि उसे भी तुम्हारे खाविन्द के साथ बंगाल या उड़ीसा भेज दूं, जिससे वे दोनों मिलकर मेरी तबाही के मनसूबों को अमल में ला सकें।”

“जी नहीं, उसे आंखों से दूर भेजना तो खतरनाक है।”

“तब क्या करूं?”

“हुजूर, उसे वजीरों में रखिए, ताकि उसकी हर एक बात पर नजर रहे और हमेशा उसी तरह चौकन्ना रहिए जैसे सांप से रहा जाता है।”

बादशाह ने बेगम को खींचकर अपनी छाती से लगा लिया और चूमकर कहा- “वल्लाह बेगम, तुम बड़ी, अवलमन्द औरत हो। इतमीनान रखो, मैं ऐसा ही करूंगा, मगर तुम बदनसीब बानू से मिलती रहो। उसे तसल्ली दो, उसे चुप करो।

बेगम ने बादशाह के बाहुपास से छूटते हुए कहा- ‘जो हुक्म, मैं अपने बस- भर कोशिश करूंगी।’

वह उसी तरह बिजली की भांति कमरे से बाहर निकल गई। बादशाह मसनद पर लुढ़ककर आंखें बन्द किए कुछ सोचने लगे।

बादशाह न्याय और राजकाज के मामलों में बड़ा चाक- चौबन्द था। एक बार एक कोतवाल ने, जिसका नाम मुहम्मद शहीद था, रिश्तत लेकर मुकदमों का गलत फैसला किया। बादशाह ने उसे अपने सम्मुख सांप से कटवाने की आज्ञा दी। जब सांप ने उसे डस लिया तो

बादशाह ने पूछा कि यह कितनी देर में मर जाएगा?

साणों के अफसर ने कहा—“एक घंटे में”

बादशाह तब तक बैठा रहा जब तक उसने दम न तोड़ दिया। इसके बाद दो दिन तक उसके शरीर को वहीं पड़े रहने की आज्ञा दी।

वह मस्त हाथियों से अपराधियों को कुचलवा दिया करता था, पर कोई-कोई ओहदेदार ऐसे उस्ताद होते थे कि बादशाह को चकमा दे ही देते थे। एक मुकदमे में एक काजी ने बीस हजार रुपये मुद्दई से और तीस हजार मुद्दालह से वसूल कर लिए। मुद्दालह झूठा था। काजी ने बादशाह के सम्मुख तीस हजार रुपये रखकर कहा- “हुजूर, यह आदमी मुझे रिश्तत देकर इन्साफ से हटाना चाहता है।” बादशाह ने काजी की पीठ ठोंकी और वह निहायत मजे से बीस हजार रुपये पचा गया।

एक बदमाश ने एक स्त्री को खूब तंग किया कि मुझसे शादी कर ले, पर वह राजी नहीं हुई। बदमाश ने एक बुढ़िया से सांठ-गांठ की, जो उसे नहलाती थी। और उसके शरीर के गुप्त चिह्न मालूम कर लिए। तब दावा कर दिया कि यह स्त्री मुझसे विवाह का वायदा करके वायदे से हटती है। स्त्री ने इनकार कर दिया, तो बदमाश ने कहा कि मैं इसके गुप्त अंगों के भेद जानता हूँ। जब परीक्षा से उसकी बात सच हुई, तो काजी ने हुक्म दिया कि यह झूठी है, इसे शादी करनी पड़ेगी। स्त्री ने मोहलत मांगी और समझ गई कि बुढ़िया ने मेरे गुप्त अंगों का भेद इसे बताया है। एक दिन वह दो मजबूत दासियों को संग लेकर बदमाश के घर जा पहुंची और कहा- “तू चोर है, मेरा कंगन उतार लाया है, ला।

उसके इनकार करने पर वह उसे जबर्दस्ती पकड़कर हाकिम के पास ले आई और अपना आरोप कह सुनाया। पुरुष ने कहा- “मैं इसे जानता भी नहीं।” तब उसने कहा- “उस दिन तुमने कहा था कि तुम मेरे साथ मुद्दत तक रहे हो, अब कहते हो कि जानता तक नहीं यह क्या बात है?” फिर वह बादशाह के पास गई और सब कारगुजारी कह सुनाई। बादशाह ने सुनकर बुढ़िया और बदमाश को कमर तक जमीन में गड़वाकर तीरों से छिदवा दिया।

बादशाह अपने बड़े अमीरों को भी ऐसी ही भयानक सजाएं दिया करता था। एक अमीर ने अपने नौकर की तनख्वाह कई महीने तक नहीं दी। उसने अवसर पाकर शिकार के समय बादशाह से शिकायत कर दी। बादशाह ने उसी समय अमीर को बुलाकर पूछा। उसने अपराध स्वीकार कर लिया तो बादशाह ने हुक्म दिया कि वह घोड़े से उतर जाये और नौकर सवार हो, अमीर उसके साथ- साथ पैदल चले। यही किया गया।

एक अमीर को दोहजारी मनसब प्राप्त था और पचास हजार रुपये प्रति मास की आय थी। उस पर बादशाह अत्यंत प्रसन्न था, यहां तक कि उसे एक पुर्तगीज औरत भी भेंट दी गई थी। उसकी शाही पान देने की नौकरी थी। शाही पान के लिए बादशाह का हुक्म था कि अन्य किसी को न दिया जाए, परन्तु वह गुप्त रूप से उमराओं को पान दे दिया करता था। एक दिन बादशाह ने उसे पान देते देख लिया। उस समय तो वो चुप रहा, परन्तु जब शाम को बाग में पहुंचा, तो उसे

बुलाकर हुक्म दिया- “इसे इतना पीटो की इसकी जान निकल जाए, क्योंकि यह शाही हुक्म की परवाह नहीं करता।” उसके मरने पर उसकी सब सम्पत्ति उसकी स्त्री को दे दी गई, यद्यपि कानून से उसका अधिकारी बादशाह होता था।

एक बार एक हिन्दू मुंशी की दासी को एक मुसलमान सिपाही ने जबरदस्ती छीन लिया। मुंशी ने बादशाह से अर्ज की। सिपाही ने काह- “दासी मेरी है।” दासी ने भी यही कहा। बादशाह ने हुक्म दिया कि दासी को महल में बुलाया जाय। रात को जब बादशाह लिखने बैठे, तो दासी से दवात में पानी डालने को कहा। उसने ठीक अन्दाज से पानी डाला, जिससे बादशाह को निश्चय हो गया कि यह अवश्य मुंशी की दासी है और उसे मुंशी को दिला दिया तथा सिपाही को दण्ड दिया।

एक बार किसी उच्च सूबेदार से कोई अपराध हो गया। बादशाह ने उसे फौरन अपने हुजूर में बुला भेजा। यह अमीर वास्तव में बहादुर, ईमानदार और मेहनती था, दरबारी चुगलखोरों ने सिर्फ उसकी चुगली खायी थी, इसी से बादशाह रुष्ट हो गया।

उसने बादशाह के हुजूर में आकर चौखट चूमी। बादशाह ने उसे देखते ही कहा- “तुम्हें हमने शाही खिदमत से बरतारफ किया और हम हुक्म देते हैं कि हमारे राज्य से बाहर निकल जाओ।”

“बहुत खूब।” यह कहकर वह अमीर धम्म से पालथी मारकर बादशाह के सामने बैठ गया।

बादशाह और अमीर लोग उसकी इस बेअदबी को चकित होकर देखते रहे। मुगल बादशाहों के सम्मुख बैठने का साहस शाहजादों के सिवा और किसी को भी नहीं हो सकता था।

कुछ देर बाद अमीर ने दस्तबस्ता अर्ज की- “जहांपनाह ने इस गुलाम को बड़ी इज्जत बख्शी, मुझे न तो अपना नौकर रहने दिया न रियाया। अब मैं हुजूर के दरबारी कायदों का पाबन्द नहीं, अब मैं कम- से- कम जहांपनाह के रूबरू बैठ तो सकता हूँ।”

शाहजहां अमीर की हिम्मत और दृढ़ता को देखकर दंग रह गया। उसने मुसकराकर कहा- “मैं तुम्हें हरगिज ऐसी गुस्ताखी नहीं करने दूंगा जाओ, उड़ीसा के राजा पर जो फौज जा रही है, उसकी कमान मैं तुम्हें देता हूँ।”

अमीर फौरन उठ खड़ा हुआ और झुककर बादशाह को कोर्निश की। इसके बाद उसने बादशाह को कैफियत देकर अपनी निर्दोषिता भी प्रमाणित कर दी।

एक बार शाह गोलकुंडा का एक मंत्री दरबार में हाजिर था, बादशाह ने उससे मजाक किया और अपने पीछे खड़े खास बर्दार की ओर इशारा करके पूछा, “क्या तुम्हारे आका का कद इस आदमी के बराबर है?”

उसने कहा, “जहांपनाह, मेरा आका कद में हुजूर से चार अंगुल ऊंचा है।”

बादशाह बहुत खुश हुआ और दरबार में उसकी स्वामिभक्ति की बहुत तारीफ की तथा शाह गोलकुंडा पर तीन साल का बकाया कर, जो नौ लाख रुपये के लगभग था, छोड़ दिया तथा उसे पान और एक घोड़ा इनाम दिया।

जिस समय बादशाह शेर के शिकार को जाना चाहता तो शिकारियों को सूचना दी जाती। ये लोग वन में शेरों का पता लगाकर वहां गधे, बैल, गाय, भेड़ बकरी आदि बांध देते, जिससे शेर उस वन को छोड़कर दूसरे वन को न चले जाएं।

फिर बादशाह अपने सबसे ऊंचे हाथी पर सवार होता और शहजादे लोग सधे हुए हाथियों पर होते। सब लोग खुले होंदों में बैठते और हाथ में बन्दूक लिए होते थे। वन में चारों ओर जाल लगाकर सिर्फ एक मार्ग छोड़ दिया जाता था, जिसमें से बादशाह और शिकारी लोग प्रवेश कर सकें। जाल के चारों ओर बाहर की तरफ सिपाही खड़े होते थे, परन्तु ये न शेर मार सकते थे और न शेर ही इन्हें कोई बाधा पहुंचा सकता था, न किसी भांति जाल से निकल सकता था। बादशाह की यात्रा में सबसे पहले एक पंक्ति में सौ अरने भैंसे होते थे। प्रत्येक भैंस पर एक- एक पुरुष सवार होता और पीछे शाहजादे तथा अन्य राजपुरुष। वन में पहुंचकर भैंसे धीरे- धीरे चलते थे। शेर दिखाई पड़ते ही तत्काल घेरा बनाकर उसे बीच में घेर लिया जाता था।

इस प्रकार शेर अपने-आप को चारों तरफ से घिरा हुआ पाकर निकलने की राह ढूंढ़ते, परन्तु लाचार होकर अन्त में जिधर आसानी देखते, छलांगें लगा देते थे। तभी भैंसे पर सवार पुरुष शीघ्रता और फुर्ती से कूद पड़ते और भैंसे शेर को सींगों पर उठा- उठाकर अत्यन्त फुर्ती से मार डालते थे।

यदि कोई शेर इनके सींगों से बच जाए और अपनी जगह से न उठे तब बादशाह उसे खुद गोली मार देता अथवा ऐसा करने का हुक्म देता था। बहुधा बिना भैंसों को साथ लिये भी ये केवल हाथियों पर सवार होकर शिकार के लिए जाते थे, परन्तु इसमें सवार को बहुत भय रहता था। एक बार स्वयं शाहजहां ऐसी घटना में फंस गया।

एक शेर घायल होकर हाथी पर झपटा और उसके सिर में पंजे गड़ाकर लटक गया। महावत भयभीत होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। बादशाह ने अपने- आप को संकट में देख बन्दूक दोनों हाथों में पकड़कर शेर को पीटना प्रारम्भ किया। परन्तु शेर ने अपनी गिरफ्त नहीं छोड़ी। जब हाथी ने यह देखा कि वह अपनी सूंड से कुछ नहीं कर सकता, तब भागकर वृक्ष का आश्रय लेकर शेर को कुचल दिया। उस दिन से बादशाह ने आज्ञा दी कि शिकार के लिए जाने वाले हाथियों के सिर पर गरदन तक मोटे चमड़े के टोप चढ़ाए जायें करें, जिसके ऊपर तेज कांटे लगे हों! शिकारियों के अतिरिक्त शिकार में एक और अफसर भी रहता, जिसका कार्य शेरों की मूंछों को रखना होता था। ज्योंही शेर मरता, वह तत्काल उसके सिर पर एक चमड़े की थैली चढ़ाकर अपनी मोहर लगा देता था। शेर को शाही खेमे के सामने लाया जाता, जहां बादशाह की उपस्थिति में वह शेर की मूंछ काट लेता था, जो विष की जगह पर काम आती थी।

9

अमरसिंह राठौर का जीवन अतीत राजपूती जीवन का एक चरमकोटि का ज्वलन्त उदाहरण है। यह उद्ग्रीव जाति वीरत्व की जैसी उत्कृष्ट श्रेणी पर पहुंच चुकी थी, आज उसका हम विचार भी नहीं कर सकते।

उस समय राठौरों की एक गद्दी नागौर थी। अमरसिंह के पिता महाराव गजसिंह जोधपुर के महाप्रतापी और वीर राजा थे। उन्होंने जहांगीर बादशाह के लिए बावन युद्ध विजय किए थे और पांचहजारी जात तथा पांचहजारी मनसब का ओहदा तथा महाराज की पदवी शाही दरबार से प्राप्त की थी।

इन महाराज के तीन पुत्र हुए, जिनके मंझले अचलदास जी बाल्यावस्था में ही मर गये थे। बड़े अमरसिंह थे। छोटे प्रबल प्रतापी यशवंत सिंह थे, जिनकी तलवार का लोहा काबुल तक माना गया था।

जब महाराज गजसिंह बादशाह जहांगीर की सेवा में लाहौर गए, तब अमरसिंह को भी ले गए थे। उन्होंने बादशाह से कह- सुनकर अमरसिंह के लिए अलग मनसब और साढ़े चार लाख रुपया सालाना की जागीर उनके नाम चढ़वा दी थी तथा जोधपुर राज्य का उत्तराधिकारी अपने छोटे पुत्र यशवंतसिंह को बना दिया था।

अमरसिंह अत्यन्त उद्धत स्वभाव के थे। वे बड़े हठी, बात के धनी और प्रचंड प्रकृति के थे। उनके उद्धत स्वभाव से नाराज होकर एक बार महाराज गजसिंह ने उन्हें त्याज्य पुत्र करार दे दिया और देश त्याग देने की आज्ञा दी। इस पर अमरसिंह आगरा चले आए और बादशाह शाहजहां के दरबार में रहने लगे। बादशाह ने उन्हें दरबार में स्थान और सेना में पद दिया तथा नौमहला महल रहने को दिया। उसके पांच वर्ष बाद महाराज गजसिंह भी आगरा आए और अचानक बहुत बीमार हो गए। उनके रोगी होने का समाचार सुन शाहजहां उन्हें देखने को आया। तब महाराज ने अपने कनिष्ठ पुत्र यशवन्त को अपना उत्तराधिकारी स्वीकार करने को बादशाह और सरदारों से अनुरोध किया, शाहजहां ने महाराज का अंतिम अनुरोध स्वीकार कर लिया और यशवंतसिंह को चारहजारी जात और तीनहजारी सवारों का मनसब और खिलअत देकर मारवाड़ का राज्य सौंप दिया। अमरसिंह को तीनहजारी जात और तीनहजारी सवारों का मनसब देकर महाराव की उपाधि दी। साथ ही नागौर की जागीर का परवाना भी दे दिया। इसके बाद आगरा ही में महाराज गजसिंह की मृत्यु हो गई।

उस समय अमरसिंह की आयु पच्चीस वर्ष और यशवन्तसिंह की तेरह वर्ष की थी। महाराव अमरसिंह को जब नीले वस्त्र पहनाकर नीले रंग के घोड़े पर सवार कराकर राज्याधिकार- व्युत करके देश निकाला दिया था, तब बहुत- से वीर राठौर उनके साथ ही निकल चले थे। इनमें इनका साला अर्जुन भी था। आगरा आकर अमरसिंह ने बादशाह के लिए कई युद्ध विजय किये। उन्होंने दक्षिण और बुन्देलखण्ड के युद्धों में मराठों और बुन्देलों से मार्के के युद्ध कर

विजय प्राप्त की, फिर शाहशुजा के साथ- साथ काबुल भी गए। अमरसिंह की वीरता, उनका उग्र स्वभाव और भयानक क्रोध सर्वत्र ही प्रसिद्ध हो गया। उनकी आंखें देखकर बड़े- बड़े वीरों के कलेजे कांप जाते थे।

शाही दरबार में यह भी नियम था कि दरबारी उमराव को बारी- बारी से बादशाहत की इयोदियों पर पहरा देना पड़ता था। बड़े- बड़े राजा और सरदारों को अपनी छावनी डालकर इयोदियों पर हाजिर रहना पड़ता था। अमरसिंह को जब इयोदियों पर पहरा देने की आज्ञा हुई, तो उन्होंने क्रोधपूर्वक इनकार कर दिया। इन सब बातों से तथा शलावतखां द्वारा कान भरे जाने से बादशाह शाहजहां बहुत अप्रसन्न हो गया और अमरसिंह पर सात लाख रुपये का जुर्माना कर दिया।

दूसरे दिन अमरसिंह शाही दरबार में पहुंचे और गम्भीरता से बढ़कर बादशाह को बिना कोर्निश किए अपनी जगह पर जा खड़े हुए।

बादशाह ने कुछ देर छिपी नजर से अमरसिंह को देखकर कहा- “हम नागौर के राजा अमरसिंह से यह जवाब तलब करना चाहते हैं कि उसने किसलिए शाही नौकरी और हुक्म से इनकार किया और दरबार में आकर आदाब नहीं बजाया?”

“जहांपनाह, अमरसिंह सल्तनत के लिए पलक झपकते तलवार चलाने से नहीं चूकेगा, पर इयोदी की नौकरी की बात जुदा है।”

“हमने हुक्म जारी किए थे।”

“मैं जहांपनाह से अर्ज करूंगा कि हुक्म सोच-समझकर दिए जाएं और यह दस्तूर बदल दिया जाए।”

“क्या और राजा लोग नौकरी नहीं बजाते?”

“जहांपनाह, उन्होंने अपनी गैरत बेच खाई है। वे राजपूत कुलकलंक हैं। रातोंर कभी यह अपमान नहीं सह सकते।”

शलावतखां ने बादशाह को स्मरण कराते हुए कहा- “खुदाबन्द, बीकानेर के राजा कर्णसिंह ने शाही हुजूर में अर्जी दी थी कि राजा अमरसिंह ने बिना वजह मामूली- सी बात पर उनसे रार ठानी है।”

“वह मामूली वजह क्या है?”

“जहांपनाह, एक मतीरि की बेल झगड़े की जड़ है। कहते हैं कि उसकी जड़ नागौर की धरती में उगी थी, मगर फल बीकानेर की धरती में लगा था। उस फल का मालिक कौन हो, यही झगड़े की बात है।”

बादशाह ने अमरसिंह से पूछा— “क्या यह सच है?”

“सच है, जहांपनाह!”

सलावतखां ने फिर कहा—“जहांपनाह, शाही हुक्म दिया गया था कि दोनों फरीक अपनी- अपनी फौजें वहां से हटा लें।”

“क्या उस हुक्म की तामील हुई?”

“नहीं हुजूर, अमीन वहां भेज दिया गया है। राजा कर्णसिंह ने तो अपनी फौजें वापस बुला ली हैं, मगर राजा अमरसिंह शाही हुक्म मानने से इनकार करते हैं।”

बादशाह ने गुरसा होकर अमरसिंह से पूछा- “राजा अमरसिंह का क्या जवाब है?”

“जहांपनाह को मेरे इस घरेलू मामले में दखल देने की कोई आवश्यकता नहीं है।”

“हमारा हुक्म है कि आप अपनी फौजें फौरन वापस बुला लें!”

अमरसिंह ने दढ़ता से कहा—“मैं चाहता हूं कि जहांपनाह अपना अमीन वापस बुला लें, वरना उसकी जान की सलामती का मैं जिम्मेवार नहीं।”

बादशाह ने गुरसे से लाल होकर कहा—“बरख्शी सलावतखां, राजा अमरसिंह को शाही हुक्म सुना दिया जाय।”

सलावत ने कोर्निश करके अमरसिंह से कहा—“राजा साहब, आपने शाही हुक्म मानने में गफलत की है, इसलिए आप पर सात लाख रुपये का जुर्माना किया जाता है।”

अमरसिंह ने दर्प से कहा—“मैं यह जहांपनाह के मुंह से सुनना चाहता हूं।”

बादशाह ने क्रोध से कहा—“हमारी यही मंशा है।”

अमरसिंह ने हंसकर उत्तर दिया—“बहुत अच्छा जहांपनाह, यह जुर्माना कौन वसूल करेगा?”

सलावत ने आगे बढ़कर कहा—“अगर बादशाह सलामत हुक्म देंगे, तो मैं यह शाही हुक्म बजा लाऊंगा।”

बादशाह ने सलावतखां से कहा—“तुम्हें हुक्म दिया जाता है कि राजा अमरसिंह से जुर्माना वसूल करो।”

सलावतखां ने व्यंग्य से कहा—“राजा अमरसिंह, आप राजी से जुर्माना अदा करेंगे या आपके मकान पर कुर्की लाई जाय?”

अमरसिंह ने क्षण- भर सलावत को देखा, फिर कहा- “खां साहब, महल तक जाने की क्या जरूरत है, जुर्माना अमरसिंह के साथ है। जिसकी मां ने धौंसा खाया हो, अभी वसूल कर

ले!”

उन्होंने कटार म्यान से खींचकर हाथ में ले उसे दिखाकर कहा—“इस असील लोहे की धार पर रखकर जुर्माना अदा किया जाएगा।”

सारे दरबार में खलबली मच गई। सलावत ने कटार की उपेक्षा करके कहा—“राजा अमरसिंह, जुर्माना अदा कर दो और दरबार के अदब का ख्याल रखो।”

अमरसिंह ने ताल आंखें करके कहा—“ले जुर्माना!”

सलावत ने डांटकर कहा—“चुप, गंवा- - !”

वह पूरा ‘गंवार’ कह भी नहीं पाया था कि अमरसिंह ने चीते की भांति उछलकर कटार सलावत की छाती में घोंप दी। सलावत चीत्कार मारकर गिर गया। भगदड़ मच गई, अदब भंग हो गया।

अमरसिंह ने जोर से कहा—“जहांपनाह, जुर्माने के रुपयों का बोझ जरा भारी था, मियांजी सम्भाल न सके। लीजिए, आप खुद संभालिए।” यह कहकर जोर से कटार बादशाह पर फेंक मारी, परन्तु वह खम्बे से टकराकर एक बालिशत पत्थर काटकर गिर गई। बादशाह ‘मार डालो’ ‘पकड़ लो’ का हुक्म देकर खिड़की की राह महल में भाग गया।

अमरसिंह ने खूब जोर से कहा—“यह रातोंर अमरसिंह पावसेर लोहा हाथ में लिये निर्भय खड़ा है। मुगलों के वंश में जो कोई माई का लाल जन्मा हो, वह जुर्माना वसूल कर ले।”

चारों ओर हथियारबन्द सैनिक आकर अमरसिंह को घेरने लगे। इसी बीच स्वामिभक्त किसन नाई, अमरसिंह का घोड़ा लेकर घुस आया और सिरोही अमरसिंह के हाथ में पकड़ाकर बोला—“महाराज की जय हो! सेवक के रहते श्रीमान् को इन तुच्छ सिपाहियों से लोहा लेने की आवश्यकता नहीं। किले के सब द्वार बन्द हैं। श्रीमान् पश्चिम की फसील पर चढ़ जाएं, मैं शत्रुओं को रोकता हूँ।”

अमरसिंह उछलकर घोड़े पर सवार हो गए और हुल्लड़ को चीर- फाड़कर मारकाट करते मैदान में निकल आए और बुर्ज की ओर बढ़ने लगे। किसन सिपाहियों को रोकता हुआ घाव खाकर अमर हुआ। चारों तरफ से दरबारी और सिपाही अमरसिंह पर टूट पड़े, परन्तु वे उसी कटार के बल पर शत्रुओं के सिर उड़ाते हुए बुर्ज तक आ गए और दबाकर एड़ दी। घोड़ा सिंह की भांति उड़ान भरकर बुर्जी पर आ गया।

अमरसिंह ने घोड़े को थाप देकर कहा—“रख ले बेटा राजपूती शान को। “अमर ने फिर जो दोबारा एड़ दी, घोड़ा तीन फसीलों को फलांगकर बाहर मैदान में आ कूदा। घोड़ा तो वहीं ठौर रहा और अमरसिंह उठकर भाग गए और सही- सलामत नौमहले पहुंच गए।

शाहजहां यद्यपि भयभीत होकर दरबार से भाग आया था, परन्तु अमरसिंह की वीरता

ने उसे मोह लिया। उसने अर्जुन को बुलाकर कहा कि अमरसिंह को समझा- बुझाकर दरबार में हाजिर करो, हम उसे माफ कर देंगे।

अर्जुन के मन में बहुत दिनों से अमरसिंह के प्रति रोष था। अब अवसर पाकर वह प्रसन्न हुआ और नौमहले जाकर अपनी बहन और अमरसिंह को समझा- बुझाकर उन्हें दरबार में आने को राजी कर लिया। अमरसिंह अपने साले पर विश्वास कर उसके साथ हो लिए और किले में जब वे झुककर ड्योढ़ी पार कर रहे थे, अर्जुन ने विश्वासघात किया और पीछे से तलवार का वार करके उनका सिर काट लिया।

10

बादशाह ने अपने खास ख्वाजासरा से कहा- “हम सब कुछ तफसील से सुनना चाहते हैं।

“खुदावन्द, गुलाम ने आंखों से देखा बयान किया है।”

“क्या अमरसिंह राजी- खुशी ड्योढ़ियों तक आया था?”

“जी हुजूर, अर्जुन उसे दरबार में माफी दिलाने का यकीन दिलाकर कौल हारकर किले में ले आया था।”

“उसने खिड़की की राह ज्योंही झुककर भीतर कदम रखा कि अर्जुन ने पीछे से खट से तलवार से उसका सिर उड़ा दिया।”

बादशाह ने गुरसे से होंठ चबाकर कहा- “दगाबाज!”

“मगर बहादुर राठौर ने फुर्ती से कटार मारी और अर्जुन की नाक काट डाली।”

“बेईमान, नमकहराम, कमीने की सजा।”

“बन्देखुदा, अब अर्जुन अपनी कारसाजी का इनाम हासिल करने लिए हुजूर की कदमबोसी हासिल किया चाहता है।”

“उस दोजखी कुत्ते को हासिल करो।”

अर्जुन मुंह से पट्टी बांधे, हाथ में अमरसिंह का सिर लिये आया और सिर पेश करके बोला- “जहांपनाह यह बागी अमरसिंह का सिर हाजिर है।”

बादशाह ने सिर देखकर शोक- भरे स्वर में कहा- “अफसोस, एक बहादुर जवांमर्द का इस तरह खात्मा हो गया!”

अर्जुन ने उत्साह से कहा- “हुजूर, इस सेवक को इस मुहिम में बड़ी बहादुरी खर्च

करनी पड़ी।”

बादशाह ने उसकी ओर देखा और कहा- “हम तुम्हारी बहादुरी का पूरा हाल सुनना चाहते हैं।”

“जहांपनाह मुझे जो- जो जौहर दिखाने पड़े, वे बयान से बाहर हैं। इस सेवक को इस बागी को मारने के लिए जबरदस्त लड़ाई लड़नी पड़ी।”

“शायद सबसे गहरा घाव तुम्हारी नाक ने खाया है।”

“जहांपनाह, न जाने किसका खंजर लग गया और नाक कट गई।”

“अमरसिंह की लाश कहां है।”

“वह खिड़की में रखी है।”

बादशाह ने कहा- “अब तुम इनाम की ख्वाहिश से आए हो?”

“जी हां हुजूर, बन्दे को बारह गांवों का पट्टा और अमरसिंह वाला रुतबा इनायत हो।”

“इतमीनान रखो। तुम्हारी काबलियत और खिदमत की कद्र की जाएगी।” फिर उसने एक मुसाहिब से कहा- “इस बदनसीब दोजखी कुत्ते से कहो कि सच- सच सारा माजरा हमारे हुजूर में बयान करे। इसने किस तरह अपने सगे रिश्तेदार अमरसिंह को धोखा दिया, सच- सच बयान करे। अगर झूठ बोलेगा, तो जिन्दा जमींदोज कर दिया जाएगा।”

अर्जुन ने गिड़गिड़ाकर कहा- “जहांपनाह, गुलाम की जांबखशी हो। नमकहलाती के ख्याल से मैंने यह काम किया।”

“तुमने अमरसिंह को धोखा दिया?”

“खुदावन्द, ऐसा ही किया।”

“तुम उसे माफी दिलाने के कौल- करार करके लाये थे?”

“मैंने ऐसा ही किया था, जहांपनाह।”

“तुम दगाबाज और नमकहराम ही नहीं हो, बल्कि कमीने गुनहगार हो। तुम्हारे जैसे गुनहगारों को माफ करना और रहम करना इंसान का गला काटना है। अमरसिंह तख्त का दुश्मन न था। उसका कसूर महज यही था कि वह अपनी फजीहत बर्दाश्त नहीं कर सकता था। वह एक जवांमर्द बहादुर था।”

उसने ख्वाजासरा को हुक्म दिया- “इस दोजखी कुत्ते को जल्लादों के सुपुर्द कर दो कि वे इसे जिन्दा जमींदोज कर दें।”

ख्वाजासरा अर्जुन को पकड़कर ले गए और कत्ल कर डाला।

बादशाह ने अमरसिंह की लाश को बुर्ज पर डलवा दिया और नौमहला दखल करने तथा खजाना जब्त करने का हुक्म दिया।

नौमहले में जब यह दारुण समाचार पहुंचा तो हाहाकार मच गया। वे थोड़े-बहुत राजपूत वहां थे, वे अमरसिंह के भतीजे रामसिंह की अध्यक्षता में संगठित होकर लाश को बुर्ज से लाने को तैयार हुए, परंतु यह कुछ साधारण बात न थी। असंख्य शाही सेना से घिरे किले से लाश ले आना सहज काम न था, पर लाश लाकर रानी को सती कराना आवश्यक था। यह काम मुट्ठी भर राजपूतों के बूते से बाहर था।

अन्त में रानी को बल्लूजी चम्पावत का स्मरण हुआ। उन्होंने चलती बार आवश्यकता पड़ने पर काम आने का वचन दिया था, उसकी याद दिलाकर रानी ने उनके पास खबर भेजी कि आप क्षत्रिय हैं, तो अपने स्वामी की लाश लाकर हमें सती कराइए।

बल्लूजी उस समय एक घोड़े की परीक्षा कर रहे थे। यह घोड़ा उसी समय उदयपुर दरबार ने उसके पास भेंट- स्वरूप भेजा था। वह एक असाधारण जानवर था, जिस पर सवारी लेने योग्य कोई वीर उदयपुर में न था। महाराणा ने लिखा था, - जैसे राजपूतों में बल्लूजी दुर्धर्ष हैं, वैसे ही घोड़ों में यह घोड़ा दुर्धर्ष है, इसी से आपके पास भेजा है।

बल्लूजी ने ज्योंही रानीका सन्देश सुना वे तुरन्त नंगी पीठ उसी घोड़े पर सवार हो गए। उन्होंने दो तलवारें बांधीं। साथ में अपने अनुचरों को लिया जो लोग उदयपुर से घोड़ा लाये थे। उसने कहा- “महाराणा जी की कृपा का बदला चुकाने का अब समय नहीं है। उन्हें हमारा जुहार कहना और कहना कि घोड़ा जैसा दुर्धर्ष है, वैसे ही दुर्धर्ष कार्य में जा रहा है।”

उन्होंने एड़ लगाई। असील घोड़ा हवा में उड़ चला। क्षण- भर बाद बल्लूजी किले की पौर पर थे। हजारों तलवारें, बर्छियां, तीर बरस रहे थे, परन्तु वे बढ़ते ही गये। लाशों के अम्बार लगा दिए और बुर्ज पर जाकर लाश को उठा लिया। लाश को घोड़े पर रखा, क्षण- क्षण पर साथी राजपूत एक- एक करके क्षीण हो रहे थे। बल्लूजी के शरीर से खून की धार बह रही थी।

शस्त्रों से उनका शरीर छलनी हो रहा था। उनके घोड़े की भी वही हालत थी, परन्तु अभी लाश निरापद नहीं थी। वे बढ़- बढ़कर हाथ मार रहे थे।

अन्त में उन्होंने लाश को रामसिंह के सुपुर्द करके कहा- “इसे नौमहले ले जाकर रानी को दे दो। जब रानी चिता में बैठ जाए और चिता में आग दे दी जाय, तो तोप चला देना, तब मैं समझूंगा कि कर्तव्य मुक्त हुआ।

रामसिंह अपने वीरों को गांसकर लाश ले नौमहले की ओर बढ़ा। उसकी ओर उसके वीरों की तलवारें करामात दिखा रही थीं। रास्ते में रुंड- मुंड लुढ़क रहे थे। उधर बल्लूजी पर्वत के समान मार्ग में अड़े थे। उनकी प्रतिज्ञा थी कि जब तक नौमहले से तोप का शब्द न हो जाएगा वे मरेंगे नहीं, गिरेंगे भी नहीं। उनके चारों ओर लाशें ही लाशें थीं।

अन्त में सब कार्य सम्पन्न हो गए। लाश नौमहले पहुंच गई। चिता में आग दे दी गई। बाहर तलवारें झनझना रही थीं। भीतर से लाल लौ उठी और नौमहला धांय- धांय जलने लगा। तोप का शब्द हुआ बल्लूजी की मुट्ठी ढीली हुई और तलवार छूट गई, वे नक्षत्र की भांति घोड़े से गिरे। घोड़ा भी अमर हुआ।

11

शाहजहां का तीसरा बेटा औरंगजेब था। वह गौरवपूर्ण और आग्रही स्वभाव का था। वह अपने सब भाइयों से निराला, संजीदा और अपने कार्य गुप्त रूप से निकालने का अभ्यस्त था। उसका चित्त कुछ रोगी- सा था और सदा कुछ- न- कुछ करता रहता था। उसका उद्देश्य यह रहता था कि बात की तह तक पहुंचकर पूरा न्याय करे। उसे यह बड़ी चाह थी कि दुनिया उसे बुद्धिमान चतुर और न्याय रक्षक समझे। दान- पुण्य करने में भी वह अच्छा था और केवल वहीं परितोषिक और दान देता था, जहां पूरी आवश्यकता हो।

औरंगजेब के हरम में दो बेगम और चहेती थीं। बड़ी बेगम दिलरस बानू से तीन पुत्रियां- जेबुन्निसा, जीनउन्निसा, जुबतदउन्निसा और एक पुत्र मुहम्मद आजम थे। दूसरी बेगम रहमतउन्निसा उर्फ नवाब बाई से दो पुत्र मुहम्मद सुलतान और मुअज्जम तथा एक पुत्री बदरुन्निसा थे। औरंगाबादी महल और हीराबाई उर्फ जैनाबादी ये दोनों विवाहिता बेगमों न थीं, प्रेमिका के रूप में महल में रहती थीं।

विरकाल तक वह यही प्रसिद्ध करता रहा उसने दुनिया त्यागकर राजसिंहासन के सब हक छोड़कर अपनी आयु खुदा की इबादत में व्यतीत करने का निश्चय कर लिया है।

शाहजहां उससे बहुत सतर्क रहता और घृणा करता था। औरंगजेब भी पिता के मन की बात जानता था, पर ऊपर से मीठा बना रहता था।

दारा को भी वह लल्लोचप्पो में ही रखता था। दारा भोला- भाला उसकी बातों में आ जाता था। शाहजहां ने औरंगजेब को मुल्तान का हाकिम बनाया, परन्तु उसने दारा की खुशामद करके दक्षिण को अपनी बदली करा ली। इस काम में गूढ़ उद्देश्य गोलकुण्डा और बीजापुर की सैनिक शक्तियों का अध्ययन करना था। वहां पहुंचते ही उसने नया शहर औरंगाबाद बसाया। शाहजहां ने दारा से कहा भी कि तुम सांप पाल रहे हो, जो तुम्हें अन्त में कष्ट देगा।

दक्षिण में रहते हुए वह अपनी बहन रोजनआरा के द्वारा सिंहासन के लिए पूरा उद्योग करता रहा। परन्तु जो कुछ होता था, वह गुप्त रूप से और चतुराई से होता था कि किसी को भेद न मिले। इसके अतिरिक्त उसे भय था कि उसे दक्षिण से बुला लिया जाय। वह एक योग्य सैन्य- संचालक और युद्ध- विजय महत्वाकांक्षी युवक था।

12

अपने अन्तिम दिनों में शाहजहां अपने पुत्रों से भयभीत रहने लगा। वे बालिग और बाल-बच्चेदार थे। पर उनमें परस्पर प्रेम नहीं था। दरबार में भी प्रत्येक शाहजादे के पृथक्- पृथक् पक्षपातियों के दल थे। वह बहुधा उन्हें ग्वालियर के किले में कैद करने की सोचा करता था पर उसे हिम्मत न होती थी। उसे ऐसा ख्याल हो गया था कि वे या तो राजधानी में ही मार- काट मचाएंगे या पृथक् राज्य कायम करेंगे। तीन शाहजादे पृथक्- पृथक् अपने- अपने प्रान्तों में स्वतन्त्र बादशाह की ही भांति रहते थे। वे सारी आमदनी स्वयं खर्च करते और सेना संग्रह करते थे।

औरंगजेब ढोंगी, दूरदर्शी एवं मुस्तैद था। भाग्य से उसे एक ऐसा मित्र मिल गया जिसने उसके भाग्य का सितारा चमका दिया। उसका नाम मीरजुमला था। वह ईरानी था और अत्यन्त साधारण स्थिति से असाधारण प्रतिभा का व्यक्ति प्रसिद्ध हुआ।

शाहजहां तक भी मीरजुमला की वीरता और योग्यता की खबरें पहुंचीं। सादुल्लाखां के मरने से उसे बहुत योग्य प्रधान वजीर की जरूरत थी। उसने उसे बुलाने को बारम्बार निमंत्रण भेजे। अन्त में मीरजुमला दिल्ली आया। शाहीहुक्म से मार्ग में उसका सरदारों ने भारी सत्कार किया। जब वह आगरा पहुंचा तो बड़े- बड़े सेनापति उसके स्वागत को आए और तमाम बाजार इस प्रकार सजाए गए, जिस प्रकार बादशाह के लिए सजाये जाते हैं। उसने बादशाह को भारी कीमतें भेंटें दीं, जिनमें जगत्- प्रसिद्ध कोहनूर हीरा भी था। उसने बादशाह को गोलकुण्डा के शाह के विरुद्ध खूब उभारा। शाहजहां राजी हो गया और एक भारी सेना मीरजुमला की अधीनता में भेजी, जिसे लेकर उसने बीजापुर में कल्याणी का किला जा घेरा। भेजने से पहले दारा और शाहजहां ने दो काम किये- एक तो यह कि मीरजुमला के स्त्री- बच्चों को बतौर जमानत अपने पास रख लिया, दूसरे उससे वादा करा लिया कि उस काम में औरंगजेब का कोई सरोकार न होगा।

13

शाहजहां सत्तर वर्ष से ऊपर की आयु को पहुंच चुका था और अब उसे भयंकर बीमारी लग गई थी। उसने इस अवस्था में अपनी शक्ति का विचार न कर बहुत- सी कामोत्तेजक दवाइयां खायी थीं। इसका परिणाम यह हुआ कि तीन दिन तक उसका पेशाब बन्द रहा। शाही हकीम भी उसे आरोग्य करने में सफल नहीं हुए। नित्य लगने वाला दरबार भी बंद हो गया। बादशाह की बीमारी की खबर ने देश- भर में हलचल मचा दी। दिल्ली का वातावरण अत्यन्त क्षुब्ध हो रहा था। असल में इस प्रबल क्षोभ को उत्पन्न करने वाला प्रमुख सूत्रधार मीरजुमला था। दिल्ली में यद्यपि वह एक सप्ताह ही ठहरा था, परन्तु इसी बीच में अपनी ऐसी कूटनीति का जाल दिल्ली- दरबार में बिछाया था कि बादशाह के बीमार पड़ते ही उसके कैद होने, सख्त बीमार होने तथा मरने तक की अफवाहें साम्राज्य- भर में फैल गईं। बादशाह ने यह देख किले के सब दरवाजे बन्द कराके केवल दो दरवाजे खुले रखने की आज्ञा दी। एक पर जसवन्तसिंह राठौर को और दूसरे पर रामसिंह को तीस- तीस हजार सैनिकों सहित नियत कर दिया और हुक्म दिया कि सिवा दारा के किसी को भीतर न आने दें। दारा को भी सिर्फ दस आदमी लेकर भीतर आने की आज्ञा थी मगर वह रात- भर किले में नहीं रह सकता था। सिर्फ बादशाह की बड़ी बेटी जहांआरा ने ज़िद की और

कुरान उठाकर कसम खायी कि वह दगा न करेगी।

तीनों शाहजादे दिल्ली से बाहर थे। अपने दूतों और भेदियों द्वारा जब उन्होंने बादशाह के ऐसे समाचार सुने, तो वे ताजोतख्त हथियाने के जोड़- तोड़ में लग गए। दारा ने दिल्ली, आगरा और लाहौर में तत्काल सेना का संग्रह प्रारम्भ कर दिया। बाजार बंद हो गए, कहीं- कहीं बादशाह के मरने की खबर पहुंच गई। शाहशुजा को जब बंगाल में खबर लगी तो वह सेना लेकर कूच दर कूच करता दिल्ली की ओर बढ़ा। उसके साथ चालीस हजार सवार और अनगिनत प्यादे थे। उसने पुर्तगीजों की अधीनता में एक बेड़ा भी गंगा में तैयार करा लिया था। वह यह प्रचार करता आता था कि दारा ने बादशाह को विष दिया है और मैं उसे दंड देने जाता हूं। बादशाह ने उसे लौट जाने का हुक्म भेजा, पर वह न माना। तब बादशाह ने हारकर उसी रोग की हालत में दिल्ली से आगरा तक की यात्रा की और दारा के बेटे सुलेमान शिकोह को राजा जयसिंह और सेनापति दिलेरखां के साथ शुजा पर एक भारी सेना लेकर भेजा, जिन्होंने उसे बंगाल की ओर खदेड़ दिया।

औरंगजेब दक्षिण में था। उसे रेशनआरा के कासिद से आगरा का सब हाल मालूम हुआ। सुलेमान शिकोह भारी फौज लेकर शुजा से युद्ध करने गया है, यह उसके लिए आगरा को बिना बाधा हस्तगत करने का सुअवसर प्रतीत हुआ। उसने रेशनआरा से कहलाया कि वह किसी भी उपाय से शिकोह को बंगाल की ओर ही युद्ध में फंसाये रखने की कोशिश करे। शुजा और शिकोह उधर ही लड़ते रहें, तो उसकी तख्त पाने की मुहिम आसान हो जाएगी। यह खबर भेजकर उसने लश्कर एकत्रित किया और आगरा की ओर खाना हुआ।

शिकोह को शुजा की ओर खाना करके बादशाह ने फिर दिल्ली लौटने की तैयारी की। इस बार उसने राजधानी ही आगरा से हटाकर दिल्ली ले चलने का हुक्म दिया। आगरा से बहुत साजोसामान और लश्कर दिल्ली की ओर खाना किया गया। कई दिन तक सड़कें लश्करों से भरी चलती रहीं। पर ज्योंही बादशाह चलने को तैयार हुआ कि खबर मिली कि दक्षिण में औरंगजेब ने भी विद्रोह कर आगरा की ओर कूच किया है। यह सुनकर बादशाह ने यात्रा रोक दी और औरंगजेब को लौट जाने का हुक्म भेजा।

औरंगजेब ने दक्खिन के सब किलेदारों और फौजदारों को अपना साथ देने को तैयार कर लिया। नर्मदा पर एक किला था, जहां होकर दक्षिण का रास्ता था। वहां के किलेदार मिर्जा अब्दुल्ला को उससे कहला दिया कि यदि कोई कासिद उधर से गुजरे और उसके पास ऐसी चिट्ठियां हों जिनमें बादशाह के जिन्दा होने की बात हो तो वे चिट्ठियां जला दीं जाएं और उस आदमी का सिर काट लिया जाय। इस प्रकार उसने दक्षिण में असली खबर नहीं पहुंचने दी और सब सरदार अपनी- अपनी फौज लेकर उसके साथ हो लिए।

लाचार बादशाह ने अपने सरदारों से सम्मति ली और कासिमखां तथा राजा जसवन्तसिंह को एक टुकड़ी सेना देकर उन्हें रोकने को भेजा गया। उन्हें आज्ञा थी, जहां तक बने औरंगजेब को वापस लौटा दें और उज्जैन में क्षिप्रा नदी पार न करने दें।

गर्मी की ऋतु थी और नदी का जल बहुत सूख गया था। राजा और कासिमखां नदी के इस पार थे कि टीले पर औरंगजेब की फौज दिखाई दी। यदि राजा जसवन्त सिंह उसी वक्त हमला बोल देते तो औरंगजेब की थकी हुई सेना के पांव उखड़ जाते, परन्तु उन्हें आज्ञा ही यह थी कि नदी के इस पार रहें और औरंगजेब को इस पार आने से रोकें। औरंगजेब तीन दिन तक नदी के उस पार पड़ा रहा। तीसरे दिन उसने एक ऊंचे टीले पर तोपखाना जमाया और राजा साहब की सेना पर गोले बरसाने की आज्ञा दी, साथ ही अपनी सेना को पार उतरने की भी। राजा साहब ने वीरता से युद्ध किया, पर कासिमखां पहले ही औरंगजेब से मिल गया था। उसने रातोंरात गोला-बारूद जमीन में छिपा दिया और जसवन्तसिंह को घोर संकट में छोड़कर भाग खड़ा हुआ। शीघ्र ही उनका गोला-बारूद चुक गया। औरंगजेब इस पार उतर आया। राजा जसवन्तसिंह खूब लड़े। उनके अठारह हजार राजपूतों में सिर्फ छः सौ बचे। तब जसवन्तसिंह आगरा न जाकर सीधे जोधपुर चले आए। वहां पहुंचते-पहुंचते सिर्फ पन्द्रह योद्धा उनके साथ बचे थे।

इस विजय से औरंगजेब का साहस बढ़ गया और उसने प्रसिद्ध किया कि शाही फौज में ऐसे तीन हजार सिपाही हैं, जो हमारी सेना में आने को तैयार हैं।

शाहजहां ने यह सुना तो दुःख और बेचैनी से बेहोश हो गया। दारा का भी बुरा हाल था। उधर सुलेमान शिकोह शाहजादा शुजा के पीछे लगा था। उसे बादशाह बारम्बार लौट आने के संदेश भेज रहा था।

दारा ने एक लाख सवार, बीस हजार पैदल, अस्सी तोपें एकत्र कीं और युद्ध की तैयारी की। औरंगजेब के पास चालीस हजार सवार थे, वे थके हुए भी थे। दारा को चैन न था। बादशाह हर तरह उससे लाचार हो गया था। अनेक विश्वासी सरदार सुलेमान शिकोह के साथ गये हुए थे, दरबार में जो सरदार थे, उन पर विश्वास नहीं किया जा सकता था, क्योंकि दारा ने बहुतों का अपमान किया था।

बादशाह स्वयं इस युद्ध में सेनापति बनना चाहता था। यदि ऐसा होता तो युद्ध टल जाता। पर दारा को गर्व था कि विजय का सेहरा मैं अपने सिर बांधूंगा। दारा को यह भी समझाया गया कि सुलेमान शिकोह के आने तक ठहरो जो तेजी से लौटकर आ रहा है, पर नहीं माना।

दारा चल दिया और आगरा से साठ मील दूर चम्बल नदी का घाट रोककर पड़ाव डाल दिया।

औरंगजेब ने भेदिये लगा रखे थे और उसे दारा की गतिविधि मालूम थी। इतने पर भी उसने अपने डैरे उस पार लगा दिए और जान-बूझकर इतने पास लगाए कि जिन पर दारा की दृष्टि पड़ सके। इसके बाद उसने चम्पतराय से सन्धि कर वहां से बाहर फ्लॉग की दूरी पर दुर्गम वन में होकर सेना इस पार उतार ली। जब वह चुपचाप जमुना किनारे तक पहुंच गया, तब दारा को इस बात का पता चला और उसने पीछा किया। अब आगरा निकट ही आ गया था। औरंगजेब यहां सेना को विश्राम की आज्ञा देकर सामग्री और मोर्चेबंदी की तैयारी करने लगा।

उधर दारा ने सबसे आगे तोपें लगाकर ऐसी जकड़ दीं कि शत्रु के सवार पंक्ति भंग न

कर सकें। उनके पीछे उसने ऊंटों पर छोटी तोपें सजाई। इसके पीछे पैदल सेना पंक्ति बांध बन्दूक दागने को तैयार हो गई। शेष सेना सवारों की थी, जिनमें राजपूतों पर तलवारें या बर्छियां थीं और मुगलों पर तलवारें तीर और धनुष। इस सेना के दाहिनी ओर खलीलुल्लाखां था, जिसके अधीन तीन हजार सवार थे। बायीं ओर रुस्तमखां, दाहिनी ओर राव छत्रसाल और सरदार रामसिंह थे। औरंगजेब की सेना की भी यही व्यवस्था थी। अन्तर यह था कि कुछ छोटी तोपें उसने दायें- बायें भी छिपा दी थीं। यह युक्ति मीरजुमला ने बताई थी जो बहुत उपयुक्त निकली।

ज्योंही युद्ध आरम्भ हुआ कि तोपों ने आग बरसानी शुरू कर दी और तीरों की इतनी वर्षा हुई कि बादल छा गया। पर इतने में जोर से वर्षा होने लगी। थोड़ी देर के लिए युद्ध रुक गया। पर पानी बन्द होते ही तोपें फिर चलने लगीं। इसी समय दारा एक सुन्दर सिंहलद्दीपी हाथी पर सवार होकर सेना को उत्साह दिलाता शत्रु की तोपें छीनने को आगे बढ़ा। उधर शत्रु ने इतने गोले बरसाए कि मृतकों के ढेर लग गए। फिर भी दारा साहसपूर्वक बढ़ता ही गया उसने बहुत चेष्टा की, पर औरंगजेब के पास तक न पहुंच सका, क्योंकि उधर के तोपखाने ने इनके सिपाहियों के छक्के छुड़ा दिए। परन्तु दारा ने साहस करके उनकी तोपों पर आक्रमण कर ही दिया। उसने हाथियों की सांकलें खोल डालीं जिन्होंने खेमों में घुसकर तोपचियों और पैदल सेना को रौंद डाला। इस अवसर पर इतना घमासान युद्ध हुआ कि लाशों के ढेर लग गए और तीरों से आकाश छा गया। परन्तु ये तीर व्यर्थ जाते थे। अन्त में औरंगजेब के सवार भाग खड़े हुए।

औरंगजेब हाथी पर बैठा सेना का साहस बंधा रहा था, पर कोई सुनता न था। इस समय औरंगजेब के सिर संकट आया था। उसके एक हजार सवार बच रहे थे, जो तेजी से काटे जा रहे थे। उसने सरदारों से कहा- “भाइयों! दक्खिन दूर है।” और अपने हाथी के पैरों में सांकल डाल दी। यह देख सैनिक फिरे।

दारा ने औरंगजेब पर छापा मारना चाहा, पर उसके सवार पंक्तिबद्ध नहीं थे, धरती भी ऊबड़- खाबड़ थी, अतः सफल नहीं होता था। इतने ही में उसने देखा कि सेना के बायें भाग में बड़ी हलचल मची है। कुछ क्षण बाद ही समाचार मिला कि रुस्तमखां मारे गए और रामसिंह शत्रु-सेना में घिर गए। अतएव वह औरंगजेब पर छापा मारने का विचार छोड़ बायीं ओर भागा। उसके पहुंचने पर वहां लड़ाई का रंग बदल गया। शत्रु पीछे हटने लगे। वहां रामसिंह ने बड़ी वीरता प्रकट की थी। उसने मुरादबख्श को घायल कर दिया था और उसका अम्बारी का रस्सा काट उसे हौंदे से गिराने की चेष्टा कर रहा था, पर वह भी वीरता से बचाव कर रहा था। वह फुर्ती से अपने आठ वर्ष के बच्चे को ढाल से बचा रहा था। अन्त में एक तीर से उसने रामसिंह को मार गिराया। रामसिंह के मरते ही राजपूत जोश में आकर भिड़ गए। उन्होंने मुराद को घेर लिया। अब दारा भी इसमें पिल पड़ा। ऐसा करने से औरंगजेब बचा जाता था, पर वह मुराद को भी नहीं छोड़ सकता था। इस समय सरदार खलीलुल्लाखां ने विश्वासघात किया। वह दाहिने पक्ष का सरदार था और उसके अधीन तीस हजार शिक्षित सवार थे। अकेला यही औरंगजेब के लिए काफी था, पर उसने कुछ भी नहीं किया। उसने सैनिकों से कहा- “हमें एक तीर भी छोड़ने की आवश्यकता नहीं, हम खास मौके पर काम आयेंगे।” बादशाह द्वारा अपनी पत्नी के सतीत्व- नाश और दादा द्वारा किये गए अपमान का बदला उसने इस समय लिया। दारा ने उसकी सहायता के बिना ही विजय प्राप्त कर

ली होती, परन्तु ऐन मौके पर उसने दारा को पुकारकर कहा- “मुबारिकाबाद हजरत सलामत, अलहम्दुलिल्लाह, हुजूर, को बख़ैर व सलामती बादशाहीफतह मुबारिक हो। अब हुजूर इतने बड़े हाथी पर क्यों सवार हैं, जबकि कई गोлияं व तीर अम्बारी के सायबान से पार हो चुके हैं। अगर खुदा- न- ख्वास्ता कोई गोली या तीर जिस्मे मुबारिक से छू जाए तो हम गुलामों का कहां ठिकाना रहेगा। खुदा के वास्ते जल्द उतरिए और घोड़े पर सवार हो लीजिए। अब क्या रह गया है, सिर्फ चन्द भगोड़ों को चुस्ती से पकड़कर बांधना है।”

दारा यदि यह समझ लेता कि इस बड़े हाथी की बदौलत ही उसे विजय प्राप्त हो रही है, क्योंकि सैनिक उसे देखकर हिम्मत बांध रहे हैं, तो वह विशाल साम्राज्य का स्वामी होता, पर वह खलीलुल्लाह की बात मान हाथी से उतर पड़ा और घोड़े पर बैठ गया। सिपाही हाथी को खाली देखकर समझ बैठे कि दारा मारा गया। उनमें खलबली मच गई। क्षण- भर में माया उलट गई। दारा की फौज में भगदड़ मच गई। घोड़े पर सवार दारा को अपनी भूल मालूम हुई। वह बहुत बका- झका और कहने लगा कि मैं खलीलुल्ला को जीता न छोड़ूंगा, पर अब कुछ नहीं हो सकता था। सिर्फ हाथी पर चढ़े रहकर औरंगजेब ने सल्तनत पायी और क्षण- भर को हाथी से उतरकर दारा ने पायी हुई विजयलक्ष्मी को खो दिया।

खलीलुल्ला वहां से हटकर औरंगजेब से जा मिला, जो ईश्वर की दी हुई इस विजय को देखकर आश्चर्य कर रहा था। उसने खलीलुल्ला को बहुत- से सज्जबान दिखाए और मुराद के पास से ले जाकर पेश किया और मुराद ही बादशाह हैं यह भी प्रकट कर दिया।

अब औरंगजेब ने सब अमीरों को मीठे- मीठे पत्र लिखकर अपने अधीन किया। उसका मामा शइस्तखां इस काम में उसका मददगार था। शाइस्तखां की पत्नी तो शाहजहां के बलात्कार से मरी ही थी, दारा ने भी उसका उपहास किया था। उस सबका बदला उसने अब लिया। औरंगजेब सब काम मुराद नाम से करता और प्रकट करता कि वह बिलकुल बेलौस है।

दारा आगरा लौट गया। मगर बादशाह को मुंह न दिखा सका। बादशाह ने खबर सुनकर दारा को बहुत आश्वासन दिला भेजा और अपना प्रेम प्रकट किया और यह भी कहा कि निराश न हो। सुलेमान शिकोह की सेना संगठित और व्यूहबद्ध है, तुम तत्काल दिल्ली चले जाओ। वहां के हाकिम को लिख दिया गया। वह तुम्हें एक हजार हाथी- घोड़े देगा, कुछ धन देगा। तुम आगरा से दूर न जाना, बल्कि ऐसी जगह ठहरना जहां हमारे पत्र तुम्हें मिल सकें।

पर दारा इतना शोकाकुल था कि उसने कुछ उत्तर नहीं दिया। उसने जहांआरा के पास कुछ सूचनाएं भेजीं और आधी रात के समय अपनी स्त्री, बच्चों तथा छोटे पुत्र सिफरशिकोह के साथ चार सौ आदमी लेकर दिल्ली को चल दिया।

दारा के दिल्ली की ओर पलायन करने का दुःखद समाचार सुनकर शाहजहां की आंखों में आंसू भी आए, परन्तु वह बेबस और लाचार था। उसने औरंगजेब को एक दूसरा पत्र जहांआरा से लिखवाया- “बादशाह सलामत की सेहत अब ठीक है, उन्हीं का शासन अभी है। तुम्हारा फौज लेकर अपने पिता और बड़े भाई पर हमला करना राजद्रोह है, तुम अब भी प्रिय पुत्र

के समान अपने पूज्य पिता के प्रति आदर करो और आकर भेंट करो।”

परन्तु औरंगजेब ने इस पत्र का कयास उतर दिया। उसने लिखा- “मेरे बुजुर्गवार पिता दारा के हाथ के खिलौने मात्र हैं, शासन तो दारा करता है, वह बुजुर्गवार पिता को हटाकर सल्तनत को हड़पना चाहता है मैं उसे उसके कसूर की सजा दूंगा।”

निराश होकर शाहजहां ने किले के सब द्वार बन्द कर दिए और किले पर तोपें और फौज लगा दीं। औरंगजेब ने किले का घेरा डाल दिया। उसने किले में पानी ले जाने वाले द्वार ‘खिजरी दरवाजा’ पर कब्जा कर लिया। ‘खिजरी दरवाजा’ किले के बुर्ज की ओट में था, बुर्ज की तोपें अपनी मार से वहां पर तैनात औरंगजेब के सैनिकों को नष्ट नहीं कर सकती थीं। अतः किले में पीने का मीठा पानी बन्द होने से किले के अन्दर फौज और निवासियों में हाहाकर मच गया। लोग प्यास के मारे तड़पने लगे। उनके तड़पने से दुखी होकर शाहजहां ने एक पत्र कविता के रूप में औरंगजेब को लिखा।

जयसिंह यह पत्र पाकर चिन्ता में पड़ गया। वे राजपरिवार के व्यक्ति पर हाथ उठाना ठीक नहीं समझते थे। उन्होंने दिलेरखां से सलाम किया। दोनों सरदार औरंगजेब के पत्र को लेकर सुलेमान के खेमे में गए और पत्र दिखाकर कहा- “जिस खतरनाक हालत में आप पड़ गए हैं, मैं उसे आपसे छिपाना मुनासिब नहीं समझता। स्थिति बदल गई। इस समय आपको न दिलेरखां पर भरोसा करना चाहिए, न दाऊदखां पर और न फौजों पर ही। आप यदि इस वक्त अपने पिता की मदद को आगे बढ़ेंगे तो आप दुर्दशा में पड़ेंगे। अतः मुनासिब है कि गढ़वाल के पहाड़ों में चले जाएं। वहां के राजा के यहां आपको आश्रय मिलेगा और वहां औरंगजेब भी न पहुंच सकेगा। वहां जाकर यहां के हालात पर नजर रखें और जब मौका देखें, चले आएंगे।”

यह सुनते ही शाहजहां समझ गया कि अब कोई मित्र नहीं रह गया। लाचार वह फौज को वहीं छोड़कर कुछ हितैषियों को साथ लेकर चल दिया। सेना जयसिंह और दिलेरखां के साथ रही। उसका बहुत-सा कीमती सामान और मुहरों से लदा एक हाथी भी उन्होंने ले लिया। रास्ते में भी उसे देहात के लोगों ने बहुत लूटा। ज्यों-ज्यों करके वह गढ़वाल पहुंचा। वहां के राजा ने उसका सत्कार किया और आश्रय देकर कहा- “जब तक आप यहां हैं, मैं प्राणपण से आपके लिये हाजिर हूँ।”

इधर सब झगड़ों से निबटकर औरंगजेब ने आगरा से तीन मील दूर एक बाग में मुकाम किया और बादशाह को एक पत्र लिखकर एक अत्यन्त धूर्त और चालाक आदमी के साथ भेजा। पत्र यह था:

“दाराशिकोह की कजरई और बेजा खयालात के बाइस जो वाकआत पेश आए हैं उनके लिए औरंगजेब को बहुत ही रंज और अफसोस है। हुजूर की तबीयत अब अच्छी होती जाती है, इसलिए हुजूर की खिदमत में मुबारिकाबाद अर्ज करने और महज इस गरज से कि जो कुछ इर्शाद हो उसकी तामील की जाय, वह आगरा में आया है।”

शाहजहां भी भारी राजनीतिज्ञ था। उसने जुबानी कहलाया- “उसकी सआदमन्दी और

फर्मावरदारी से हम निहायत खुश हैं” इसके बाद पत्र में लिखा- “दारा ने जो कुछ किया, बेसमझी और नालायकी से किया था। तुम पर तो हम इन्तदा ही से शफवकत रखते हैं, बस तुमको जल्द हमारे पास आना चाहिए, ताकि तुम्हारे मशवरे से उन उमूर का इन्तजाम किया जाय, जो इस गड़बड़ की बाइस खराब और अवतर पड़े हैं”

पर औरंगजेब एक ही काइयां था। उसने किले में जाने का साहस नहीं किया। उसे भय था कि वह अवश्य कैद कर लिया जाएगा। इस बीच उसे रोशनआरा का खत मिला। उसमें लिखा था- “खबरदार किले में आने का कस्ट न करना, तुम्हें मार डालने के तमाम जाल बिछे हुए हैं। जहांआरा ने खूंखार तातारी बांदियां जहां- तहां छिपा रखी हैं, जो तुम पर अपनी बड़ी- बड़ी तलवारें लेकर टूट पड़ेगीं और वे उजबक गुलाम भी जो अपने हथियारों को बखूबी इस्तेमाल करना जानते हैं, तुम्हारी घात में हैं।”

औरंगजेब ने अपने सरदारों से बात की और अपने पुत्र मुहम्मद सुलतान को पट्टी पढ़ाकर किले में भेजा। मुहम्मद सुलतान ने सहसा किले पर अधिकार कर लिया। इससे सब लोग हक्के- बक्के हो गए। यह काम बड़ी चालाकी से किया गया। बादशाह इस प्रकार कैद होकर मर्माहत हो गया और उसने मुहम्मद सुलतान को खत लिखा- “मैं तख्त और कुरान मजीद की कसम खाकर कहता हूं कि अगर तुम इस वक्त ईमानदारी बरतोगे, तो तुम्हीं को बादशाह बना दूंगा। इस मौके को गनीमत जानो और दादाजान को कैद से छुड़ा लो। याद रखो कि इस सवाबे आखिरत के अलावा दुनिया में भी तुम्हें एक दायमी नेकनामी हासिल होगी।”

यदि मुहम्मद सुलतान जरा साहस करके बादशाह की बात मान लेता तो सब कुछ हो जाता, क्योंकि अब भी बादशाह पर लोगों की श्रद्धा थी। दारा के पतन के बाद यदि बादशाह स्वयं युद्ध को कमर कसता, तो न तो औरंगजेब ही उसके मुकाबले साहस करता और न सरदार उसकी बात टालते, पर वह चतुराई के दांव- पेंच खेलता रहता था और उसकी बड़ी बेटी का उसमें भारी हाथ था। अतः वह कुछ भी न कर सका। मुहम्मद सुलतान के भाग्य में भी ग्वालियर के किले में दिन काटने बदे थे।

अस्तु मुहम्मद सुलतान ने जवाब दिया- “मुझे हुजूर में हाजिर होने का हुक्म नहीं है_ बल्कि ताकीदी हुक्म है कि किले के कुल दरवाजों की कुंजियां खुद अपनी सुपुर्दगी में लेकर यहां से जल्द वापस जाऊं, क्योंकि अब्बाजान हुजूर की कदमबोसी के निहायत मुश्ताक हो रहे हैं।”

बादशाह दो दिन तक आगा- पीछा सोचता रहा। धीरे- धीरे सब लोग उसे छोड़- छोड़कर जा रहे थे। जब उसके निज के संरक्षकों ने भी उसे छोड़ दिया, तो उसने चाबियां दे दीं और कहला भेजा:

“अब समझदारी इसी में है कि औरंगजेब हमसे आकर मिले क्योंकि सल्तनत के बाज बहुत जरूरी इसरार हक उसे समझाना चाहते हैं।”

पर औरंगजेब अब भी न आया और तुरन्त एतबारखां नामक विश्वासी व्यक्ति को किलेदार नियुक्त करके भेज दिया, जिसने वहां पहुंचकर सब बेगमों, जहांआरा और स्वयं बादशाह

को भी कैद कर लिया और किले के कई दरवाजे एकदम बन्द करा दिए। शाहजहां के शुभवचिन्तकों का आना- जाना और पत्र- व्यवहार कतई बन्द हो गया। बिना किलेदार को सूचना भेजे कोई कमरे से भी बाहर नहीं निकल सकता था।

अब औरंगजेब ने पर निकाले। उसने बादशाह को खत लिखा और सबको सुनाया। खत यह था:

“यह बेअदबी मुझसे इसलिए सरजद हुई कि हुजूर जाहिरा मेरी निस्बत इजहारे-उल्फत व मिहरबानी फरमाते थे, और इर्शाद होता था कि दारा के तौर- तरीकों से हम सख्त नाराज हैं। मगर मुझे पुरख्ता खबर मिली है कि हुजूर ने अशर्कियों से लदे हुए दो हाथी उसके पास भेजे हैं जिनसे वह नई फौज भर्ती करके खूरेज लड़ाई को तवालात देगा। बस, हुजूर ही गौर फर्माएं कि मुझे इन हरकतों से, जो फर्जन्दों के मामूली तरीके के खिलाफ और सख्त मालूम होते हैं- सरजद हो जाने का बाइस क्या दारा शिकोह की खुदसरी नहीं है? इन बातों का सबब कि हुजूर कैद किये गए और मैं फर्जन्दाना खिदमत बजा लाने के लिए हुजूर की खिदमत में हाजिर न हो सका, क्या काफी नहीं है? मैं हुजूर में इल्तजा करता हूं कि मेरी इस हरकत की जाहिरी सूरत पर ख्याल न फर्माकर सिर्फ चन्द रोज बर्दाश्त करें। ज्यों ही दारा हुजूर को और मुझे तकलीफ देने के काविल न रहेगा, मैं खुद किले की तरफ दौड़ा आऊंगा और हुजूर के कैदखाने का दरवाजा अपने हाथों खोल, हाथ जोड़कर अर्ज करूंगा कि अब कुछ रोक- टोक नहीं है।”

इस प्रकार कठोरतापूर्वक जब बादशाह कैद हो गया, तो सब अमीर औरंगजेब को सलाम करके उसके दरबार में हाजिर हुए। किसी ने बेचारे वृद्ध बादशाह की नमकहलाती का ख्याल नहीं किया। इनमें बहुत- से ऐसे थे, जो बादशाह के धन से प्रतिष्ठित और धनी हुए थे। कुछ को बादशाह ने गुलामी से मुक्त करके उच्च पद दिए थे।

इस प्रकार दोनों भाई पिता का बन्दोबस्त कर और अपने मामा शाइस्तखां को आगरा की सूबेदारी सौंप, खजाने के खर्च का इन्तजाम कर, दारा की खोज में आगरा से दिल्ली रवाना हुए।

14

इस यात्रा का असल उद्देश्य कुछ और ही था। वह था मुराद का भुगतान करना। मुराद के हितैषी यह भेद पा गए और उन्होंने मुराद से कहा भी कि अपने लश्कर से दूर न जाइए, औरंगजेब दगा करेगा। जब वह खुद कहता है कि बादशाह आप हैं, तो फिर आपको क्यों राजधानी से दूर ले जाता है? उसी को दारा के पीछे जाने दें, पर वह कुरान की कसमों और प्रतिज्ञाओं के ऐसे फेर में पड़ा था कि उसकी बुद्धि में यह बात नहीं जमी।

दोनों ने कूच किया। जब मथुरा के पास पहुंचे, तो औरंगजेब ने उसे अपने यहां भोजन का न्यौता दिया। मित्रों ने समझाया कि बीमारी का बहाना करके टाल जाए, पर वह न माना। रात्रि को भोजन का संरजाम था। औरंगजेब ने मीरखां आदि को ठीक- ठाक कर रखा था।

जब मुराद पहुंचा, तो औरंगजेब ने बड़ी आवभगत की। अपने हाथ से उसके मुंह का गर्द- पसीना पोंछा। जब तक भोजन होता रहा, हंसी- मजाक की बातें होती रहीं। इसके बाद जब शराब के दौर चले, तो औरंगजेब ने उठते हुए मुस्कराकर कहा:

“हजरत को मालूम है कि मैं अपने मजहबी खयालत के बाइस इस ऐशो-निशात की सोहबत में मौजूद नहीं रह सकता, ताहम ये लोग, जो इस पुरलुत्फ जलसे में शरीक हैं, मीर साहब और दीगर मुसाहिब आपकी खिदमतगुजारी के लिए हाजिर रहेंगे।”

मुराद ने औरंगजेब की ओर उपहास-भरी दृष्टि से देखकर कहा- “बेहतर, मगर मेरे खास गवैये दिलेरा को हाजिर किया जाये।”

“हुवम तामील होगा।” कहकर औरंगजेब चला गया।

जब दारा का भाग्य सूर्य अस्त हुआ और शाहजहां और उसकी बड़ी बेटी शाहजादी जहांआरा कैद हो गई, तब किले की लौंडी-बांदियों में भय से भगदड़ मच गई जो जिसके हाथ लगा और जिधर मुंह उठा, भाग निकला। ऐसे लोगों में जहांआरा का गवैया ‘दिलेरा’ बहुत मुंहलगा था। वह अपने फन में मुगल दरबार में एक ही था और बादशाह शाहजहां भी उसे बहुत मानता था। इसलिए उसका घमण्ड बहुत बढ़ गया था। लोग भी उसकी इज्जत करते थे। परन्तु जब किले में भगदड़ मची तो यह गवैया भी बादशाह और बड़ी बेगम के दिन फिरे देखकर वहां से भागकर शाहजादा मुराद के दरबार में आ गया। मुराद ने बड़े आदर और प्रसन्नता से उसका स्वागत किया और इनाम- इकराम दिए। इसी दिलेरा की पुकार इस समय मुराद ने की थी।

दिलेरा के आने पर उसकी बहुत आवभगत की गई, शराब मंगवाई गई, दौर चलने लगे। खुशगप्पियां उड़ने लगीं। दिलेरा अमीरों की बराबरी में बैठा बढ़- बढ़कर बातें करने और अंधाधुंध शराब पीने लगा।

ज्यादा शराब पीने से उसका सिर गर्म हो गया। जब एक अमीर ने उसे प्याला दोस्ताना ढंग से भरकर दिया तो उसे हाथ से पटककर वह अपने नौकर से बोला- “मेरे लिए मेरी शराब लाओ।”

अमीर लोग गवैये की यह बेअदबी देखकर अवाक् रह गये। जिस समय उसकी शराब आयी, तो वे यह देखकर हैरान हो गए कि उसकी सुराही सोने की थी, जिसमें जवाहरात जड़े थे। ऐसी शराब और ऐसी बोतलें अफसरों तक को नसीब नहीं हो सकती थीं। दिलेरा ने एक गर्वपूर्ण दृष्टि से अमीरों को देखा और शराब पीना और उनकी खिल्ली उड़ाना शुरू कर दी। उसकी गुस्ताखी और घमंड देखकर अमीर गुरसे से जल उठे। उन्होंने उसे पकड़कर रस्सियों से बांधा और पाजामा उतरवाकर एक जलती हुई मशाल उसकी गुदा पर रख दी। वह बहुत चीखा- चिल्लाया, बार- बार माफी मांगने लगा, बाद में उसे कोड़े और ठोकरें मारकर निकाला गया।

दिलेरा की फजीहत देखकर मुराद बहुत हंसा और उसने इतनी शराब पी कि वह बेहोश हो गया। तब उसके नौकर लोग यह कहकर विदा कर दिये गये कि अब ये यहां आराम

करेंगे। जब वे चले गए तब उसके हथियार खोलकर कब्जे में कर लिए गए। इतने में औरंगजेब भी वहां आ गया और अदब-कायदे ताक में रख मुराद को ठोकरें लगाई और कहा- “तुम्हें शर्म नहीं आती, बादशाह होकर इतनी शराब पीते हो? लोग मुझे भी क्या कहेंगे, जो तुम्हें बादशाह बनाने में मदद देता है।”

इसके बाद उसने अपने आदमियों से कहा:

“इस कम्बख्त के हाथ-पांव बांधकर खिलवातखाने में ले जाओ, मगर वह पुरख्ता हथकड़ी-बेड़ियों से जकड़कर बन्द कर दिया गया। चीखना-चिल्लाना सुन उसके सेवक दौड़े, पर उनके एक नमकहराम सरदार मीर आतिशअलीखां ने उन्हें रोक दिया, जिसे लालच देकर औरंगजेब ने पहले ही वश में कर लिया था।

यह घटना तत्काल ही लश्कर में फैल गई। औरंगजेब ने सब बड़े-बड़े सरदारों को बड़े-बड़े लालच देकर राजी कर लिया और मुराद को एक बन्द जनाना अम्बारी में दिल्ली भेजकर सलीमगढ़ में कैद कर दिया, जो उस समय लाल किले के पास जमना के बीचोंबीच टापू पर था।

15

औरंगजेब दिल्ली की ओर बढ़ा। शाहजहां और मुराद को कैद करके तथा दारा को भगाकर अब उसने स्वयं को तख्त का अधिकारी बना लिया। उसने अवसर नहीं खोया और दिल्ली पहुंचकर ज्योतिषियों से गद्दी पर बैठने का मुहूर्त पूछा, जो बहुत ही निकट था। औरंगजेब इस रस्म को बहुत शान से करना चाहता था, परन्तु समय बहुत कम था, लालकिले के महलों को भी नहीं सजाया जा सकता था, दारा का भी पीछा करना था। अतः उसने लालकिले का विचार छोड़ शीघ्र ही अन्य स्थान की खोज की। करनाल के मार्ग पर हैदरपुर गांव के शालीमार बाग के मध्य में शाहजहां ने बेगम अजीजुन्निसा के नाम पर एक सुन्दर मेहराबदार बड़े-बड़े कमरों का आमोद-भवन बनवाया था, जो शीशमहल के नाम से विख्यात हुआ। लालकिले से एक सुरंग भी यहां तक आती थी। अतः नियत समय पर तख्तनशीनी का मुहूर्त इसी शीशमहल में किया गया। तख्त पर बैठने के बाद उसने आलमगीर की उपाधि ली और छः दिन बादशाह बनकर उसने लाहौर की ओर दारा से निबटने के लिए शान से कूच किया। दारा लाहौर को तेजी से जा रहा था और वहां किलेबन्दी कर सैन्य-संग्रह किया चाहता था, पर औरंगजेब इतनी तेजी से दौड़ा कि दारा को किलेबन्दी का अवकाश नहीं मिला और वह मुल्तान की ओर भाग गया।

दारा ने यहां भी भूल की। यदि वह काबुल चला जाता, तो उसे बहुत आशा थी। वहां भूतपूर्व सरदार महावतखां था, जो औरंगजेब का दोस्त भी न था। उसके अधीन दस हजार जबर्दस्त सेना थी। दारा के पास अब भी धन-रत्न की कमी न थी। वहां से ईरान और उजबक देश भी निकट थे, जहां से उसे बहुत सहायता मिल सकती थी। उसे इस ऐतिहासिक बात का ख्याल रखना उचित था कि जब-जब शेरशाह ने हुमायूं को हराया था, तब ईरान के शाह ने ही उसकी सहायता की थी, जिससे राज्य प्राप्ति हुई थी।

पर भाग्यवश उसने वहां न जाकर ठह के किले में आश्रय लिया। औरंगजेब ने जब देखा कि वह काबुल नहीं जा रहा है, तब उसका खटका मिट गया और वह मीरबाबा नामक धाय के बेटे के अधीन आठ हजार सेना छोड़कर तेजी से आगरा लौटा। उसे भय था कि जयसिंह या जसवंतसिंह या सुलेमान शिकोह ही स्वयं आकर बादशाह को छुड़ा न लें या शुजा ही न चढ़ाई कर बैठें।

ठह के दुर्ग में पहुंचकर दारा ने एक ख्वाजासारा को वहां का किलेदार नियत किया और अपना सब खजाना वहां रखा, जो बहुत था, फिर वह तीन हजार सेना को साथ लेकर सिन्धु नदी के किनारे- किनारे कच्छ होता हुआ गुजरात पहुंचा और अहमदाबाद के बाहर डेरा डाल दिया। यहां शाहनवाजखां, जो औरंगजेब का श्वसुर था, किलेदार था। वह कोई योद्धा न था, उसने किले के द्वार खोल दिए और सम्मान से दारा का सत्कार किया। दारा ने उसकी सरलता पर मुग्ध हो, अपने सब गुप्त भेद उस पर प्रकट कर दिए।

औरंगजेब ने यह सुना तो उसे चिन्ता हुई, क्योंकि अभी उसके बहुत शत्रु थे और अहमदाबाद जैसी मजबूत जगह में दारा के पांव जमने उसे स्वीकार न थे। उसे भय था कि जयसिंह और जसवंतसिंह भी उससे मिल जाएंगे। उधर उसने यह सुना था कि भारी सेना लिए सुलतान शुजा दौड़ा चला आ रहा है और इलाहाबाद तक आ चुका है। उसे यह भी खबर मिली कि गढ़वाल के राजा की मदद से सुलेमान शिकोह भी तैयारी कर रहा है। सब विपत्तियों पर विचार कर दारा का ध्यान छोड़, वह शुजा पर लपका, जो इलाहाबाद में गंगा के इस पार तक आ गया था। खुजुआ नामक गांव में दोनों सेनाएं मिलीं। यहां मीरजुमला भी उससे बहुत- सी सेना सहित आ मिला। युद्ध हुआ। इस युद्ध में जसवंतसिंह ने, जो औरंगजेब से आ मिले थे, विश्वासघात करके सहसा पीछे से आक्रमण कर, औरंगजेब का सारा खजाना और माल लूट लिया। इससे औरंगजेब की कठिनाई बढ़ गई, सेना विचलित हो गई, पर वह विचलित नहीं हुआ। इस पर शुजा ने उधर से भारी आक्रमण किया। एक तीर महावत की आंख में आकर लगने से औरंगजेब का हाथी बेकाबू हो गया। वह हाथी से उतरने ही को था कि मीरजुमला ने कहा- “हजरत, यह दकन नहीं है, क्या गजब करते हैं।”

मीरजुमला ने औरंगजेब को हाथी से नहीं उतरने दिया। औरंगजेब प्रतिक्षण शत्रु के चंगुल में फंसने की आशंका कर रहा था। उधर शुजा शीघ्र ही उसे गिरफ्तार करने को हाथी से उतरा। बस, उसकी वही दिशा हुई, जो दारा की हुई थी। उसके हाथी को खाली देख सैनिकों ने उसके मरने का सन्देह किया और भाग निकले।

औरंगजेब की विजय देख, जसवंतसिंह आगरा लौट आए। वहां यह खबर उड़ी कि औरंगजेब और मीरजुमला पकड़े गए तथा शुजा आगरा की ओर बढ़ रहा है। शाइस्तखां इन बातों से इतना घबराया कि विष पीने लगा, पर स्त्रियों ने प्याला उसके हाथ से छीन लिया। जसवंतसिंह चेष्टा करते, तो शाहजहां को कैद से छुड़ा सकते थे, पर वे स्थिति देखकर आगरा में ठहरना ठीक न समझ मारवाड़ को लौट आए।

उधर औरंगजेब सोच रहा था कि न जाने आगरा में जसवंतसिंह ने क्या किया होगा।

वह तेजी से लौट रहा था, पर उसने सुना, शुजा अब भी इलाहाबाद में पांव जमा रहा है, उसके पास बहुत धन है और वहां के राजा उसके सहायक हैं।

अब औरंगजेब को सिर्फ दो आदमियों पर भरोसा था। एक अपने पुत्र मुहम्मद सुलतान पर, दूसरे मीरजुमला पर_ लेकिन वह दोनों ही से भय खाता और सन्देह करता था। उसने दोनों को दूर करने का उपाय किया। मीरजुमला को बड़ी सेना देकर शुजा पर भेजा और कहा- “बंगाल के जरखेज सूबे की हुकूमत आप और आपके खानदान में रहेगी और जब आप शुजा पर फतह पा लेंगे, तब अमीरुलउमरा का सबसे बड़ा खिताब भी आपको दिया जाएगा”

इसके बाद उसने मुहम्मद सुलतान से कहा- “बेटे, तुम मेरे सबसे बड़े पुत्र हो और अपने ही काम पर जाते हो। तुमने बड़े- बड़े काम किए हैं, पर याद रखो, हमारे भारी बैरी शुजा को पकड़कर जब तक न ले आओ, सब काम अधूरे हैं”

इसके बाद उसने दोनों को बहुत- सी भेंटें दीं, फिर उसने चालाकी से मुहम्मद सुलतान की बेगमों और मीरजुमला के पुत्र मोहम्मद अमीन को अपने पास ही रोक लिया।

मीरजुला अद्भुत प्रतिभा का धनी था। शुजा उसे रोकने की बड़ी- बड़ी मोरचेबन्दी कर रहा था। वह गंगा के घाटों को सावधानी से रोके हुए बैठा था। सहसा उसे समाचार मिला कि जो सेना आ रही है, वह तो दिखावा मात्र है। मीरजुमला तो आस- पास के राजाओं से संधि करके राजमहल पहुंच भी गया और बंगाल की ओर उसके लौटने का मार्ग भी बन्द है। यह सुनकर शुजा हतबुद्धि रह गया। वह बड़ी कठिनाइयों से मुंगेर और राजमहल के बीच पेचीले चक्कर वाली गंगा के पार उतर राजमहल पहुंचा और मीरजुमला से लोहा लिया तथा पांच- सात दिन के युद्ध के बाद भाग खड़ा हुआ। बरसात आ लगी थी मीरजुमला वर्षा ऋतु राजमहल में काटने को ठहर गया। मुहम्मद सुलतान भी उसके साथ था। शीघ्र ही दोनों में झगड़ा हो गया। मुहम्मद सुलतान अपने को समस्त सेना का स्वामी और मीरजुमला को तुच्छ समझने लगा। यह खबर औरंगजेब को मिली तो वह बहुत नाराज हुआ। इस पर वह भयभीत होकर चुपचाप यहां से चलकर शुजा से जा मिला, पर उसने उस पर विश्वास ही नहीं किया। तब वह बिगड़कर वहां से भी चला और इधर- उधर घूमकर फिर मीरजुमला से आ मिला। मीरजुमला ने उसे क्षमा करके रख लिया, पर औरंगजेब ने उसे दिल्ली आने का हुक्म दिया और ज्योंही वह गंगा के पार उतरा कि एक सैनिक टुकड़ी ने उसे गिरफ्तार कर लिया और बन्द अम्बारी में बन्द कर ग्वालियर दुर्ग में बन्द कर दिया, जहां उसकी समस्त आयु व्यतीत हुई।

उधर, जसवन्तसिंह ने लूट के धन से एक भारी सेना संग्रह कर, दारा को लिखा कि आगरा को कूच कर दें, मैं राह में आपसे आ मिलूंगा। दारा ने भी भारी सेना संग्रह कर ली थी और कूच कर दिया, पर राजा जयसिंह ने समझा-बुझाकर जसवन्तसिंह को इस झमेले में पड़ने से रोक दिया। उधर औरंगजेब ने दारा को अजमेर ही में जा रोका, फिर युद्ध हुआ, परन्तु विश्वासघातियों मूर्खताओं के कारण अन्त में दारा को सब सामग्री छोड़, बाल- बच्चों सहित भागना पड़ा।

वह सिन्धु नदी पार करके ईरान जाने का विचार करने लगा, परन्तु उसकी बेगम ने

एक निर्बल और वाहियात- सी बात कहकर उसका यह विचार भंग कर दिया।

बेगम ने कहा- “यदि आप ईरान जाने का विचार करेंगे तो खूब समझ लीजिए कि मुझको और मेरी बेटी को शाह ईरान की लौंडिया बनना पड़ेगा, जो ऐसी बेइज्जती है कि हमारे खानदान में किसी को गंवारा न होगी।” दारा और बेगम दोनों भूल गए कि हुमायूँ जब ऐसी ही आपदाओं में पड़कर ईरान गया था और उसकी बेगम भी उसके साथ थी, तब उन दोनों के साथ वहां कोई अनुचित व्यवहार नहीं हुआ था, बल्कि बहुत ही सम्मान और शिष्टाचार से स्वागत हुआ था।

अब दारा ने जीवनखां पठान के यहां जाना उचित समझा। वह एक प्रसिद्ध और बलवान् सरदार था और उसका स्थान भी बहुत दूर नहीं था। दारा के मन में जीवनखां की सहायता का ध्यान आने का कारण यह था कि उसके विद्रोह मचाने और दुष्टता करने के कारण शाहजहां ने दो बार उसे हाथी के पांवों के नीचे कुचलवा डालने की आज्ञा दी, पर दोनों ही बार दारा के कहने-सुनने से वह छूट गया था। दारा का इस समय उसके पास जाने का मतलब यह था कि उससे कुछ सैनिक सहायता लेकर वह मीरबाबा को ठह के दुर्ग से हटा सके और वहां के किलेदार से अपना खजाना लेकर कन्धार चला जाए, जहां से सहज ही में काबुल पहुंच जाए। उसे विश्वास था कि उसके वहां पहुंच जाने पर काबुल का सूबेदार महावत खां बिना कुछ आगा- पीछा किये बड़े प्रेम से उसकी सहायता करने को तैयार हो जाएगा, क्योंकि काबुल की सूबेदारी उसे इसी की मदद से मिली थी।

परन्तु उसकी स्त्रियां उसका यह विचार सुनकर बहुत ही घबराईं। बेगम और उसका पुत्र सिफरशिकोह उसके पैरों पर पड़ गए और प्रार्थना करने लगे कि आप उधर का विचार छोड़ दें। यह पठान एक प्रसिद्ध डाकू लुटेरा हैं, ऐसे आदमी पर भरोसा करना मृत्यु को बुलाना है। उन्होंने यह भी समझाया कि ठह का घिराव उठा देने की कुछ ऐसी आवश्यकता भी नहीं है। इस लड़ाई-झगड़े में हाथ डाले बिना भी आप काबुल के मार्ग पर चल सकते हैं। मीरबाबा भी ठह का घेरा छोड़कर आपका रास्ता नहीं रोकेगा।

परन्तु दारा की उल्टी समझ सदा उसको सीधे मार्ग से भटका देती थी। उसे उनकी बात बिलकुल नहीं जंची। उसने कहा कि काबुल की यात्रा बहुत ही कठिन और भयानक है और जिस व्यक्ति के मैंने प्राण बचाए हैं, वह इस समय मेरी सहायता करेगा। आखिर बहुत समझाने और प्रार्थना किए जाने पर भी वह काबुल न जाकर जीवनखां पठान के यहां चला गया। जीवनखां यह समझता रहा कि दारा के साथ बहुत बड़ी सेना आती होगी। यह समझकर उसने उसके साथ बड़े सम्मान का बर्ताव किया, उसके सिपाहियों को सादर स्थान दिया और उसके आराम के प्रबन्ध कर देने की अपने आदमियों को आज्ञा दी, परन्तु जब उसे मालूम हुआ कि दारा के साथ दो- तीन सौ से अधिक आदमी नहीं हैं, तब तुरन्त ही उसके भाव बदल गए। दारा के साथ अशर्कियों से लड़े हुए कई खच्चरों को देखकर उसे लालच आ गया। उसने एक रात को बहुत से लड़ने- भिड़ने वाले आदमी इकट्ठा करके पहले तो दारा के रुपये- पैसे और स्त्रियों के आभूषण छीनकर अपने अधिकार में कर लिए, पीछे दारा और सिफरशिकोह पर आक्रमण किया और जिन लोगों ने उनको बचाना चाहा, उन्हें मार डाला। इसके बाद दारा को बांधकर उसे एक हाथी पर

बैठाकर और एक वधिक को इसलिए पीछे बैठा दिया कि यदि वह अथवा उसका कोई और आदमी कुछ भी हाथ- पांव हिलाए, तो वधिक उसी क्षण उसका काम तमाम कर दे। इस प्रकार अप्रतिष्ठा के साथ उसने दारा को लाकर ठह में मीरबाबा के सुपुर्द कर दिया। मीरबाबा ने आज्ञा दी कि उसे लाहौर होते हुए दिल्ली ले जाया जाए।

जब भाग्यहीन दारा बन्दी बनकर दिल्ली के निकट पहुंचा, तब औरंगजेब ने अपने दरबारियों से इस बात की राय ली कि ग्वालियर के दुर्ग में कैद करने से पहले उसे दिल्ली घुमाना चाहिए या नहीं? इस पर कुछ लोगों ने तो यह उत्तर दिया कि ऐसा करना उचित नहीं, क्योंकि पहले तो यह बात राज- कुटुम्ब की प्रतिष्ठा के विपरीत है, दूसरे इसमें बलवा हो जाने का डर है और कुछ आश्चर्य नहीं कि लोग उसे छुड़ा लें, परन्तु कुछ लोगों की यह राय हुई कि उसे अवश्य नगर में घुमाया जाए, ताकि लोगों को भय हो और उन पर बादशाह का रौब छा जाए तथा जिन लोगों को अभी तक उसके पकड़े जाने में सन्देह बना हुआ है, उनका सन्देह मिट जाए और उसके छिपे पक्षपातियों की आशाएं भंग हो जाएं।

अन्त में औरंगजेब ने भी इसी राय को उचित समझा और दारा को नगर में घुमाने की आज्ञा दी। अभाग्य दारा और उसका पुत्र सिफरशिकोह दोनों एक हाथी पर बैठाये गए और नगर-पर्यटन कराया गया, परन्तु वह सिंहलद्वीप का पेरु हाथी नहीं था, जिस पर दारा बहुत बढ़िया सामग्रियों से सजकर बैठा करता था और जो बहुमूल्य झूल तथा स्वर्ण-आभूषणों से ढका रहता था। यह एक बहुत सडियल और गन्दा जानवर था। स्वयं दारा के गले में भी वह बड़े- बड़े मोतियों की माला, शरीर पर वह जरबफ़्त का कबा और सिर पर वह पगड़ी नहीं थी, जो भारतवर्ष के बादशाह और उनके शाहजादे पहना करते थे। इनके स्थान पर पिता- पुत्र दोनों बहुत ही मोटे वस्त्र पहने हुए थे। इसी दशा में दोनों शहर के बाजारों में फिराये गए।

स्थान- स्थान पर खड़े होकर लोग दारा के दुर्भाग्य पर हाथ मल रहे थे। सब ओर से रोने- चिल्लाने के शब्द सुन पड़ते थे। स्त्री- पुरुष और बच्चे इस प्रकार चिल्लाते थे, मानो उन पर बहुत ही भयानक विपत्ति आ पड़ी हो। दुष्ट जीवनस्वां घोड़े पर दारा के साथ था। चारों ओर उस पर गालियों की बौछार पड़ रही थी, बल्कि कई एक फकीरों और गरीब आदमियों ने तो उस पाजी पठान पर पत्थर भी फेंके। परन्तु दारा को छुड़ाने का साहस किसी को न हुआ।

जब सवारी दिल्ली नगर में सर्वत्र घूम चुकी, तब अभाग्य कैदी अपने ही एक बाग में, जिसका नाम हैदराबाद था, कैद कर दिया गया। औरंगजेब ने एक सभा की और राय ली कि कैदी को ग्वालियर भेज देना चाहिए या वध कर डालना चाहिए। इस पर किसी- किसी की तो यह सम्पत्ति हुई कि वध कर डालने की इस समय कुछ विशेष आवश्यकता नहीं है। यदि पहले और रक्षा का यथ्ाष्ट प्रबन्ध हो सके तो उसे ग्वालियर भेज दिया जाए, परन्तु अन्त में अधिक लोगों की राय से यही निश्चित हुआ कि उसका वध किया जाए और उसके पुत्र सिफरशिकोह को ग्वालियर भेज दिया जाए। इस अवसर पर रेशनआरा बेगम ने भी अपना हार्दिक बैर अच्छी तरह प्रकट किया। वह बराबर औरंगजेब को यह अमानुषिक कार्य करने के लिए उभारती रही। खलीलुल्लाखां और शाइस्तखां ने भी जो दारा के पुराने शत्रु थे, इसी बात पर विशेष जोर दिया। तकरूबखां नामक ईरानी ने भी कहा कि दारा को ज़िन्दा छोड़ना हर्गिज मुनासिब नहीं है। सल्तनत की

सलामती और हिफाजत इसी में हैं कि फौरन उसकी गर्दन मारी जाए, क्योंकि वह बेदीन और काफिर हैं। निदान, इस निर्दयतापूर्ण रक्तपात के लिए नजीरखां नामक एक गुलाम, जो शाहजहां के यहां पला था और किसी कारण से दारा से असंतुष्ट था, चुना गया।

16

मुराद कैद में था, पर उसके प्रशंसक अभी थे। औरंगजेब ने उसे भी सलीमगढ़ से हटाकर ग्वालियर के किले में भिजवा दिया। एक दिन अहमदाबाद से सैयद के पुत्रों ने आकर औरंगजेब से नालिश की कि मुराद ने उनके पिता को बिना वजह कत्ल करा डाला था, सो हमें अब मुराद का सिर मिलना चाहिए। इसका किसी ने विरोध नहीं किया और उन्हें मुराद का सिर काट लेने की आज्ञा दे दी गई।

अपने को सबसे बड़ा बहादुर और बादशाह समझने वाले बेवकूफ और बदनसीब मुराद को इस किले में कैद हुए तीन साल बीत गए थे। एक दिन चार तरुण नंगी तलवारें लेकर उसे चारों ओर से घेरकर खड़े हो गए। मुराद साक्षात् मृत्यु को सामने देख एक दम उछलकर खड़ा हो गया। उसने इधर-उधर अपनी तलवार टटोली, पर तलवार वहां कहां थी। इसी समय एक सैयद ने बढ़कर उस पर तलवार का वार करते हुए कहा- “निर्दोष सैयद के खून का बदला है।”

तलवार मोढ़े पर पड़ी? और मुराद दर्द से कराह उठा। खून का फव्वारा बह चला। इसी समय चारों सैयद उस पर टूट पड़े और उसी जगह उसके टुकड़े-टुकड़े कर डाले।

17

अब शुजा रह गया। उसे मीरजुमला ने किसी योग्य न छोड़ा था। औरंगजेब बराबर उसकी मदद में सेना भेज रहा था। अन्त में वह ढाके की ओर भाग गया, जो समुद्र के किनारे बंगाल का अंतिम नगर है। अब कहां जाय? उसने अराकान के राजा की शरण ली। राजा ने उसे आश्रय दिया, पर जहाज नहीं दिया। अब भी उसके पास बहुत धन था। शुजा को भय हुआ कि कहीं मैं लुट न जाऊं। राजा ने उससे प्रस्ताव किया कि वह अपनी लड़की उसे ब्याह दे, पर शुजा ने स्वीकार नहीं किया। उल्टे उसने एक षड्यन्त्र रचा, जिसमें बहुत-से पुर्तगीज लुटेरे और राजा के रिश्तेदार भी शामिल थे। इसका अभिप्राय यह था कि महल पर आक्रमण करके राजा और उसके परिवार को कत्ल कर दिया जाए। पर भेद खुल गया और उसने पेगू को भाग जाना चाहा, पर रास्ता ऐसा विकट था कि यह सम्भव नहीं हो सका। अन्ततः वह परिवार सहित पकड़ा गया और मार डाला गया। उसकी लड़की से राजा ने विवाह कर लिया। शेष परिवार के लोग कैद कर लिये गए, पर उसके पुत्र सुलतान बाकी ने फिर षड्यन्त्र रचा और फिर भण्डाफोड़ हुआ। इस बार शुजा का परिवार भी कत्ल कर दिया गया जिसमें वह लड़की भी थी, जिससे राजा ने विवाह किया था तथा जो गर्भवती थी। सबके सिर कुल्हाड़े से काटे गए।

अब अकेला औरंगजेब बिना प्रतिद्वन्द्वी के महान साम्राज्य और सत्ता का स्वामी

बनकर दिल्ली के तालकिले की चौखट का स्वामी बना और किले के दीवानेखास में तख्तेताऊस पर बैठकर तख्तेनशीनी की।

तख्त पर बैठते ही उसने शराब के विरुद्ध हुक्म जारी किया। वह जानता था कि देश में शराब की खूब बिक्री है। जहांगीर के जमाने से ही उसका प्रचार बढ़ गया था। शाहजहां के जमाने में भी दारा की देखा- देखी लोग उसे खूब पीने लगे थे। शाहजहां ने प्रजा के आनन्द में विशेष दखल नहीं दिया।

इसके बाद उसने हुक्म दिया कि कोई मुसलमान चार अंगुल से ज्यादा दाढ़ी न रखे। इसके लिए एक अफसर नियुक्त किया, जो अपने सिपाहियों के साथ लोगों की दाढ़ी नापे और जिसकी दाढ़ी बड़ी देखे, उसे काट दे और मूंछों को काटकर साफ कर दे।

उसने गाने-बजाने के विरुद्ध भी हुक्म दिया कि जहां गाने-बजाने की आवाज आए, घुसकर बाजों को तोड़ डालो। इस पर कुछ गवैयों ने मिलकर एक तरकीब की। जब बादशाह जुमे की नमाज को जा रहा था, तब पांच हजार आदमी तीस-पैंतीस जनाजे बनाकर खूब रोते-पीटते, चिल्लाते उधर से निकले। बादशाह ने देखकर पूछा- “यह क्या हैं?” तब उन्होंने हाजिर होकर कहा- “हुजूर, शायरी मर गई है, उसी का जनाजा है।” बादशाह ने हुक्म दिया कि उसे इतना गहरा गाड़ो कि फिर न निकल सके। अब उसने रंडियों की शादी करने का हुक्म दिया। शाहजहां के जमाने में उनकी बड़ी वृद्धि हो गई थी। जो रंडी शादी न करती थी, उसे देश-निकाते की सजा थी।

18

मुगल सल्तनत में फकीरों की दुष्टता का बड़ा जोर था। वे लोग दुष्ट, जिद्दी तथा गुस्ताख होते थे। वे लोगों को अन्धविश्वासों में खूब फंसाते थे। जब लोग इनके पास जाते, कुछ न कुछ चढ़ावा साथ ले जाते थे। वे उन्हें गण्डे- तावीज देते तथा औरतों को मौका पाकर फुसलाते थे। उनके घर में सैकड़ों दासियां और कुटनियां होती थीं, जो बड़े घर की स्त्रियों को फुसलाया करती थीं और इधर-उधर खबरें उन्हें देती थीं, जिन्हें बताकर ये पाखंडी औलिया बन जाते थे।

इनमें से एक प्रसिद्ध औलिया की गर्दन भी काटी गई, उसका नाम शाह सैयद सरमद था। वे एक ईश्वरवादी साधु थे। एक जौहरी के पुत्र अमीचन्द से उन्हें प्रेम हो गया था। उसी आवेश में वे उसे खुदा कहा करते थे। वे बहुधा नंगे रहते थे। उस जमाने में कबी नाम का दिल्ली का काजी था। उसने औरंगजेब से शिकायत की कि सरमद नाम का एक शख्स शहर में नंगा फिरता है, वह कलमा नहीं पढ़ता और अमीचन्द को खुदा कहता है। औरंगजेब ने तुरन्त सिपाहियों द्वारा उसे गिरफ्तार कराया और अपने दरबार में बुलाकर उसे प्रश्न किए।

औरंगजेब ने पूछा- तेरा खुदा कौन है ऐ सरमद इस आलम में?

सरमद ने उत्तर दिया- मैं नहीं जानता कि अमीचन्द के सिवा कोई और है?

ऐ सरमद, कपड़े क्यों नहीं पहनता?

‘जिस शरूख ने तुझे मुल्क और बादशाहत दी और मुझको तमाम सामान परेशानी के दिये, उसी शरूख ने उसको लिबास पहनाया, जिसमें कि ऐब देखा और बेऐबों को नंगेपन का लिबास दिया।’

‘सरमद, कलमा क्यों नहीं पढ़ता?’

‘किस तरह पढ़े, क्योंकि मेरा शैतान जबर्दस्त है।’

बादशाह इस बातचीत से बहुत नाराज हुआ। उसने हुक्म दिया कि यदि वह अपने विचार न बदले, तो गर्दन काट ली जाए। तमाम दरबारियों ने भी समझाया कि वह उन तीन बातों से तौबा कर ले, लेकिन सरमद ने साफ कह दिया कि मैं अपने में कोई ऐब या चोरी- कपट नहीं देखता कि तौबा करूं। मेरा आत्मविश्वास मेरे साथ है और वह पवित्र है, जो किसी मार्ग में बाधा नहीं डालता। मैं तौबा नहीं करूंगा।

इसके बाद जल्लाद को बुलाया गया। उस जमाने में जल्लाद सुर्ख पोशाक में आया करते थे। सरमद ने जल्लाद को सुर्ख कपड़ों में आते देखा, तो बहुत हंसा और मौज में आकर उसने यह शेर पढ़ा- ‘‘जिस रंग के तेरा जी चाहे कपड़े पहन ले, मैं तो तेरे कद को खूबसूरती से तुझे पहचानता हूँ।’

जल्लाद ने बढ़कर एक हाथ मारा और उसकी गर्दन से सिर अलग हो गया। फिर बजाय जमीन पर गिरने के एक नेजा ऊंचा हो गया और उस वक्त भी एक शेर उसके मुंह से निकला- ‘सिर मेरा उस माशूक ने जुदा किया, जो मेरा बहुत दोस्त था, चलो, किर्रसा खत्म हुआ, वरना बड़ी सिरदर्दी थी।’

अब शाहजहां का ईश्वरभक्ति की ओर झुकाव हुआ, मुल्ला उसके पास जाकर धर्म-पुस्तकें सुनाया करते थे। घोड़े, बाघ आदि कई प्रकार के शिकारी जानवरों के मंगाने और हिरनों तथा मेढ़ों की लड़ाई की भी परवानगी मिल गई थी। इस प्रकार औरंगजेब हर तरह से बूढ़े बादशाह की दिलजोई करता रहता था। वह अधिकता से उसके पास भेंट की चीजें भेजता रहता था और राजनीति के विषय में उसकी सलाह लेता रहता था। उसके पत्रों से, जो वह समय- समय पर पिता को लिखता रहता था, श्रद्धा और आज्ञाकारिता टपकती थी। इन बातों से शाहजहां का क्रोध ठण्डा पड़ गया और वह औरंगजेब से पत्र- व्यवहार करने लगा। शाहजहां ने उन रत्नों को भी स्वयं उसके पास पहुंचा दिया, जिनके विषय में पहले उसने कहा था कि यदि मांगोगे, तो इनको कूटकर चूर- चूरकर दूंगा। अन्त में उसने विद्रोही पुत्र को क्षमा कर दिया और उसके लिए ईश्वर से प्रार्थना करने लगा।

परन्तु वास्तव में औरंगजेब के मन में चोर तो बना ही था। वह भीतर से चाक- चौबन्द बना रहता था। एक बार शाहजहां ने उसे पुराने कायदे- कानून पर चलने की हिदायत दी, तो उसने अपने पिता को उपदेशात्मक पत्र लिखा:

“क्या हुजूर यह चाहते हैं कि मैं सरख्ती के साथ पुरानी रस्मों का पाबंद रहूं और जो कोई नौकर-चाकर मर जाए, उसकी जायदाद जब्त कर लूं? शाहाने मुगलिया का यह दस्तूर रखा है कि अपने किसी अमीर या दौलतमन्द महाजन के मरने के बाद, बल्कि बाज औकात तो दम निकल जाने से पहले उसके सब माल-असबाब का पता लगाते थे और जब तक उसके नौकर-चाकर कुल माल और दौलत, बल्कि अदना-अदना जेवर भी न बतलाएं, तब तक उनके साथ मार-पीट होती और वे कैद किये जाते थे। गोकि यह दस्तूर बेशक फायदेमंद है, मगर जो नाइंसाफी और बेहरमी इसमें है, उससे कौन इनकार कर सकता है? अगर हर एक अमीर नेकनामखां जैसा मामला करे या कोई और उस महाजन की तरह अपने मालिक की दौलत पोशीदा कर ले, तो उसका हक-व-जानिब है या नहीं?”

“हुजूर के खौफ से मैं बहुत डरता हूं और यह नहीं चाहता कि हुजूर मेरे तौर-तरीके की निखत गलतफहमी फरमायें। हुजूर फरमाते हैं कि तख्तनशीनी ने मुझे खुदराय और मगरूर बना दिया, लेकिन यह ख्याल गलत है। चालीस बरस के तजरबे से आप खुद ही ख्याल फरमा सकते हैं कि ताजशाही किस कदर गिरादर चीज है और बादशाह जब दरबार से उठता है, तब किस कदर फिक्कें उसके दिल को गमगीन और दर्दमन्द बनाए रहती हैं। हमारे जद्दे-अमजद जलालुद्दीन अकबर ने इस गरज से कि उसकी औलाद दानाई, नर्मी और तमीज के साथ सल्तनत करे, अपने अहले सल्तनत की तवारीख में अमीर तैमूर का जिक्र बतौर नमूना लिखकर औलाद को उसकी तरफ तवज्जह दिलवाई थी।”

19

इसी बीच में औरंगजेब बीमार पड़ा। उसे बारम्बार ज्वर चढ़ता और वह बेहोश हो जाता था। वैद्य-हकीम निराश हो गए और दरबार में घबराहट फैल गई कि औरंगजेब मर गया है। यह भी अफवाह जोर कर गई कि महाराज जसवन्तसिंह और महावतखां शाहजहां को कैद से छुड़ाने की चिन्ता कर रहे हैं।

यह सुनते ही औरंगजेब के छोटे बेटे सुलतान मुअज्जम ने अमीरों को घूस देकर अपने पक्ष में कर लिया। यहां तक कि एक दिन उसने रात को राजा जयसिंह के पास जाकर बहुत-कुछ खुशामद की। उधर रोशनआरा ने भी बहुत-से अमीरों को मिला लिया, जिनमें तोपखाने का प्रधान अधिकारी फिदाअली मीर आतिश भी था। उसकी चेष्टा अपने संरक्षण में अकबर को गद्दी पर बैठाने की थी, जिसकी अवस्था सात-आठ वर्ष ही की थी।

पर सब लोग जानते थे कि शाहजहां को कैद से बाहर निकालना कुद्द शेर को निकालना है। सब दरबारी उसके छूटने की चिन्ता से घबरा रहे थे। सबसे अधिक भय एतबारखां को था, जो कैदी बादशाह से निर्दयता का व्यवहार करता था।

औरंगजेब बीमारी की हालत में इन घटनाओं से बेखबर नहीं था। होश में आते ही वह मुअज्जम को कहता कि यदि मैं मर जाऊं, तो बादशाह को कैद से छोड़ देना, पर एतबारखां को

बारम्बार लिखता था कि खबरदार अपने काम में मुस्तैद रहना।

बीमारी के पांचवे दिन औरंगजेब ने साहस करके कहा- “हमको दरबार में ले चलो।” इसका अभिप्राय यह था कि उसके मरने की जो अफवाह है, वह मिट जाए। इस प्रकार वह उसी दशा में सातवें, नवें और दसवें दिन भी दरबार में गया और कुछ बड़े- बड़े अमीरों को पास बुला भेजा। इसके बाद वह स्वस्थ होने लगा। स्वस्थ होने पर उसने दारा की पुत्री को शाहजहां के पास से मांगकर अपने बेटे अकबर से उसकी शादी की इच्छा प्रकट की, पर शाहजहां और जहांआरा ने धृणापूर्वक इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया।

आरोग्य- लाभ होने पर हकीमों ने उसे जलवायु बदलने के लिए कश्मीर जाने की सलाह दी। पर वह डरता था कि कहीं बूढ़ा शाहजहां फिर गद्दी पर न बैठ जाए। उसने कैद की सख्तियां बढ़ा दीं। उसने वह खिड़की भी बंद करवा दी, जो जमुना की तरफ थी और जिससे शाहजहां बाहर का नजारा देखता और हवा खाता रहता था। उसने खिड़की के नीचे बन्दूकची नियत कर दिए थे कि यदि शाहजहां उधर को झुके तो गोली मार दें। वहां का सब सामान उठा लिया गया और भारी शोर किया जाने लगा, पर शाहजहां चुपचाप सब सहकर नाच- रंग और गाने- बजाने में मस्त रहने का ढोंग करने लगा। औरंगजेब ने यह सुनकर उसे जहर देने का इरादा किया और मुकर्रमखां को इस काम के लिए लिखा, जो शाहजहां का हकीम और भक्त था।

उसने हकीम को लिखा कि जो चीज ख्वाजासरा फहीम आपको देगा, वह शाहजहां को खिला दें, वरना जिन्दगी से हाथ धो लीजिए। उसने जवाब दिया- “बादशाह ने जो हुक्म दिया है, मैं उससे ज्यादा अच्छा काम करूंगा। मेरे लिए उचित नहीं कि जिसने विश्वास करके अपना शरीर मुझे सुपुर्द किया है, उसी से दगा करूं।”

जहर हकीम ने स्वयं खा लिया और मर गया। औरंगजेब ने यह सुना तो वह लज्जित हुआ और बादशाह को मारने के दूसरे उपाय सोचने लगा, पर गर्मी निकट आ गई थी और उसे कश्मीर जाना जरूरी था।

अन्त में उसने कश्मीर की यात्रा की। इस यात्रा में दो लाख आदमी उसके साथ थे। इस यात्रा में अपरिमित व्यय हुआ। दो वर्ष में वह इस यात्रा से लौटा, परन्तु एक दिन के लिए भी उसके नित्य- नियमित दरबार आदि में अन्तर नहीं आया।

आठ वर्ष कैद में रहकर शाहजहां की मृत्यु हुई। कन्नौज का विद्वान सैयद मुहम्मद, जो उसका गुरु और शिक्षक था, अन्त तक उसकी सेवा में रहा। उसकी पुत्री जहांआरा भी सब सुखों को त्याग उसके साथ रही। मरने से पूर्व उसने वसीयत लिखी और अपने कुटुम्बियों और नौकरों को इनाम दिए। शाहजहां के कैद होने के दिन से ही मुसम्मन बुर्ज के नीचे सीढ़ियों का दरवाजा ईंटों से चिनकर बन्द कर दिया गया था। वह दरवाजा इस समय तोड़कर उसी राह से उसका जनाजा ताज से पहुंचा दिया गया और मुमताज की कब्र के पास दफना दिया गया।

पिता के मरने का ढोंगी औरंगजेब ने बड़ा शोक किया। वह तुरन्त आगरा आया। वहां पहुंचने पर जहांआरा ने उसका बड़ी धूमधाम से स्वागत किया। कमख्वाब के थान लटकाकर

बादशाही मस्जिद सजाई गई और इसी प्रकार वह मकान भी, जहां औरंगजेब का ठहरने का इरादा था। औरंगजेब महल में पहुंचा, तो जहांआरा ने एक बड़ा- सा सोने का थाल जवाहरात से भरकर बादशाह की नजर किया। उसका यह सत्कार देखकर औरंगजेब का मन पसीज गया। उसने बहन की सब पुरानी बातें भुला दीं और कृपा तथा उदारता का व्यवहार उसके साथ किया।

20

जहां औरंगजेब ने इतने प्रबल शत्रु चारों तरफ पैदा कर लिए थे, वहां वह अपने मित्रों और सहायकों को भी सन्देह और भय की दृष्टि से देखता रहा। उसने अपने वंश का मूलोच्छेद किया, अपने खास वीर पुत्र को आजन्म ग्वालियर के दुर्ग में कैद किया। अपने वीर और प्रबल सामंत जयसिंह और जसवन्तसिंह को भी जहर खिलाया।

उसे मीरजुमला का भय सदा बना रहता था। वह बंगाल में निष्कण्टक राज्य कर रहा था, पर उसने उसे खाली न बैठने दिया और आसाम पर चढ़ाई करने की आज्ञा दी। उसका मतलब यही था कि वह दूरस्थ और अपरिचित देश में जाकर मरे। उसके बाल- बच्चे उसने अब तक अपने काबू में रख छोड़े थे। आराम की मुहिम से वह बहुत- सी जान- माल की हानि कराके लौटा। उसका स्वास्थ्य इतना गिर गया कि वह बंगाल लौटने के कुछ दिन बाद ही मर गया। उसके मरने की सूचना पाकर औरंगजेब ने मीरजुमला के पुत्र से कहा- “तुम अपने स्नेही पिता के लिए शोक करते हो और मैं अपने शक्तिशाली और अति भयानक मित्र के लिए दुःखित हूँ”

शाइस्तखां ने औरंगजेब की बहुत सहायता की थी। उसी की बदौलत सूबेदार वह उच्च पद पर पहुंचा था। उसे खगुआ के युद्ध से पूर्व आगरा का सूबेदार नियत किया गया। फिर वह दक्षिण का सूबेदार बनाया गया। फिर मीरजुमला की मृत्यु के बाद बंगाल का हाकिम बना दिया गया। अमीरउमरा की पदवी उसे प्रदान की गई और अराकान के भयानक डाकू राजा से निरन्तर लड़ने और उदण्ड पुर्तगीज लुटेरों से टक्कर लेने को छोड़ दिया गया। शाइस्तखां ने बड़ी हिम्मत, मुस्तैदी और वीरता से इन डाकूओं को वश में किया और बंगाल के निचले प्रदेशों को निष्कण्टक कर दिया।

बादशाह ने अपने बड़े पुत्र मुहम्मद सुलतान को तो ग्वालियर के किले में घुल- घुलकर मरने को डाल दिया था, पर एक बार छोटे बेटे मुअज्जम को भी शिकार के बहाने ऐसे खतरे में भेज दिया, जहां से वह बड़ी ही बहादुरी से जान बचाकर आया। इस पर औरंगजेब ने उसे दक्षिण का सूबेदार बनाकर वहां भेजा।

महावतखां, जो प्राचीन योद्धा था और जिसने शाहजहां पर बड़े- बड़े एहसान किए थे, काबुल से बुला लिया गया। उसने बहुत- सी कीमती भेंट शाहजादी रेशमआरा को तथा सोलह हजार आशर्फियां और बहुत- से ईरानी ऊंट तथा घोड़े औरंगजेब को भेंट किए। इस पर बादशाह कुछ सन्तुष्ट हुआ और उसे भी दक्षिण भेज दिया गया। इसके सिवा अमीरखां को काबुल, खलीलुल्ला को लाहौर, मीरबाबा को इलाहाबाद, जुल्फिकारखां को खगुआ भेज दिया। फजिलखां, जिसकी

योग्य सलाहों से बादशाह को बहुत लाभ हुआ था, प्रधान खानसामा बनाया गया। दिल्ली की सूबेदारी दानिशमन्दखां को दी गई। दयानतखां को कश्मीर की सूबेदारी दी गई।

इस प्रकार समस्त हिन्दू- सरदार बेदखल हो गए। इन सब कारणों से औरंगजेब के समय में हिन्दुस्तान में तीन प्रबल विजयिनी हिन्दू- शक्तियां उदय हो गईं। दक्षिण में मराठे, जिनके नायक शिवाजी थे, पश्चिम में सिक्ख, जिनके नायक गुरु गोविन्दसिंह थे और राजपूताना में राजपूत, जिनके नायक मेवाड़ा के अधिपति थे।

जिस समय औरंगजेब तख्त पर बैठा, उस समय मुगल- साम्राज्य का आदि अन्त न था। यदि यह कहें कि उस समय संसार- भर में ऐसा प्रबल साम्राज्य न था, तो अत्युक्ति नहीं पर वह साम्राज्य औरंगजेब के पूर्वजों ने हिन्दू राजाओं के सहयोग से और हिन्दू प्रजा को प्रसन्न करके संगठित किया था। वे जानते थे कि कोई भी जाति बल या घृणा से कभी कब्जे में नहीं आ सकती। औरंगजेब के पूर्वजों ने पठानों की सैकड़ों वर्ष की विफल और अथक चेष्टा का परिणाम देख लिया था और वे समझ गए थे कि साम्राज्य की स्थापना में प्रजा का कितना हाथ रहना आवश्यक है।

21

औरंगजेब एक तत्पर, तीव्रबुद्धि, चौकन्ना और अथक परिश्रमी बादशाह था। किसी खुशामदी को उसके सामने मुंह खोलने का साहस न होता था। उसने शुरू ही से इस्लाम की आड़ लेने की नीति पर काम किया था। यदि वह ऐसा न करता, तो जो कुकर्म उसने राज्य- प्राप्ति के लिए किए, उनमें वह सफल न होता, पर इस सफलता का कुछ भी महत्व न रहा, क्योंकि उसके राज्य के दो स्तम्भ और हिन्दू शीघ्र ही उसके विरोधी हो गए और उन्होंने स्वतन्त्र शक्ति का संगठन करना प्रारम्भ कर दिया।

यद्यपि भारतीय तेज मर गया था, वीरत्व सो गया था और समाज पराधीनता की कीचड़ में डूबा पड़ा था, पृथ्वीराज की- सी अजेय सत्ता नहीं रही थी, समरसिंह- से जूझ मरने वाले मर चुके थे, प्रताप जैसे नर- केसरी भी समाप्त हो चुके थे, परन्तु अवसर ने फिर वीरत्व को उदय किया।

शिवाजी दक्षिण में एक अवतार होकर जन्मे। वे एक वीर, साहसी, निष्ठावान और प्रकृत योद्धा थे। सोलह वर्ष की अवस्था में उन्होंने कुछ मित्रों को संग ले, घोड़े पर सवार हो, आस-पास के गांवों को लूटना आरम्भ कर दिया। ये गांव बीजापुर के शाह के थे। शाह ने अफजलखां को भेजा। यह एक विकरालकाय योद्धा था और छल से शिवाजी को कत्ल करना चाहता था, पर शिवाजी ने छल से मार डाला।

यह उस समय की घटना है, जब औरंगजेब दक्षिण का सूबेदार था। शिवाजी को उस समय औरंगजेब ने उत्तेजना दी, क्योंकि वह बीजापुर की हानि में प्रसन्न था। शिवाजी ने शीघ्र ही कोंकण प्रदेश जीत लिया।

जब औरंगजेब पिता के विरुद्ध आगरा पर चढ़ने लगा, तो उसने शिवाजी से भी सहायता चाही, पर शिवाजी ने उसके इस नीच काम का खूब तिरस्कार किया और उसके पत्र को कुत्ते की पूंछ में बंधवा दिया, बस यहीं से औरंगजेब के हृदय में बैर का बीज बैठ गया।

जब शाहजहां के बीमार पड़ने पर मुगल तख्त को अधिकृत करने चारों ओर से उसके पुत्रों ने आगरा की ओर कूच किया, तब मुगलों से लगातार लड़ते रहने से बीजापुर के सरदारों में वैमनस्य फैल गया और बीजापुर के वजीर खान मुहम्मद की हत्या कर डाली गई। अतः अब शिवाजी को अपनी महत्वाकांक्षा पूरी करने का अवसर मिल गया। उनकी राह में अब कोई बाधा न थी। पश्चिम घाट के पहाड़ों को पार करके वे कोंकण में जा धमके। आजकल जो थाना जिला कहलाता है, तब वह कल्याणी प्रांत का भाग था। वहां का शासन नवायत मुल्ला अहमद नाम का एक अरब करता था, जिसकी गिनती बीजापुर के प्रमुख सरदारों में थी। कल्याणी और भिवण्डी के शहर सम्पन्न तो थे, पर इनकी शहरपनाह न थी। शिवाजी ने थोड़े ही प्रयास से इन दोनों नगरों को अधिकृत कर लिया। वहां से उन्हें बेशुमार धन और व्यापारिक सामग्री हाथ लगी। शिवाजी ने कल्याणी और भिवण्डी को अपनी जलसेना और जहाजों का एक अड्डा बना दिया। इस प्रकार मुगल तख्त की डगमगाहट के साथ-साथ ही दक्षिण में शिवाजी के मराठा राज्य की नींव स्थापित हुई।

औरंगजेब के गद्दी पर बैठते ही चतुर शिवाजी ने बीजापुर वालों से सन्धि कर ली। इसके बाद शिवाजी ने मुगल प्रान्तों पर आक्रमण करने प्रारम्भ कर दिए। उन दिनों दक्षिण में मुगल सूबेदार शाइस्तखां था। औरंगजेब ने उसे शिवाजी का दमन करने का हुक्म भेज दिया।

शाइस्तखां एक बड़ी सेना लेकर शिवाजी पर टूट पड़ा। उसने कोंकण प्रदेश के सभी किले कब्जे में कर लिए। फिर उसने पूना पहुंचकर उस भवन को भी अधिकार में ले लिया, जिसमें शिवाजी का जन्म हुआ था। शिवाजी चुपचाप तमाशा देखते और अवसर ताकते रहे। एक दिन अकस्मात् शिवाजी रात को शाइस्तखां के घर में जा धमके। जब वे जनान खाने में पहुंचकर तलवार चलाने लगे, तब स्त्रियों ने नवाब को जगाया। वह हक्का-बक्का हो गया और खिड़की से कूदकर भागा। फिर भी उसकी उंगलियां कट गईं और पुत्र मारा गया। सेवक भी काट डाले गए। इस घटना से शाइस्तखां ऐसा भयभीत हुआ कि सीधा दिल्ली चला आया। इसके बाद शिवाजी ने सूरत नगर को लूट लिया, जो दक्षिण में मुगलों का समृद्धशाली बन्दरगाह था। यहां शिवाजी को अटूट सम्पदा मिली, जिससे कोंकण की सारी कसर निकल गई।

इसके बाद रायगढ़ लौटकर उन्होंने छत्रपति महाराजा की उपाधि धारण कर राजतिलक ग्रहण किया। इस उत्सव में शिवाजी ने लगभग पांच करोड़ रुपया व्यय किया। अब उनके नाम का सिक्का चलने लगा। इस प्रकार मुगलों के प्रबल प्रताप के बीच यह छत्रपति उभरने लगा।

इन समाचारों को पाकर औरंगजेब ने महाराज जयसिंह और सेनापति दिलेरखां को एक बड़ी सेना लेकर भेजा। जयसिंह ने बहुत समझा-बुझाकर शिवाजी को सन्धि पर राजी कर लिया। संधि की शर्तें दिल्ली भेजी गईं। बादशाह ने भी उन्हें स्वीकार कर लिया, फिर उन्होंने

बादशाह की तरफ से बीजापुर से युद्ध किया और बादशाह का निमन्त्रण पाकर अपने पुत्र शम्भाजी, पांच सौ सवार और एक हजार मालवी सैन्य के साथ दिल्ली को प्रस्थान किया।

परन्तु औरंगजेब ने इस प्रतापी पुरुष का दरबार में सम्मान नहीं किया। इससे रुष्ट होकर वे वहां से लौट आए। इस पर उसने उन्हें कैद कर लिया, पर शिवाजी वहां से कौशल दिखा निकल भागे। निरुपाय होकर औरंगजेब ने उनकी राजा की उपाधि स्वीकार कर ली और जागीर भी दे दी। अब उन्होंने दक्षिण लौटकर बीजापुर और गोलकुण्डा के नवाबों से युद्ध करके विजय प्राप्त की और कर ग्रहण किया। उन्होंने दक्षिण में खूब राज्य- विस्तार किया। विवश औरंगजेब ने महावतखां को चालीस हजार सैन्य लेकर दक्षिण को भेजा, पर इस सैन्य ने पूरी हार खाई। इसमें बाईस सेनापति मारे गए, शेष कैद कर लिये गए। यह शिवाजी का प्रथम सम्मुख- युद्ध था।

22

जहांगीर और उदयपुर के राणा के बीच यह सन्धि हुई थी कि वह स्वयं तथा उनके उत्तराधिकारी राणा होने पर शाही दरबार में उपस्थित न होंगे। प्रत्येक राजा सिंहासनारूढ़ होने पर शाही फरमान राजधानी से बाहर जाकर स्वीकार करेगा। तब से मुगल दरबार में मेवाड़ के युवराज हाजिर होते रहे थे।

अमरसिंह की मृत्यु पर राणा कर्ण गद्दी पर बैठे। उन्होंने सन्धि का शांति से लाभ उठाकर देश को हरा- भरा कर दिया। कर्ण के छोटे भाई का मुगल- दरबार में इतना पद बढ़ा कि वे मुगल सेना के प्रधान सेनापति बनाये गए और शहजादा खुर्रम के मंत्री बनाये गए। उन्हें राजा का पद दिया गया था।

आठ वर्ष राज्य करके कर्ण स्वर्गवासी हुए। उस समय खुर्रम मेवाड़ में शरणागत थे। राणा ने उन्हें सम्राट् स्वीकार किया और शाहजहां की पदवी दी। इस अवसर पर जगतसिंह से शाहजहां ने पगड़ी बदलकर भाई- चारा स्वीकार किया था। उस मैत्री को शाहजहां ने जन्म- भर निबाहा। जगतसिंह ने छब्बीस वर्ष मेवाड़ पर राज्य किया और उसने मुगल- आक्रमणों के सब चिन्हों को मिटा देने की चेष्टा की। वह बहुत उदार, मिलनसार और सभ्य व्यक्ति था। उसने मेवाड़ को खूब सुन्दर और समृद्ध बना दिया।

उनकी मृत्यु पर राजसिंह गद्दी पर बैठे। ये सिंह के समान पराक्रमी योद्धा थे। औरंगजेब के पिता- विद्रोह के युद्ध में इन्होंने शाहजहां का पक्ष लिया था, परन्तु औरंगजेब ही बादशाह हुआ।

अकबर ने राजपूतों से वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करके प्रेम और विश्वास एवं ऐक्य की जड़ जमा ली थी तथा राजपूतों को मित्र एवं सम्बन्धी बना लिया था और उन्होंने पीढ़ियों तक मुगल- साम्राज्य का विस्तार करने में अपने जीवन भेंट किए। परन्तु औरंगजेब ने उस मुगल- साम्राज्य की जड़ें हिला दीं, स्तम्भों को उखाड़- उखाड़ फेंकना शुरू कर दिया।

जिस समय औरंगजेब गद्दी पर बैठा, राजपूताना में एक से एक बढ़कर शक्तिशाली वीर उत्पन्न हो गए। अम्बराधिपति जयसिंह, मारवाड़- अधीश्वर बसवन्तसिंह बूंदी और कोटा के हाड़ा सरदार, बीकानेर के राठौर, ओरछा और दतिया के बुन्देल, एक से एक बढ़कर शूर थे, जो सभी औरंगजेब से अप्रसन्न हो गए।

औरंगजेब के पूर्वजों ने तीन पीढ़ी तक जिस भांति प्रजा पर शासन किया तथा देश में कला- कौशल, साहित्य, विज्ञान और व्यापार की वृद्धि की, वह सब औरंगजेब के जिहाद के अत्याचार प्रारम्भ होते ही छिन्न- भिन्न हो गई। फलतः राज- कोष खाली होने लगा और तीन पीढ़ी का संचित खजाना समाप्त हो गया। तब उसने हिन्दुओं पर 'जजिया कर' लगाया, जिससे हिन्दुओं के कलेजे में आग धधक उठी।

जिस समय राजसिंह गद्दी पर बैठे और उन्होंने तिलकोत्सव किया, उस समय शाहजहां गद्दी पर था। इस अवसर पर यह रस्म होती थी कि शत्रु का कोई इलाका छीन लिया जाए। राजसिंह ने अजमेर के सीमा प्रांत का मालपुरा लूट लिया। जब बादशाह के पास शिकायत गई तो उसने कहा, “यह मेरे भतीजे की केवल मूर्खता है।”

पर औरंगजेब ने गद्दी पर बैठने पर रूपनगर की राजकुमारी का डोला जबरन मंगवाया। राजकुमारी ने राजसिंह की शरण चाही। उन्हें यह सूचना जंगल में शिकार खेलते समय मिली, जबकि उनके साथ सिर्फ एक सौ राजपूत थे। अधिक समय नहीं था। वे उन्हीं सौ वीरों को लेकर चल दिए और रास्ते में पांच सौ मुगलों से बलपूर्वक कुमारी का डोला छीन लाए।

इससे राजसिंह के शौर्य का शोर मच गया और औरंगजेब क्रोध से थर- थर कांपने लगा। उधर राजसिंह भी भावी महायुद्ध की तैयारी करने लगे, पर औरंगजेब ने राजसिंह को तब तक छेड़ने का साहस न किया, जब तक जयसिंह और जसवन्तसिंह जीवित रहे।

अन्त में उसने इन दोनों वीरों को विष देकर मरवा डाला, फिर जसवन्तसिंह की विधवा और पुत्र को कैद करना चाहा। बड़े पुत्र को भी विष देकर मरवा डाला। इस प्रकार तमाम राजपूताना क्षुब्ध हो गया और वीर राठौर दुर्गादास ने राजसिंह से मिलकर इस दुर्दान्त मुगल के नाश का उपाय ठीक किया।

23

औरंगजेब को आशंका थी कि उसके मरने पर उसके पुत्रों में तख्त के लिए झगड़े उठेंगे, अतः उसने अपनी वसीयत में लिखा कि उसके मरने पर उसके तीनों बेटे: मुअज्जम, मुहम्मद आजम और मुहम्मद कामबरख्श सल्तनत को तीन भागों में राजी-खुशी बांट लें, परन्तु बेटों ने बाप के मरते ही तख्त के लिए झगड़ना शुरू कर दिया। उस समय मुअज्जम काबुल, आजम गुजरात और सबसे छोटा मुहम्मद कामबरख्श बीजापुर के गवर्नर थे। मुअज्जम काबुल से और आजम गुजरात से तुरन्त दिल्ली की ओर चल दिए, परन्तु कामबरख्श दक्षिण से नहीं आ सका। मुअज्जम ने आजम से कहा कि पिता की इच्छानुसार सल्तनत को बांट लिया जाए, परन्तु उसने

यह बात स्वीकार न कर तख्त पर अपना हक बताया। आगरा से कुछ मिल दूर जाओ नामक स्थान पर दोनों भाइयों की सेनाओं में युद्ध हुआ, जिसमें आजम मारा गया। अब मुअज्जम ने दक्षिण की ओर बढ़कर हैदराबाद के निकट कामबरख को भी युद्ध में परास्त किया। कामबरख भयानक रूप से जख्मी हुआ और मारा गया।

अब मुअज्जम आगरा में गद्दी पर बैठा। उसने अपनी उपाधि बहादुरशाह (शाहआलम प्रथम) रखी। यह व्यक्ति इतना क्रूर न था, परन्तु इस समय महान साम्राज्य को सम्हालने की शक्ति भी उसमें न थी। इस समय मुगल साम्राज्य का विस्तार इतना था, जितना पहले कभी न हुआ था। उसने प्रजा को संतुष्ट करने की चेष्टा की। राजपूतों और मरहठों की स्वतंत्रता को स्वीकार कर लिया। मरहठों को मुगल प्रांतों से चौथ लेने का भी अधिकार दे दिया। परन्तु सिक्खों से उसका समझौता नहीं हो सका। सिक्ख लोग तूफानी ढंग से बढ़ रहे थे। उन्होंने पूर्वी पंजाब और सरहद को जीत लिया था। उनका नेता बन्दा बड़ी वीरता दिखा रहा था। बादशाह को उनके विरुद्ध स्वयं यात्र करनी पड़ी। यह बादशाह तीन ही वर्ष राज्य करके लाहौर में मर गया।

उसके बाद उसके चारों बेटे- जहांदारशाह, अजीम उसशान, जहांदार शाह और रफी उसशान में तख्त के लिए युद्ध हुए, जिनमें जहांदारशाह विजयी हुआ, शेष तीनों मारे गए। जहांदारशाह ने गद्दी पर बैठते ही सब सम्बन्धियों को तलवार के घाट उतारा, पर वह जितना जालिम था, उतना ही कायर भी था। वह सेनापति जुल्फिकार खां के हाथ की कठपुलती था। जुल्फिकारखां अच्छा सेनापति तो था, परन्तु अच्छा प्रबन्धक न था। अतः प्रजा में चारों तरफ कुप्रबंध तथा अत्याचारों के दौर होने लगे। दक्षिण में तो दाऊदखां ने हद कर दी। अन्त में पटना के हाकिम सैयद अब्दुल्ला ने जहांदारशाह को दिल्ली के लालकिले में गला घोटकर मार डाला और अजीम- उसशान के बेटे फर्रुखसियर को गद्दी पर बैठाया। जुल्फिकार खां को भी मार डाला गया। अभागा फर्रुखसियर पांच वर्ष गद्दी पर रह पाया और जब तक रहा, तब तक दोनों सैयदों के हाथ की कठपुलती बना रहा। उसके राज्य काल में दक्षिण बिल्कुल हाथ से निकल गया और उसे मरहठों का करद राज्य स्वीकार कर लिया गया। इसी बादशाह ने अंग्रेजों को बंगाल में बिना चुंगी व्यापार करने का अधिकार भी दिया। सैयद बंधुओं ने जुल्फिकारखां को भी मार डाला और अभागे फर्रुखसियर को अपने अनुकूल न पाकर कैद कर लिया और आंखें निकालकर उसका वध कर दिया।

इसके बाद सैयदों ने शहजादा मंसूर को बादशाह बनाया, जो कैद में था और जिसे क्षय रोग था। वह तीन मास ही बादशाह रहकर मर गया, इस बीच में मुगल-प्रांत एक-एक करके खत्म हो गए। तब सैयदों ने बादशाह से तंग आकर पोते मुहम्मदशाह को गद्दी पर बैठाया, पर सैयदों के उपद्रवों से तंग आकर उसके दो पराक्रमी सरदारों सआदतखां और आसफजाह ने सैयद बंधुओं को मार डाला। इसके इनाम में सआदतखां को अवध की नवाबी दी गई, जिसे उस सरदार ने जल्द ही एक स्वतन्त्र राज्य के रूप में सम्पादित कर लिया। तब से किसी ने भी अवध को फिर से कब्जे में करने की चेष्टा नहीं की और 130 वर्ष तक सआदतखां के वंशधर वहां की बादशाहत भोगते रहे।

इसके दो वर्ष बाद आसफजाह ने, जो उसका मंत्री था, मंत्री पद से इस्तीफा दे दिया।

और दक्षिण में जाकर हैदराबाद को राजधानी बना, नया राज्य स्थापित कर लिया। दस वर्ष तक वह मरहटों से लोहा लेता रहा और एक विख्यात राज्य पैदा कर लिया।

शिवाजी के वंशधर अब मुगल- सम्राट से कर ग्रहण करते थे। शिवाजी के समय में राज्य- सत्ता बालाजी विश्वनाथ के हाथ में पहुंच गई थी, जो पेशवा के नाम से प्रख्यात हुए। दूसरा पेशवा बाजीराव इतना सशक्त हुआ कि उसके समय में महाराष्ट्र- शक्ति उन्नति के उत्तम शिखर पर पहुंच गई। शीघ्र ही मरहटों के तीन बड़े राज्य स्थापित हो गए- सिन्धिया ग्वालियर में, होल्कर इन्दौर में और गायकवाड़ बड़ौदा में।

तीनों सरदार शूद्र से क्षत्रिय-वर्ण में परिणत हुए। अन्त में मराठों की पूर्ण शक्ति संगठित होकर दिल्ली पर चढ़ आई। मुहम्मदशाह ने आसफजाह को सहायता के लिए लिखा। वह हैदराबाद से भारी सेना लेकर चला। भोपाल में बाजीराव ने 80,000 सवार लेकर उससे लोहा लिया, जिसमें आसफजाह की पूरी हार हुई और उसने मालवा प्रांत मरहटों के हवाले कर दिया तथा पचास लाख रुपये दिल्ली के खजाने से दिलाने स्वीकार कर लिए। बाजीराव ने सिन्धिया और होल्कर को मालवा बांट दिया।

24

पुंछ के अन्तर्गत राजौरी नामक गांव में रामदेव नामक एक वीर राजपूत के घर एक बालक लक्ष्मणदेव ने जन्म लिया। बचपन में उसे शिकार का व्यसन था, जिससे वह कुशल घुड़सवार और तीरंदाज बन गया। एक बार उसने बालकपन में ही एक गर्भवती हरिणी को अपने तीर से मार गिराया। जब उसने उसका पेट चीरा तो उसमें से आकुल- व्याकुल तीन बच्चे निकले, जो कुछ क्षण बाद तड़पकर ठंडे हो गए। इस दयनीय घटना से बालक के मन में करुणा और पश्चात्ताप हुआ, जिससे उसके हृदय में वैराग्य- भावना उत्पन्न हुई। वह घर छोड़कर साधु हो जानकीदास वैरागी का चेला बन गया। नाम बदल लिया: माधोदास। तीर्थ- स्थानों में घूमता हुआ, पंचवटी और फिर नांदेड़ पहुंचा और गोदावरी के तट पर कुटी बनाकर तपस्या में लीन हो गया। धीरे- धीरे उसकी कीर्ति बढ़ी और लोगों में उसकी चमत्कारी शक्ति की कहानियां प्रचलित हो गईं।

गुरु गोविन्दसिंह अपने पुत्रों के बलिदान, मुस्लिम अत्याचार और सिक्खों की उस समय की उदासीनता से बहुत क्षुब्ध थे। वे माधोदास की चमत्कारी शक्ति की ख्याति सुनकर उससे मिलने गए और कहा- “इस समय आप जैसे चमत्कारी पुरुष की सिक्खों की आवश्यकता है। आप पंजाब चलिए।”

“पर मैं साधु पुरुष हूं, संसार त्यागी हूं।”

“संसार त्यागने का क्षण अभी नहीं आया, आज देश को मुस्लिम अत्याचारों से मुक्त कीजिए, अपनी शक्ति का उपयोग वैराग्य में नहीं देश- मुक्ति में कीजिए।”

“क्या यह उचित होगा?”

“देश-सेवा सर्वोपरि है, वीरों के लिए भी और साधुओं के लिए भी, फिर अपने तो सिद्धि प्राप्त की है, आप धर्म की रक्षा कीजिए।”

माधोदास ने क्षणभर नेत्र मूंदे, हुंकार भरी और अपना आसन छोड़ खड़े हो गए। उन्होंने गुरु गोविन्दसिंह का हाथ पकड़कर कहा- “मैं आपका बन्दा हूँ।”

गुरु ने उन्हें हृदय से लगाकर कहा- “आप ही मेरे राजनैतिक उत्तराधिकारी होंगे।”

उन्होंने उन्हें खण्डे का पाहुल देकर सिक्ख धर्म में दीक्षित किया और उनका नाम गुरुबख्शसिंह रखा। उन्होंने कहा- “मेरे दो पुत्रों को सरहिंद में नवाब वजीरखां ने जीवित दीवार में चिना दिया। पंजाब में सिक्खों पर मुस्लिम अत्याचार बढ़ रहे हैं, अतः आपको पंजाब जाकर अपना कार्य करना चाहिए।” उन्होंने अपनी तलवार, पांच तीर, एक नगाड़ा, एक झण्डा और अपने विश्वस्त पत्नीस अनुयायी उन्हें देकर कहा- “अब सिक्ख जाति का उत्थान कीजिए, वह आपकी अनुयायी रहेगी।”

गोविन्दसिंह का आदेश पंजाब पहुंच गया। माधोसिंह के वहां पहुंचने पर हजारों सिक्खों ने एकत्र होकर उनका अभिवादन किया और उनके झंडे के नीचे एकत्रित हो गए।

माधोसिंह का अपने राज्य में आना सुन और उसकी दैवी शक्ति से भयभीत होकर मुगल सूबेदार भागने लगे। कैथल से एक भारी शाही खजाना दिल्ली ले जाया जा रहा था। सबसे पहले उन्होंने उसे हस्तगत किया और सैनिकों में बांट दिया। कपूरी के शासक का भी खजाना लूटकर सैनिकों को बांट दिया। इसके बाद आगे बढ़कर समाना नगर में जलालुद्दीन, जिसने गुरु तेगबहादुर का सिर तलवार से काटा था, के घर को जलाकर दस हजार मुस्लिमों को मौत के घाट उतारा। इस प्रकार सिक्ख लोग आगे बढ़ते गए। सिक्खों में फिर से आत्मविश्वासी की नींव जमी। माधोदास को उन्होंने बन्दा बैरागी की उपाधि दी।

बन्दा ने पंजाब आकर अपना विवाह भी किया और सिक्खों का नेतृत्व भी किया, परन्तु साधु वेश नहीं छोड़ा। सैन्य संग्रह कर अम्बाला, संवारा, कैथल, दामला, कंजपुर आदि दखल कर लिए। औरंगजेब दूर दक्षिण में युद्धों में फंसा हुआ था। उसने बन्दा बैरागी के कारनामे सुने और सूबेदारों को उसे नष्ट करने के हुक्म भेजता रहा। परन्तु बन्दा बैरागी साधारण व्यक्ति नहीं था। उसमें असाधारण दैवी शक्ति थी। सधौस का शासक उस्मानखां बहुत प्रबल और जालिम सूबेदार था। बन्दा ने उसे दो दिन युद्ध करके मार डाला और मुखलिसगढ़ पर अधिकार करके उसका नाम लोहगढ़ रख दिया।

सरहिंद में गुरु गोविन्दसिंह के दो पुत्रों को नवाब वजीरखां के आदेश से जीवित दीवार में चिना गया। अपने पौत्रों की मृत्यु सुनकर गोविन्दसिंह की माता ने भी सरहिंद में प्राण त्यागे। सरहिंद के चमकौर और माछीबाड़ा के जंगलों में गोविन्दसिंह को घेरकर वजीरखां ने घोर कष्ट दिया था। माझा और मालवा से हजारों सिक्ख आकर बन्दा की सेना में भरती हो गये और सरहिंद पर आक्रमण करने की प्रार्थना की। सिक्खों की भारी तैयारी सुनकर वजीरखां ने भी भारी तैयारी की और सरहिंद से दस मील दूर छप्पड़ चिरी स्थान पर दोनों सेनाओं का सामना

हुआ। सरहिंद और रोपड़ के युद्ध में प्रसिद्ध दो मुसलमान सूबेदार मारे गए। इस मुहिम में जब घमासान युद्ध हो रहा था, तब बन्दा युद्धभूमि से तीन मील दूर भजन गाने में लीन था। एक सिक्ख दूत ने युद्ध की भयानकता बताकर कहा कि मुस्लिम फौजें बहुत अधिक हैं, सिक्खों के पैर उखड़ रहे हैं। बन्दा वायुवेग से घोड़े पर सवार होकर युद्धक्षेत्र में पहुंचा। उसे देखते ही मुगल फौज भाग खड़ी हुई और वजीरखां को तलवार से काट डाला गया। मुगल बड़ी- बड़ी तोपें और बहुत- सी युद्ध- सामग्री और खजाना अपने पीछे छोड़ गए। बन्दा के तीक्ष्ण बाणों ने भागती मुस्लिम सेना के सिर उड़ा दिए। सिक्ख विजयी हुए। सरहिंद शहर में एक भी मुस्लिम जिन्दा नहीं छोड़ा गया। तीन करोड़ रुपया लूटा गया तथा सुत्त्वानन्द को, जिसने गुरु गोविन्दसिंह के पुत्रों को पकड़वाया था, रस्सियों में बांधकर सरेआम शहर में घुमाया गया। उस पर जूतियों की इतनी मार पड़ी कि उसकी मृत्यु हो गई।

मलेरकोटला, जगसांव, राहकोट, मलवाड़ा, तलवण्डी अधिकृत कर लिये गए। अधिकांश पंजाब को मुस्लिम सत्ता से मुक्त करके बन्दा अमृतसर पहुंचा और दरबारसाहब में बहुत- सा धन चढ़ाया। उसकी सामर्थ्य और शक्ति से प्रभावित होकर हजारों लोगों ने सिक्खधर्म ग्रहण कर लिया और उससे आशीर्वचन प्राप्त किया। राजा- महाराजा भी उसके शिष्य होने लगे। दिल्ली से लेकर लाहौर तक सारा प्रदेश जीत लोहगढ़ को केन्द्र बनाकर बन्दा ने गुरु नानक के नाम पर सिक्का चलाया।

अमृतसर में उसने दरबार किया और अपना साधु वेश त्याग राजसी वेश में सुशोभित हुआ। इसी समय औरंगजेब दक्षिण में मर गया। बहादुरशाह (शाहआलम प्रथम) दिल्ली के तख्त पर बैठा जिसने भारी सैन्य- संग्रह कर पंजाब पर आक्रमण किया। परन्तु बन्दा वैरागी की दिव्य शक्ति के आतंक ने उसकी सेना के पैर उखाड़ दिए। सहारनपुर के राजा अलमुहम्मद ने इस्लाम के नाम पर मुसलमानों का आह्वान किया, परन्तु घमासान युद्ध होने पर वह मारा गया और सहारनपुर बन्दा के अधिकार में आ गया। बन्दा की चमत्कारी शक्ति से कुछ सिक्ख ईर्ष्या करने लगे। जब फर्रुखसियर दिल्ली के तख्त पर बैठा, तब गुरु गोविन्दसिंह की दो स्त्रियां मातासुन्दरी और साहबदेवी दिल्ली में रहती थीं। बन्दा को पराजित करना असम्भव समझकर फर्रुखसियर ने कहलाया कि हमारे पूर्वज आपके पूर्वजों के सेवक रहे हैं, यह बन्दा व्यर्थ ही देश को तबाह कर रहा है।

सुन्दरी बन्दा को पत्र लिखा कि तुम्हारी वीरता से हम प्रसन्न हैं। तुम गुरु के बच्चे सेवक हो, लेकिन अब युद्ध बन्द करो, क्योंकि बादशाह तुम्हें जागीर देने को तैयार हैं।

बन्दा ने उत्तर दिया- “मैं वैरागी साधु हूं, गुरु का सिक्ख नहीं हूं। अपने बल से गुरु- पुत्रों का बदला लेने के लिए मैंने युद्ध जय किए हैं। मैं जागीर या दया का भिखारी नहीं हूं।”

बन्दा के इस उत्तर से सुन्दरी अपमानित हुई, उन्होंने सिक्ख सरदारों को कहला भेजा कि बन्दा का साथ न दें। सिक्खों ने बन्दा का साथ छोड़ दिया और वैशाखी मेले में एकत्र होकर बन्दा का अपमान किया। इससे मर्माहत हो बन्दा ने सिक्खों को छोड़कर हिन्दुओं का संगठन किया। सिक्खों को बन्दा से पृथक् होते देख बादशाह ने बन्दा से नैनाकोट के समीप

जमकर युद्ध किया, परन्तु हारकर लौटा। बन्दा ने आगे बढ़कर लाहौर पर आक्रमण किया, परन्तु रुष्ट सिक्खों ने ही बन्दा के विपरीत युद्ध किया। इससे खिन्न होकर बन्दा गुरदासपुर चला आया। यहां बादशाह ने फिर एक भरी फौज भेजी। भयानक युद्ध हुआ, बन्दा लोहे के सींखचों में बांध लिया गया। उसके साथ उसके स्वामिभक्त सात सौ चालीस सैनिक भी गिरफ्तार हुए। सबको काजी के समक्ष पेश किया गया।

काजी ने कहा- “मुसलमान बन जाओ, तो तुम्हें जांबखशी।”

परन्तु किसी ने भी उत्तर नहीं दिया। सब घृणा से मुंह फेरकर खड़े हो गए। काजी ने फिर कहा- “तुम्हें कुल्हाड़ों से काटा जायेगा।” परन्तु फिर भी वे मुंह फेरकर खड़े रहे।

निदान सबको कत्ल करने की सजा सुनाई गई। प्रतिदिन सबको कत्ल कर उनमें से सौ व्यक्ति के सिर काटे जाते। इस प्रकार सात दिन तक सिर काटे जाते रहे। आठवें दिन बन्दा की बारी आयी। उससे पूछा गया- “तुम्हें कैसी मौत पसन्द है?” बन्दा ने हंसकर कहा- “जैसी तुम्हें पसन्द हो?” बन्दा के चारों ओर भालों की कतार गाड़ दी गई, जिन पर उनके सात सौ चालीस साथियों के सिर टंगे हुए थे। उनके बीच में तलवार और बन्दा के शिशु पुत्र को रखकर कहा गया- “इस तलवार से बच्चे के टुकड़े-टुकड़े कर डालो।”

बन्दा ने घृणा से मुंह फेर लिया। तब जल्लाद ने उसके सामने बच्चे को रखकर काट डाला और उसके शरीर में घुसाया गया। अंगारे से लाल तपे हुए चिमटों से मांस को नोचा गया, यहां तक कि हड्डियां दीखने लगीं।

जल्लाद ने हैरत से पूछा- “इतनी तकलीफ पाकर भी खुश हो?”

बन्दा ने उत्तर दिया- “आत्मज्ञानी सब दुखों से दूर हैं।”

जल्लाद ने तेजी से उसकी छाती में कई सलाखें घोंप दीं। बन्दा प्राणहीन हो गया।

25

अब नादिरशाह ने भारत पर आक्रमण किया। यह खुरासान का एक गड़रिया था, जिसने अपने बाहुबल से ईरान का राज्य प्राप्त किया था। आसफजाह और सआदत ने उसे करनाल में रोकना चाहा, पर वे बुरी तरह हार गए। शराब और शायरी के कारण बादशाह और दिल्ली की तकदीर फूट चुकी थी। बंगाल, अवध, उड़ीसा, दक्षिण और राजपूताना की बहुत-सी रियासतें स्वतंत्र हो गई थीं। देश में अराजकता फैली थी। गूजर और जाट पक्के चोर और डाकू हो रहे थे। दिल्ली के बाहर दस कोस जाना भी निरापद नहीं था। दिल्ली के खजाने से मराठा सरदार बेशुमार रुपया वसूल कर चुके थे। अब दिल्ली का खजाना खाली पड़ा था। सरदार, अमीर, गुणी सब दिल्ली छोड़कर लखनऊ, पटना, काशी, मुर्शिदाबाद के पूर्वी शहरों में जाकर बस गए थे।

दिल्ली के बड़े-बड़े हिन्दू व्यापारी, खन्नी और अग्रवाल भारत के उन्नतिशील पूर्वी

शहरों को चले गए थे। दिल्ली का वातावरण अशांत, चौंकाने वाला और भयपूर्ण था। बादशाही दरबार अब भी उसी भांति होता था जिस भांति प्रतापी औरंगजेब के समय में होता था। पर वह शान और जलाल अब कहाँ था! बादशाह मुहम्मद बूढ़ा और सनकी था। कविता करने, गाने- बजाने में उसे कमाल हासिल था। भरे दरबार में अब बड़े- बड़े राजनैतिक मसले हल नहीं होते थे, बल्कि गजलें और शेर पढ़े जाते थे। बड़े- बड़े राजाओं और बादशाहों के एलचियों की जगह अब भांड और नवकाल दरबार में धमाचौकड़ी मचाया करते थे। खुशमदी टटू और चपरगटू बादशाह की हाँ में हाँ मिलाया करते और हलवा- मांडा सीधा करते, दरबार में खुल्लमखुल्ला शराब का दौर चलता था। वह जगत्प्रसिद्ध दरबारे- मुगलिया अब मुशायरों और भांडों की चलता मजलिस बन गई थी। यमुना तालाकिले से रूठकर दूर चली गई थी और उसके संगमरमर के झरोखे आंसू बहाते थे।

सुबह के आठ बजते ही नौबत पर चोट पड़ी और नकीब ने आवाज लगाई। चोबदारों ने अपने बल्लम- आसे ऊंचे किये, 'अदब' का नारा बुलंद किया। सब दरबारी सहमकर झुककर निस्तब्ध खड़े हो गए। सबकी नजरें धरती पर थीं। सबकी गर्दन झुकी हुई थी।

बादशाह की सवारी हवादान पर रंगमहल से निकली, सोलह तातारी बांदियां नंगी तलवारें लिये आगे- आगे आ रही थी। बाहर बांदियां हवादान को हाथों हाथ उठाए हुए थीं। मोरछलवालियां, हुक्केवालियां, पानवालियां, उगालदानवालियां, सुराहीवालियां बादशाह की सवारी के साथ थीं। बादशाह सुबह की हल्की सफेद रेश्मी पोशाक पहने, पन्ने का कण्ठा गले डाले, पगड़ी पर बड़ा-सा नीलम का तुरा लगाए थे। दोनों तरफ से सलामियां उतरने लगीं और बादशाह सलामत तनिक हाथ हिलाकर लोगों की सलामी- कोर्निश स्वीकार करते आगे बढ़े।

बादशाह के तख्त पर बैठते ही एक- एक सरदार सहमा हुआ आगे बढ़कर बादशाह के सामने आया। तीन बार जमीन तक झुककर कोर्निश की और पीछे हट गया। सबका मुजरा हो चुकने पर बादशाह ने एक गिलौरी पान की खाकर हुक्के के दो कश खींचकर कहा- “ईजानिब ने एक शेर फर्माया है।”

बादशाह ने शेर पढ़ा। दरबार में शोर उठा- “करामात!”

एक अमीर ने आगे बढ़कर तीन बार कोर्निश करके कहा- “करामुलमूलूक मुलूकूल कलामा!”

दरबार में फिर शोर उठा- “करामात!”

बादशाह मुसकराए। उन्होंने संकेत किया। खवास ने शराब की सुराही का मुंह खोला। दौर चलने लगा। प्याले पर प्याला पीकर बादशाह शेर पढ़ने लगे। प्यालों के साथ ही दरबार का शिष्टाचार भी भंग होने लगा। शोर, बेअदबी, फलियां कसी जाने लगीं। बादशाह आंख- भौंह चढ़ाकर, गाकर, तकिया कर, रस ले- लेकर अपने शेर पढ़ने लगे और दरबारी झूम- झूमकर उनकी तारीफ मुक्त कण्ठ से करने लगे।

अवसर पाकर वजीर- आजम ने दस्तबस्ता अर्ज की- “जहांपनाह, ईरान के लुटेरे

नादिरशाह ने सफ़ीर भेजा है। वह हुजूर की कदमबोसी की इजाजत चाहता है।

बादशाह ने रंग में भंग पड़ते देखकर नाक- भौंह सिकोड़कर कहा- “सआदत और आसफ़ को उस लुटेरे को भगाने को भेज दिया था न?”

“जहांपनाह, उस डाकू ने सआदत और आसफ़ को भगा दिया है।” “भगा दिया है? उसकी इतनी मजाल? अच्छा, उस अर्जी को जो सफ़ीर यहां लाया है, हमारे हुजूर में पेश करो। मगर उस मूजी के नाम पर सब कोई एक- एक प्याला चढ़ाएं।”

सफ़ीर ने बादशाह से चालीस कदम दूर चांदी के कटघरे से बाहर खड़े होकर तीन बार कोर्निश की और एक जारीदार खरीता निकालकर बादशाह की खिदमत में पेश किया। बादशाह में क्षण- भर खरीते की तरफ देखा और संकेत किया। सफ़ीर ने खरीता उठाकर वजीर के रूबरू पेश किया। वजीर ने उसे खोलकर पढ़ा और नीची नजर कर ली।

“जहांपनाह, गुलाम अर्ज नहीं कर सकता।”

“क्यों?”

“निहायत गुस्तखाना अल्फाज लिखे हैं।”

वजीर ने खत पढ़कर सुना दिया। खत में लिखा था कि अगर दो करोड़ रुपये फौरन नहीं दाखिल किये जाएंगे तो दिल्ली की ईट-से-ईट बजा दी जाएगी।

सुनकर बादशाह ने क्रोध नहीं किया। आश्चर्य से उनकी भौंहें चढ़ गईं। एक अमीर की ओर उन्मुख होकर उन्होंने कहा- “क्या यह मुमकिन है कि यह शरूख दिल्ली की ईट- से- ईट बजा देगा?”

अमीर ने अत्यन्त आश्चर्य का भाव प्रकट करके कहा- “जहांपनाह, यह कतई नामुमकिन है।”

बादशाह ने फिर एक बार अमीरों पर नजर दौड़ाकर कहा- “यह अर्जी शराब की सुराही में डुबो दी जाए और एक- एक प्याला इस मूजी के नाम पर पिया जाए।”

दरबार में फिर कोर्निश होने लगी और ‘करामात! करामात!’ का शोर उठ खड़ा हुआ। शराब का दौर चल रहा था, दूत चुपचाप हाथ बांधे खड़ा था। उसने अवसर पाकर अर्ज की, “जहांपनाह, मुझे क्या हुक्म है?”

बादशाह ने हुक्म दिया- “पांच सौ अशर्फियां और एक दुशाला इसे इनाम में दिया जाए।”

दूत ने मुसकराकर आदाब अर्ज की और चल दिया।

आंधी की तरह नादिरशाह दिल्ली में घुस आया। दिल्ली को लूटकर उसने आग लगा दी। सारा शहर धायं- धायं जलने लगा, किले के फाटक तोड़ डाले गए और अग्निबाण आ- आकर रंगमहल के चौक में पड़ने लगे। रंगीले बादशाह का सारा भंग फीका पड़ने लगा। उसने नादिरशाह के लिए किले का फाटक खोल दिया। भरे दरबार में उसका स्वागत करके तख्तेताऊस पर अपने पास बराबर में बिठाया।

प्रतापी मुगलों के इतिहास में यह पहली घटना थी कि बादशाह के साथ तख्तेताऊस पर कोई दूसरा बैठे, परन्तु नगर और किले पर नादिरशाह का अधिकार हो गया था। बादशाह ने सिर झुकाकर तख्तेताज उसकी नजर कर दिया।

नादिरशाह ने सेना को विश्राम के लिए आज्ञा दे दी। नागरिकों को अभयदान दिया। बादशाह से नादिरशाह ने दोस्ती कर ली। दो करोड़ रुपये नादिरशाह को दिये गए। अब उनकी खातिर- तवाजो में दिल्ली में जश्न मनाया जाने लगा। उजड़े और लुटे हुए नागरिक अपने जले-भुने घरों में दीपावली करने को लाचार हुए। रोते- रोते नागरिकों ने नाच- रंग के ठाठ जमाये। महलों में भी जलसे होने लगे।

रात का समय था। शाही महल में हजारों फानूस जल रहे थे। नाच- रंग का दौर- दौरा था। बादशाह सलामत अपनी बहुत- सी गजलें नादिरशाह को सुना चुके थे। दो पहर रात जा चुकी थी। नाचरंग फीका पड़ गया था। शराब पीते- पीते बदहवास होकर बादशाह ख्वाबगाह में ले जाए गए। नादिरशाह दीवाने- खास में अपने मुसाहिबों के साथ बैठकर कुछ गम्भीर चिन्तन कर रहा था। एकाएक उसने हुक्म दिया कि महल की तमाम शाहजादियां मेरे रूबरू की जाएं।

सन्नाटा छा गया, मगर किसकी मजाल थी जो नादिरशाह की हुक्मउदूली करे। पलक मारते ही सब शाहजादियां और बेगमात सामने सिर झुकाकर खड़ी हो गईं।

एक बार नादिरशाह ने छिपी नजर से सबको देखा, कमर से तलवार खोलकर उसने सामने चौकी पर रख दी और वह आंखें बन्द करके तख्तेताऊस पर लेट गया। कई मिनट तक वह उठा नहीं। बाद में खड़ा हो गया। उसने लाल- लाल आंखों से घूर- घूरकर प्रत्येक स्त्री को देखा। इसके बाद उसने गम्भीर स्वर से कहा- “तुम लोग मुगल शाहजादियां और बेगमात हो, मगर इस कदर बेशर्म कि बिना ताअम्मुल दुश्मन के सामने आ खड़ी हुई। तुममें से इतनी गैरत किसी में नहीं कि जो इस बेहुर्मती के बजाय अपनी जान पर खेल जाती? मैंने जान- बूझकर तलवार खोलकर दूर रख दी थी कि कोई आबरूदार जोश में आ जाय और अपनी तौहीन के बदले में मेरे कलेजे में कटार भोंक दे। इसी इन्तजारी में आंखें बन्द किए इतनी देर पड़ा रहा, मगर अफसोस, तुम पानीदार औरतें नहीं। ओ जलील औरतों, क्या तुमसे यह उम्मीद की जाए कि तुम हिन्दुस्तान पर हुक्मूत करने वाले बच्चे पैदा कर सकती हो? दूर हो जाओ मेरी आंखों के सामने से।”

अगले दिन शहर में हवा फैल गई कि नादिरशाह मर गया। दूकानें बन्द होने लगीं। बाजार- गलियों में उसके सिपाही मौत के घाट उतारे जाने लगे। नादिरशाह ने जब यह सुना तो

वह घोड़े पर चढ़कर चांदनी चौक में निकला।

आजकल जहां फव्वारा है उसी के सामने सुनहरी मस्जिद है। सुनहरी मस्जिद के निकट आने पर नादिरशाह पर पत्थर बरसने लगे। क्रोध में भरकर नादिरशाह सुनहरी मस्जिद में चला गया। उसने तलवार ऊंची करके हुक्म दिया- “कत्लेआम!”

हजारों बर्बर सिपाही नगर की गलियों में घुस पड़े। न कहने और न देखने योग्य दृश्य दीखने लगे। बूढ़ा, बालक, बच्चा कोई भी ईरानी तलवार से नहीं बचने पाया। हाहाकार मच गया। लाशें गली-कूचों में सड़ने लगीं। घरों से सिसकारियां आने लगीं। बलात्कार के रोमांचकारी दृश्य दीख पड़ने लगे।

चार दिन बीत गए। कत्लेआम रुका नहीं। शहर लाशों से पट गया। बाजार जलकर राख के ढेर बन गए। नादिरशाह दीवानेखास में तख्तेताऊस पर बैठा था। उसका चेहरा गम्भीर था।

बूढ़े और लाचार बादशाह ने कांपते-कांपते आकर अपनी पगड़ी उसके कदमों में रख दी। वजीर और अमीर जमीन पर लोट गए। ‘रहम, रहम’ सबकी जबान पर था।

नादिरशाह ने बादशाह की दीन दशा को देखकर कत्लेआम रोक देने का हुक्म दिया। उसे तख्तेताऊस ले जाने का अपने सिपाहियों को हुक्म दिया। तमाम शाही खजाना लूट लिया गया। पन्द्रह करोड़ रुपया, तीन सौ हाथी, दस हजार घोड़े, कई हजार ऊंट, कोहनूर हीरा और सात करोड़ का तख्तेताऊस लेकर वह चला गया। उजाड़, जली हुई, मुर्दों से पटी हुई, हाहाकार से भरी दिल्ली यहीं रही।

दिल्ली से अतुल धन-सम्पदा लूटकर नादिरशाह जब अपने देश को वापस लौट रहा था, तब अखनौर के पास सिक्खों ने धावा करके उसकी अधिकांश सम्पदा लूट ली। यह देख उसने लाहौर के मुगल गवर्नर से कहा कि सिक्खों से सावधान रहो, नहीं तो यह पुनः पंजाब हथिया लेंगे। इससे शंकित होकर जकरियां खां ने सिक्खों के किले डूलेबाल पर आक्रमण करके उसे नष्ट कर दिया और सिक्खों का खुलेआम सिर काट लेने का ऐलान किया। एक सिक्ख के कटे सिर का मूल्य एक बिस्तर और एक कम्बल दिया जाने लगा। छिपे सिक्ख की सूचना देने पर दस रुपया और जीवित सिक्ख पकड़ने पर पचास रुपया इनाम दिया जाता था।

जकरियां खां की मृत्यु के बाद उसका पुत्र याहिया खां पंजाब का गवर्नर बना। उसने अपने दीवान लखपतराय को सिक्खों को नष्ट करने का कार्य सौंपा। लखपतराय ने लाहौर के सारे सिक्खों को पकड़कर कत्ल करने के लिए भंगियों के हाथों सौंप दिया। उसने मुनादी करा दी कि सिक्खों के धर्मग्रन्थों को कोई न पढ़े। जो उन्हें पढ़ता पाया जाता, उसका पेट चीर दिया जाता था। ग्रन्थ साहब को इकट्ठा कराके नदी में फेंकवा दिया। अमृतसर का तालाब मिट्टी से भरवा दिया। काहनुबाल के घने जंगलों में पन्द्रह हजार सिक्ख छिपे हुए थे, उन्हें ढूंढ-ढूंढकर तोपों और बन्दूकों से मारा गया। सात हजार वहीं मारे गए और तीन हजार को कैद करके लाहौर लाकर गुरुद्वारा शहीदगंज में कत्ल किया गया। सिक्खों के कटे हुए सिरों के मुनारे बना लिए गए

और शरीरों को मस्जिद की दीवारों में चिन दिया गया। बहुतों की खोपड़ियां उतरवाई गई, जिससे अपार यातना सहकर उनके प्राण निकले।

26

इसके बाद दिल्ली की शान्ति छिन्न-भिन्न हो गई। दक्षिण, मालवा, गुजरात राजपूताना, सब दिल्ली के अधिकार से बाहर हो गए। अब बंगाल के नवाब अलीवर्दी खां ने भी अपने को स्वतंत्र घोषित कर दिया और खिराज देना बन्द कर दिया। यह सब उलट-पलट माया के जादू से: औरंगजेब की मृत्यु के बाद: सिर्फ तीस वर्ष के भीतर-भीतर हो गई।

मुहम्मदशाह के मरने पर उसका बेटा अहमदशाह तख्त पर बैठा। छः वर्ष राज्य करने के बाद गाजीउद्दीन इमादउलमुल्क नामक वजीर ने उसको पटककर आंखें निकाल लीं और जहांदार के बेटे अजीजुद्दीन को तख्त पर बैठाया। उसका नाम आलमगीर द्वितीय रखा। उसके गद्दी पर बैठने के थोड़े दिन बाद अहमदशाह दुर्रानी ने भयानक रीति से दिल्ली को लूटा। फिर वह मथुरा पर चढ़ गया और वहां कल्लेआम मचा दिया और लौट गया। अब गाजीउद्दीन ने बादशाह से बिगड़कर मरहटों को बुलाया। पेशवा का भाई रघुनाथराव दिल्ली आया और दुर्रानी को मार भागया। अब मरहटों का आधिपत्य सर्वोपरि हो गया और वे प्रत्येक प्रान्त से चौथ वसूल करने लगे।

दुर्रानी फिर एक भारी सेना लेकर चढ़ आया। यह देख गाजीउद्दीन ने आलमगीर द्वितीय को मरवा डाला और स्वयं जाटों की रियासत में भाग गया। उधर मरहटे बड़े दर्प से दुर्रानी का मुकाबला करने पानीपत के मैदान में आ डटे। परन्तु परस्पर की फूट और विग्रह ने उनका पतन किया। होलकर और सूरजमल लड़ाई से फिर गए। दो लाख मरहटे काट डाले गए और बाईस हजार को पकड़कर दुर्रानी गुलाम बनाकर ले गया। इस घटना ने महाराष्ट्र में हाहाकार मचा दिया।

इस युद्ध के बाद अन्नी गौहार गद्दी पर बैठा और अपना नाम शाहआलम द्वितीय रखा। इसके समय में गुलाम कादिर नामक एक सरदार रुहेलों को चढ़ा लाया। गुलाम कादिर जोरों से महल में घुस गया और बादशाह को तख्त के नीचे गिराकर उसकी छाती पर चढ़ बैठा। कटार से आंखें निकालकर बाहर फेंक दीं। फिर किले को खूब लूटा। यहां तक कि बेगमों के बदन से कपड़े भी उतरवा लिए। मरहटों ने जब यह सुना, तो महादजी सिन्धियां तुरन्त दिल्ली आ धमके और गुलाम कादिर को पकड़कर टुकड़े-टुकड़े कर डाला। इसके बाद सिन्धिया ने बादशाह को तो किले में बन्द कर दिया और नगर में अपना कब्जा कर लिया।

27

अब अंग्रेज रंगमंच पर खुल्लमखुल्ला आए। लार्ड लेक ने दिल्ली पहुंचकर बादशाह को सिन्धिया की कैद से छड़ाया और इलाहाबाद ले गए। उन्होंने अवध के नवाब को डरा-धमकाकर उससे

इलाहाबाद और कड़ा का इलाका बादशाह के लिए ले लिए और बादशाह को इलाहाबाद का किला सौंप दिया। इसके बाद ही लार्ड क्लाइव ने आकर बंगाल, बिहार, उड़ीसा की दिवानगी बादशाह से ले ली। इसका मतलब यह था कि अंग्रेजों को इन तीनों प्रांतों से कर और लगान उगाहने का अधिकार मिल गया। अंग्रेजों ने इसके बदले बादशाह को छब्बीस लाख रुपये पेंशन देने का वचन दिया। मुर्शिदाबाद के नवाबों का केवल शासनाधिकार- मात्र रह गया!

परंतु इसके कुछ दिन बाद ज्योंही बादशाह दिल्ली आया, उधर वारेन हेस्टिंग्स गवर्नर हुए। उन्होंने पचास लाख रुपये नकद लेकर अवध के नवाब को फिर इलाहाबाद और कड़ा का इलाका बेच दिया। साथ ही साथ बादशाह को खिराज भेजना भी बंद कर दिया। उसका कारण यह बतलाया गया कि बादशाह मराठों में मिल गया है।

बादशाह ने कई बार गवर्नर को पत्र लिखा। एक बार पत्र के उत्तर में वारेन ने लिखा था:

“जब आप कम्पनी और अवध के नवाब- वजीर से अलहदा होकर दूसरों को (मराठों को) अपना कृपापात्र बनाने लगे, जिसमें कम्पनी की सरासर हानि है, तो जो कुछ आपके पास था, उसी समय कम्पनी का हो चुका।”

परकैंच बादशाह ने फिर भी ठंडे- ठंडे लिखा- “कम्पनी के अधिकारी सुलहनामे की एक रू से हमारे पाक दामन से अलहदा नहीं हो सकते और बंगाल के सूबे का खिराज भेजना उनका फर्ज है। हम कहीं क्यों रहें- कड़ा और इलाहाबाद हमारे नौकर के हाथों से बने रहने चाहिए। दो वर्षों से हमें इलाहाबाद और कड़ा के रुपये नहीं मिले। रुपयों की हमें अजहद जरूरत है।”

परन्तु इस पत्र का कोई जवाब नहीं दिया गया। विवश बादशाह ने फिर मराठों की शरण ली। उन्होंने महादजी सिन्धिया को लिखा तुम खुद कलकत्ता जाकर यह खिराज वसूल करो। नाना फड़नवीस से भी सहायता मांगी गई। सिन्धिया पूना पहुंचकर नाना से इस सम्बन्ध में सलाह कर ही रहे थे और सम्भव था कि भारी सैन्य लेकर कलकत्ता खिराज के लिए चढ़ दौड़ते, पर अकस्मात् ही उनकी मृत्यु हो गई। कहा जाता है कि उन्हें मरवा डाला गया।

इसके बाद अंग्रेजों ने मराठों और बादशाह में विरोध उत्पन्न करा दिया और एक इकरारनामा लिख दिया, जिसका अभिप्राय: यह था कि उन्हें मराठों से सम्पूर्ण अधिकार दिला दिए जाएंगे।

परन्तु यह वायदा कभी पूरा नहीं किया गया। लार्ड लेक ने दिल्ली के समस्त अधिकार अपने कब्जे में कर लिए और बारह लाख रुपये बादशाह की पेंशन नियत कर दी। अब बादशाह के हाथ में कुछ भी अधिकार न था। वह सिर्फ पेंशन- भोगी नाममात्र का बादशाह था। दिल्ली पर कब्जा रखने और बादशाह को कब्जे में रखने के लिए, दिल्ली में एक मजबूत सेना रखने की व्यवस्था की गई। एक बार बादशाह को दिल्ली से हटाकर मुंबई भेजने का विचार किया गया, परन्तु विद्रोह के भय से यह अमल में न लाया गया।

शाहआलम द्वितीय के बाद बादशाह अकबरशाह द्वितीय गद्दी पर बैठा, इसके समय में ही लखनऊ के नवाबों को बादशाह की उपाधि प्राप्त हुई और अंग्रेजों ने उन्हें बादशाह स्वीकार किया।

अब तक अंग्रेज अधिकारी दिल्ली के बादशाह को भारत का बादशाह मानते तथा कम्पनी सरकार का न्यायाधिराज स्वीकार करते थे। उनके साथ बातचीत करने, मिलने और पत्र-व्यवहार में सभी अफसर प्राचीन मर्यादा का पालन करते थे तथा प्रत्येक गवर्नर जनरल दिल्ली आकर उनसे मिलता था। गवर्नर की मुहर पर 'दिल्ली के बादशाह का फिदवी-खास' खुदा रहता था, परन्तु जब वारेन हेस्टिंग्स गवर्नर-जनरल हुआ, तब बादशाह अकबरशाह ने हेस्टिंग्स को दिल्ली बुलाना चाहा। परन्तु वारेन हेस्टिंग्स ने साफ इनकार कर दिया और कहा कि मुझे इस नियम को स्वीकार करने में एतराज है कि दिल्ली के बादशाह कम्पनी की सरकार के अधिराज हैं।

जब लार्ड एमहर्स्ट गवर्नर जनरल बनकर आए, तब दिल्ली आकर बादशाह से मिले। उन्होंने यह पहले ही तय कर लिया था कि इस मुलाकात में प्राचीन शाही अलकाब-अदाब काम में न लाए जाएंगे। जब गवर्नर जनरल बादशाह के सामने पहुंचा, तब वह तख्त पर बैठे थे। एमहर्स्ट बादशाह के सामने दाहिनी ओर की शाही कुर्सी पर बैठे। उसका रुख बादशाह के बायीं ओर था। रेजीडेण्ट और बड़े-बड़े तमाम अफसर खड़े थे।

जब बातचीत शुरू हुई, तो लार्ड एमहर्स्ट ने बातचीत में सब अलकाब-आदाब बदल दिए और इस प्रकार बादशाह तमाम दरबारियों की नजर में तुच्छ हो गया। उन्होंने पुराने वायदों को भी राजनैतिक छल कहकर पालन करने से इनकार कर दिया। इसके बाद जो पत्र-व्यवहार बादशाह से अंग्रेज सरकार का हुआ, उसमें भी कोई आदाब-अलकाब काम में नहीं लाया गया। इस घटना ने जबर्दस्त सनसनी पैदा कर दी, क्योंकि यह पहला अवसर था, जबकि गवर्नर जनरल ने खुले और निश्चित तौर पर ब्रिटिश सत्ता की स्वाधीनता का प्रतिपादन किया। लोग आमतौर पर यह कहने लगे कि हिन्दुस्तान का ताज दिल्ली के बादशाह के सिर से हटाकर अब अंग्रेजों के सिर पर रखा जाएगा।

कहा जाता है कि शाही खानदान और आश्रितों ने इस घटना पर गहरा शोक मनाया। उन्होंने अनुभव किया कि इससे पूर्व उन्हें मराठों के कारण और तकलीफें चाहे कुछ भी क्यों न सहनी पड़ी हों, किन्तु मराठे दिल्ली-सम्राट को समस्त भारत का न्यायाधिकारी स्वीकार करते रहे थे। अब पहली बार उनका रुतबा छीना गया है। बादशाह ने खिन्न होकर लार्ड लेक का दस्तखती इकरारनामा देकर राजा राममोहनराय को विलायत भेजा था। वहां वह गुम कर दिया गया और इस बात का खेद प्रकट कर दिया गया कि किसी भांति वह नहीं मिला।

अब तक कम्पनी का रेजीडेण्ट, जो दिल्ली में रहता था, साधारण अमीर की भांति बादशाह को बाकायदा तस्लीम, कोर्निश और मुजरा किया करता था। वह शाही खानदान के प्रत्येक बच्चे के प्रति प्रतिष्ठा प्रकट करता था। पर अब उसके स्थान पर मेटकाफ नियुक्त होकर आया। उसने अपना व्यवहार बिल्कुल बदल दिया और बारम्बार बादशाह का अपमान करना शुरू

कर दिया। बादशाह ने अपने पुत्र मिर्जा सलीम को युवराज- पद देना चाहा, परन्तु अंग्रेजों ने उसे इलाहाबाद के किले में नजरबंद कर दिया। अन्त में बादशाह मरा और उसका पुत्र बहादुरशाह पिता की भाग्यहीन गद्दी पर बैठा।

बहादुरशाह 'जफर' ने शाही खानदान में जन्म लिया था और उस तख्त पर बैठने का भी उन्हें अवसर मिला, जिस पर बैठकर उनके पूर्वजों ने तमाम हिन्दुस्तान पर हुकूमत की। परन्तु उनकी शक्ति शतरंज के बादशाह के बराबर भी न थी। वास्तव में वह एक पेंशनयाफ्रता रईस की हैसियत रखते थे। तालकिले की चारदीवारी के भीतर भी उनकी हुक्मरानी आवश्यकता से अधिक समझी जाती थी। उनके पिता अकबरशाह द्वितीय उनसे सदैव नाराज रहे। पिता से उनकी खटपट निरंतर रही। उनकी सारी जिन्दगी बड़ी बेमजा कटी। जब वह बासठ बरस के बूढ़े हो चुके, तब उनके पिता की मृत्यु हुई और उन्हें बादशाह बनने का अवसर मिला।

जवानी-भर उन्हें अपने वजीफे के पांच सौ रुपये माहवार में गुजर- बसर करनी पड़ी। उसी में चार रुपये माहवार वे अपने उस्ताद जौक को देते रहे और जब बादशाह हुए तो मन के सब बुलबुले किरकिरे हो गए थे। जफर जन्मजात कवि थे। उनकी प्रकृति भावुक थी। उनकी बड़ी अभिलाषा थी कि अच्छे- अच्छे कलाकारों से अपने दरबार की जीनत बढ़ाएं, परन्तु किस बिरते पर? खजाने में छदाम नहीं। बादशाह होने पर उस्ताद की तनख्वाह तीस रुपये माहवार कर दी थी, दूसरे शायरों का तो अल्ला बेली था।

जफर ने शाही खानदान के उपयुक्त ही शिक्षा पाई थी। तालकिले की उर्दू-ए-मुअल्ला उन्हें विरासत में मिली थी। तबीयत का रुझान कविता की ओर था ही। उनकी तबीयत रंगीन थी और इन्शा और जुअरत जैसी शायरी की ओर उनका रुझान था। यदि गालिब और मोमिन जैसा उस्ताद उन्हें मिला होता तो उनका काव्य भी उर्दू जगत में अपना स्थान रखता। पर उनके दुर्भाग्य से शाह नसीर जैसे उस्ताद उन्हें मिले, जो अटपटे काफियों, रदीफों और मुश्किल जमीनों पर गजलें कहना कमाले शायरी समझते थे। उन्हें न अच्छा उस्ताद मिला न उनकी अभिलाषाएं कभी पूरी हुईं। इससे उनकी कविता में न तो दिल्ली का सोजोगुदाज आया, न लखनऊ की रंगीनी। बस, उनकी शायरी मुरझाई- सी होकर रह गई। बुढ़ापे में अवश्य उन्हें उस्ताद जौक मिले, पर अब वह समय बीत चुका था जबकि उनका जौक सलीम बदला जा सके। मोमिन तो दिल्ली में रहते हुए भी दरबार में जाते ही थे। गालिब से मशबराए- सुखन लिया जा सकता था। पर उनकी तबीयत का रुझान गालिब के उपयुक्त न था। बस, उनके लिए जौक ही सही उस्ताद थे, क्योंकि वह भी शाह नसीर के शिष्य रह चुके थे। जफर बहुत ज्यादा शेर करते थे और उन्हें अपनी शायरी का नाज था। अपनी सैकड़ों गजलों में उन्होंने इसका उल्लेख किया है।

जौक का हाल यह था कि एक छोटे और अंधेरे घर की छोटी-सी अंगनाई में एक छोटी-सी पुरानी चारपाई बिछी रहती थी। चारपाई से अंगनाई की जो जगह घिर जाती थी, उसके बाद दो तरफ इतनी जगह खाली रहती थी कि एक आदमी आ- जा सकता था। चारपाई पर कोई बिछौना या दरी नहीं होती थी- उस खरेरी खाट पर वे अधेड़ उम्र के गम्भीर व्यक्ति हाथ में पेंसिल और सामने कागज रखे रुक-रुककर कुछ लिखते रहते थे। दो- चार किताबें चारपाई पर पड़ी रहती थीं। एक- दो उनके घुटनों के नीचे दबी रहती थीं। घर में बीवी चूल्हा जलाती थी, तो उसका

धुआं अंगनाई में भर जाता था। उनके दो बच्चे वहीं बैठे मचलते रहते थे, परन्तु उन बुजुर्ग को इन सब बातों से कोई सरोकार न था। इसी वातावरण में बैठकर लिखने- पढ़ने का अभ्यास हो गया था। सर्दी, गर्मी, बरसात कोई मौसम हो, उनकी सब बहारे वहीं बैठे गुजर जाती थीं। दिल्ली में मेले होते थे, ईद आती थी, शादी और गम दुनिया में थे, परन्तु उन्हें इनसे कोई सरोकार न था। वह उसी खरेरी चारपाई पर बैठ पेंसिल से कागज पर अटक- अटककर लिखते चले जाते थे। दिल्ली की जुबान और उस्ताद मलिकुशुआर- खाकानिए- हिन्द कहते थे। दिल्ली की जुबान और मुहावरों के वे बादशाह थे, उनकी शायरी की धूम दिल्ली से हैदराबाद तक थी और कसीदे लिखने में अपना हरीफ नहीं रखते थे।

किस्मत ने उन्हें उस्तादे-शहंशाह का बुलन्द रुतबा दिया, पर यही दुर्भाग्य का कारण बना। जौक पुश्तैनी कवि न थे, सिपाही के पुत्र थे। महत्वाकांक्षी और भाग्य ने उन्हें किले में पहुंचा दिया। वह अकबरशाह द्वितीय का युग था। बादशाह को तो शायरी से कुछ भी लगाव न था। हां, शाहजादा बहादुरशाह को कविता का शौक था। उनके पास तत्कालीन कवियों का जमघट लगा रहता था। शाहजादा खुद 'जफर' उपनाम से कविता करते थे। पहले वह शाह नसीर से कविता शुद्ध कराते थे। जब वह हैदराबाद चले गए तो काजिम अली से इस्लाह लेने लगे। वह भी जब काबुल चले गए तो जौक आए। उन दिनों शाही खानदान में झगड़े- बखेड़े चल रहे थे। अकबरशाह बहादुरशाह 'जफर' को अपना पुत्र ही नहीं तस्लीम करते थे। मुहताब अंग्रेजी सरकार के हुजूर में बाप- बेटों का मुकदमा चला। अन्त में पांच हजार की जगह पांच सौ रुपये माहवार शाहजादा को खर्च के मिलने लगे। अब वह उस्ताद को क्या दें! चार रुपये माहवार उस्ताद की तनख्वाह मुक़र्रर हुई। जब जफर बादशाह हुए तो पांच रुपये हो गई। फिर पांच से छः, छः से सात और अन्त में एक मुहताब बाद तीस रुपये ही माहवार पर गाड़ी रुक गई। अब इसी आय से उस्ताद के खानदान का खर्चा चलता था। उनकी मलिकुशुआर और खाकानिए- हिन्द जैसी सर्वोत्तम उपाधियां उनके कुछ भी काम नहीं आ रही थीं। पर केवल यही बात नहीं कि उन्हें उस्तादे शहंशाह होने पर गरीबी का मुंह देखना पड़ा, उनकी कमाले- शायरी की भी मिट्टी पलीद हुई।

बहादुरशाह जफर उर्दू में तो शायरी करते ही थे, ब्रजभाषा में भी रचना करते थे। होली के अवसर पर बादशाह की महफिल में ब्रजभाषा की धूम मच जाती थी। ऐसे ही एक अवसर पर बादशाह ने अपनी नई- नई रचना सुनाई, तो महफिल का शमादान कई बार बादशाह के सामने रखा गया। बादशाह रस ले- लेकर गा रहे थे।

जौक और मिर्जा गालिब में बनती नहीं थी, इसी से जौक के कारण गालिब को बहुत समय तक बादशाह के दरबार में सम्मान नहीं मिला। गालिब में आत्मसम्मान बहुत था। वे न खुशामदी थे, न दब्बू।

आगरा के पीपल मण्डी मुहल्ले में आज भी काला महल के नाम से एक बड़ी हवेली किसी कदर खस्ता हालत में है। यह हवेली किसी जमाने में राजा गजसिंह जोधपुर वालों की थी। आजकल यह इमारत सेठ लखमीचंद की मिल्कियत है और इसमें लड़कियों का स्कूल है। इसी हवेली में मिर्जा गालिब का जन्म हुआ था। हवेली के दरवाजे की संगीन बारहदरी पर गालिब अपनी चढ़ती जवानी के दिनों में निशिस्त रखते थे, इसी इमारत के पास खटिया वाली हवेली

और सलीमशाह के तकिये के पास दूसरी हवेली और इससे जरा आगे बढ़कर गड़रियों वाला कटरा है। और एक कटरा काश्मीरन वाला कहलाता है। इसी कटरे के कोने पर यह महाकवि अपने बचपन में अपने लंगोटिया यार राजा बलवन्तसिंह से पतंग लड़ाया करते थे। तब इनका असल नाम असदुल्लाखां ही पुकारते थे। आगरा में रहते हुए उन्हें अनेक औलिया के चरणों में बैठकर ज्ञानोपार्जन करना पड़ा। फिर आरम्भिक शिक्षा उन्होंने मौलवी मुहम्मद मुअज्जम से प्राप्त की। फिर मुल्ला अबदुस्समद ईरानी ने उन्हें फारसी का चस्का लगाया। मुल्ला अबदुस्समद फारसी के प्रकांड पंडित थे। उस समय मिर्जा असदुल्लाखां की उम्र पन्द्रह साल की ही थी। उस समय गुलाबखाना मुहल्ला, जहां मिर्जा का बचपन गुजरा, फारसी भाषा का केन्द्र था। तेरह साल की उम्र में उनका विवाह दिल्ली के प्रसिद्ध शायर नवाब इलाहीबख्शखां 'मारुफ' की ग्यारह वर्षीया कन्या उमराव बेज से हो गया। इसके दो-तीन साल बाद वह दिल्ली अपनी ससुराल ही में आकर बस गए। उनके श्वसुर न केवल चोटी के कवि ही थे, बल्कि पहुंच हुए फकीर और सूफी भी थे। उन्हीं की सोहबत में मिर्जा असदुल्लाखां का बड़ा नाम था। उनके रिश्ते की वजह से मिर्जा को किले और शहर में सब कोई नौशमियां कहने लगे और अब जिस समय का हम यहां उल्लेख करते हैं, उनकी उम्र साठ साल को पार कर गई थी, पर दिल्ली में वे कभी नौशमियां ही बने हुए थे। दिल्ली में उनका सांनिध्य अपने समय के दिग्गज विद्वान मौलवी खैराबादी से हुआ, जिसने उनके पांडित्य में चार चांद लगा दिए।

मिर्जा नराल से तुर्क थे और उनकी आकृति से तुर्कीपन झलकता था। जवानी में वह एक सुन्दर युवा थे। चौड़ा- चकला सीना, लम्बा कद, सुडौल इकहरा जिस्म, भरे- भरे हाथ- पैर, किताबी चेहरा, माथा चौड़ा, उठी हुई नाक, घनी और लम्बी पलकें, बड़ी- बड़ी बादामी आंखें, सुर्ख और सफेद रंग जिसमें शराब ने एक रंगत पैदा कर दी। छोटी- सी कटी हुई दाढ़ी, चेहरे पर व्यंग्य- मिश्रित हास्य- मुद्रा।

अलखुद्द नौशा मियां जल्दी- जल्दी खत बनाकर तैयार हुए। कपड़े बदले और पीनस मंगाई_ तब चले दिल्ली कालेज के फारसी- अरबी के अध्यापक बनकर। नौकरी का पहला दिन था। उन दिनों दिल्ली में फारसी के तीन चोटी के उस्ताद माने जाते थे, जिनमें प्रमुखता मिर्जा को दी गई थी। इस वक्त मिर्जा की आर्थिक अवस्था खराब थी।

मिर्जा की सवारी लेफ्टिनेण्ट गवर्नर मिस्टर टाअसन के बंगले पर पहुंची। इतला कराकर आप पालकी ही में बैठे रहे। साहब के असिस्टेंट ने कहा- “आइए।”

जब तक साहब मेरे इस्तकबाल को यहां नहीं आते, मैं कैसे पालकी से उतरूं?”

जवाब लेफ्टिनेण्ट तक पहुंचा। सब बात सुनकर मिस्टर टाअसन बाहर आए। हंसते हुए हाथ मिलाया और कहा- “मिर्जा साहेब, आप रस्मी मुलाकात के लिए नहीं आए हैं, नौकरी के लिए आए हैं। ऐसी हालत में स्वागत- तकल्लुफ का ख्याल दिल में न लाइए, बेतकल्लुफ चले आया कीजिए।”

नौशा मियां कुछ देर नीची निगाह किए खड़े रहे, फिर कहा- “किबला, मैं तो यह

समझा था कि सरकारी नौकरी करने से कुछ इज्जत बढ़ेगी। यह तो अभी पहला ही दिन है कि रंग ही दूसरा नजर आता है। बन्दे का ऐसी नौकरी को दूर ही से सलाम।

वे पलटकर पालकी में आ बैठे और कहारों से कहा- “लौट चलो।” अभी पालकी चांदनी चौक में बेगम के बाग के फाटक तक पहुंची ही थी कि लाला महेशदास जौहरी ने अपनी दूकान से झांका और देखा, मिर्जा की सवारी जा रही है। उन्होंने दौड़कर कहारों को इशारे से रोका और आगे बढ़कर कहा- “कैसी नालायकी है कि कबला बरसों में तो आप मेरी दूकान के आगे होकर गुजर रहे हैं और मैं हूँ इस्तकबाल के लिए खड़ा न रहा।”

मिर्जा साहेब मुस्कराए। पालकी से उतरकर दूकान की ओर बढ़ते हुए बोले- “मुआफ करना मेरी जान, मुझे तुम्हारी दूकान का खयाल ही न रहा। इस वक्त मिजाज जरा तुर्र्श हो रहा है।”

“तो चलिए, दूकान में जाकर सुस्ताइए। कुछ कहिए, कुछ सुनिए।”

मिर्जा दूकान में जाकर मसनद पर बैठ गए। लाला महेशदास ने कहा- “कहां से सवारी आ रही है?”

“अजी, नौकरी करने गया था, मगर इस्तीफा देकर चला आया।”

“अएहए, आज ही नौकरी और आज ही इस्तीफा? आज ही था मिलन दिन, आज ही हो गई विदाई।”

“मेरी जान, तीन साल पापड़ बेले। कलकत्ता तक दौड़ लगाई मगर पेंशन न मिलनी थी, न मिली। सोलह साल मुकदमा चला। चलो, खैर- सल्ला। अब रहा कर्जे का तूमार और बाकी उम्र, सो यह उम्र अब कर्जा चुकाने में कटेगी। मिर्जा मुहम्मद सुलतान फखरु मर ही गए। खुदा उन्हें जन्नत दे। जब तक जिन्दा रहे, चार सौ रुपये सालाना देने रहे। अब वह भी खत्मा। बादशाहे अवध वाजिदअली शाह पांच सौ सालाना भेजते थे, वह भी खत्म। अब सोचा, यह सौ रुपये माहवार की नौकरी है, कर लूं। सो उसे भी सलाम कर आया।”

“लेकिन हुआ क्या?”

“होता क्या? मैं पहुंचा और इतला कराई तो लेफ्टिनेंट गवर्नर इस्तकबाल को बाहर आए ही नहीं। जब आए तो फर्माने लगे, नौकरी है चले आया कीजिए भला देखो तो, अभी पहला ही दिन और इज्जत खत्मा बस, आखिरी सलाम कर आया।”

“तो अब पालकी को रुखसत कीजिए। दोपहर हो रही है। धूप में तेजी आ रही है। हो जाए शतरंज की एक- दो बाजी। क्या खयाल है?”

“खयाल अच्छा है लेकिन शतरंज नहीं, चौसर हो और बाजी बंद कर दो। हमारे इलाके में एक नया थानेदार आया है, उस मर्दूद ने यह हंसी- खुशी का सामान मुसीबत बना

दिया। उस मूजी ने उस दिन मेरे घर पर छापा मारकर मुझे दोस्तों के साथ गिरफ्तार करके चालान कर दिया। जुर्माना देकर अदालत से छुट्टी हुई। अब आज वह दौ सौ रुपये की रकम तुमसे बाजी जीतकर वसूल करूंगा।”

“आइए, फिर देखा जाएगा।”

लाला महेशदास ने एक तकिया उनकी ओर सरकाया। नौकर इतनी ही देर में फालसे का शर्बत बना लाया। शर्बत पीकर चौसर जमी। बाजी पर बाजी लगने लगी— जब दो सौ रुपये मिर्जा के सामने ढेर लग गए, तो अपने पासे फेंककर कहा- “अब बस, इतने ही चाहिए।”

महेशदास ने हंसकर कहा- “खैर, इस बार आप जीते, अबकी बार मेरी बारी है। सूद-दर-सूद वसूल करूंगा।”

“तो मेरी जान यह तो तुम्हारा धन्धा ही है। खैर, अब यह कहो, खाने में कितनी देर है?”

“खाना तैयार है। खाकर जरा आराम फरमाइए, फिर जरा शाम को आंखें सेंकने चलेंगे।”

“कहां?”

“अमीर जान के कोठे पर।”

“वह तो अलगनी पर डालने लायक है।”

“तो उससे क्या? एक लौंडिया आयी है।”

“क्या देख चुके हो?”

“अभी नहीं, पर सुना है ठाठ बड़े बांके हैं। अच्छों-अच्छों की दुआ कुबूल नहीं होती। नाक-नक्श कयामत का पाया है, उस पर नमक जामा जेबी शोखी-शरारत- - !”

“बस-बस, इतना काफी है।”

“तो खाना लगवाऊं।”

“नेकी और पूछ-पूछ।”

खाना लगा और दोनों दोस्तों ने खाया। एक हिन्दू और दूसरा मुसलमान। लाला महेशदास पक्के वैष्णव, खाने में मूंग की दाल और मूंग की मुंँगोडियां रसेदार, बेड़नी और खीर, कुछ अचार और मिठाइयां, ताजा खरबूजे। साथ बैठकर परहेज न था। खाना आरम्भ हुआ। मिर्जा ने कहा- “कल यूसुफअलीखां आये थे, हीरासिंह उनके साथ थे सुना है, मेरठ का हाल बेहाल है, सिपाही उबल रहे हैं।”

“किले का क्या हाल है, यह कहिए?”

“वही शेरों- सुखन, शराब, बुलबुल, गुल और साकी। बाकी सब खैर- सल्ला। मगर लाला, दाल में इस कदर घी क्यों खाते हो? इसे पचाने को किसका पेट लाऊँ?”

“यह सिरके का अदरक चखिए, अभी हजम हो जाएगा।”

“खाक हजम हो जाएगा! घर पर तो बस एक रोटी का फुलका सालन में भिगोकर लेता हूँ।”

“लेकिन किले का कुछ और भी हाल- चाल बताइए।”

“मिर्जा जवाबखां के साले विलायत अली बेग आये हुए हैं, वह उन्हें फिरंगियों के खिलाफ भेरे पर चढ़ा रहे हैं।”

“ठहरे कहां हैं, एक बार मिलना चाहता हूँ?”

“सआदतखां के कटरे में, जनरल की बीवी की हवेली में क्याम किया है।”

“आप तो किले का रामपुर जाने वाले थे?”

“जाकर ही तो आया हूँ। नवाब साहेब इसरार करते रहे। बरसात के आमों का भी लालच देते रहे, लेकिन माहे मुबारिक रमजान में मस्जिद जामा की तरावीज नागा हुई है। सोमवार को रमजान का चांद है। उसी दिन से हर सुबह को हामिदअलीखां की मस्जिद जाकर मौलवी जाफरअली साहेब से कुरान सुनूंगा। शब को मस्जिद जाकर तवारीख पढ़ूंगा। वक्ते सोम महताब बाग में जाकर रोजा खोलूंगा और सर्द पानी पीऊंगा।”

लाला महेशदास ने हंसकर कहा- “शुक्र है, अभी सोमवार में तीन दिन हैं, एक मांडा और लीजिए।”

“बस, अब बेसन मंगाओ।”

मिर्जा साहेब ने खाने से हाथ खींच लिया। बेसन से हाथ धोए, पान की गिलौरी खायी और मसनद पर उठंग गए। खिदमतगार ने मिट्टी का कागजी हुक्का पेश किया। मिर्जा ने कश लगाया। मुश्की खमीरी तम्बाकू की महक कमरे में फैल गई।

लाला महेशदास की टमटम पर शाम को दोनों दोस्त सवार होकर अमीरजान के कोठे पर पहुंचे। देखते ही अमीरजान ने उठकर पहले मिर्जा साहेब को और बाद में लाला महेशदास को सलाम किया। दोनों मसनद पर बैठे। अमीरजान ने उगालदान जरा आगे सरकाकर पानदान उठाया। सामने बैठकर वह छालियां कतरने लगीं। सरौते के साथ उसकी जबान भी चलती जाती थी। मिर्जा साहेब की ओर देखकर उसने कहा:

“अल्ला, मिर्जा साहेब, आप तो हमें भूल ही गए।”

“मुझे क्या मालूम कि आप किस खोह में रहती हैं।”

“बहुत बार इरादा किया कि एक बार जाकर सलाम कर आऊं, मगर हिम्मत न हुई उस दिन आपकी एक गजल सुनी तो तबीयत अभी तक बेचैन है।”

“सुदा खैर करे, कहां सुनी, कौन- सी गजल?”

“जोहरा के कोठे पर चांद मियां गा रहे थे।”

“चांद मियां कौन?”

“उन्हें क्या आप नहीं जानते? उनका तो उर्दू- एमुअल्ला तक शोर है। सुना है, ईद के जलसे पर बादशाह सलामत उनकी गजल सुनेंगे।”

“ओह समझा! मगर वह तो जौक के शगिर्द हैं, फिर मेरी गजल क्यों गा रहे थे?”

“यह मैं क्या जानूं, सोज- भरी आवाज और आपकी गजल, मुवअज्जाह होना ही था।”

“देखो मेरी जान, गायबाना तारीफ अच्छी नहीं। साफ कहो।”

“आपके सिर की कसम, हियाज न जाने कहां गुम हो गई। तभी पूरी गजल लिख ली थी, बस मतला याद रहा।”

“मतला क्या था?”

“अर्ज करती हूं।”

नक्श फरियादी है किसकी खोखिए तहरीर का,

कागजी है पैरहन- हर पैकरे तस्वीर का।”

उसी वक्त खिदमतगार ने हुक्का लाकर मिर्जा साहेब के सामने रख दिया। अमीरजान ने दो बीड़े लगाकर पेश किये। लाला के लिए कहार बाजार से पान बनवाकर लाया। लाला ने कहा- “हम तो तब जाने बी अमीरन कि पूरी गजल अभी नौशे मियां पढ़ें।”

“बस आपके हमले शुरू हो गए।”

“तो क्या हुआ?”

“तकलीफ माफ कीजिएगा नौशे मियां, वह गजल जरा पढ़ दीजिए, लाला का दिल रह जाए।”

“बस, देख ली तुम्हारी, बी अमीरजान! बात तो बस किरकिरी हो गई”

“नौशे मियां, लौंडी को इन लाला के सामने तो धेले की तीन न करो”

“खैर, सुनो-

नक्श फरियादी है, किसकी शोखिए तहरीर का,

कागज़ी है पैरहन- हर पैक्रे तस्वीर का’

“वह, क्या नाजुक ख्याली है!”

“काबे काबे तख्त जानी हाय तन्हाई न पूछ,

सुबह करना शाम का लाना है जुए शीर का।

जज्बए बे इस्तियारे शौक देखा चाहिए,

सीनए शमशीर से बाहर है दम शमशीर का!”

“हाय- हाय, भई नौशे मियां! क्या रंग निकाला है!”

“अजी, मोती बिखरे हैं”

“मेरी जान, शेर सुनो। अर्ज करता हूँ-

आगही- दामे शुनीदन जिस कदर चाहे बिछाए,

मुद्दा उनका है- अपने आलमे तकरीर का।

बस कि हूँ ‘गालिब’ असीरी में भी आतिश जेर पा,

मूए आतिश दीदा है हल्का मेरी जंजीर का॥”

“वाह, क्या कमाल है, नौशे मियां! हक हो तो हाथ चूम लूँ”

“चूमा- चाटी बाद में करती रहना, पहले लाला महेशदास की मुरादें तो पूरी कीजिए”

“लाला कसूर हुआ, पहले नहीं पूछा, माफ कीजिए”

“आपके लिए मुजायका नहीं। खैर साहब, वह आपका माल कहां है?”

“अख्खाह, तो यों कहिए कि आप मोती खरीदने आए हैं”

“खरीद की बात परख के बाद।”

अल्ला रे अल्ला, एक ही काइयां हैं आप।”

“अब टालिए ना, बुलवाइए।”

“और बेबाकी की सनद हासिल कीजिए।” मिर्जा साहेब ने हुक्के में एक कश खींचते हुए वाक्य पूरा किया।

लाला महेशदास जोर से हंस दिए। बेचारी अमीरजान ने झेंपते हुए कहा- “बस, रहने दीजिए। आप हाशिया न चढ़ाइए लीजिए, पान नोश फरमाइए।”

मिर्जा साहेब ने मुंह में पान ठूसकर हुक्के में दम लगाया। लाला महेशदास ने कहा- “आप दम लगा रहे हैं और हमारा दम निकल रहा है।”

“तो बी अमीरजान, कुछ दम-दिलासा दीजिए।”

बी अमीरजान ने लौंडी को इशारा किया और गौहर नपे- तुले पैर रखती हुई आई। झुककर आदाब अर्ज की। गुलाबी आंखें जैसे मोती कूट- कर बनाई थीं। सुडौल हाथ पांव नूर के सांचे में ढले अंग- प्रत्यंग, गोल कलाइयां, कयामत की जामा- जेबी दिलफरेब अदा, भोलेपन से मिली- जुली बैठी तो जैसे एक शमा रोशन हो गई।

लाला महेशदास ने पूछा- “अजी नाम तो बताओ, जरा याद कर लें।”

नौंची ने शरमाते हुए कहा- “गौहर।”

उन दिनों दिल्ली में गौहर के नाम का जादू फैल चुका था। बुलन्दशहर, मेरठ और दूर- दूर तक के लोग उसकी फूलों से शोभा बढ़ाते थे। नवाब साहब झज्जर, लुहारू, बल्लभगढ़ के राजा उस पर फिदा थे। रात- रात- भर महफिल जमती, सुबह टोकरी के बासी फूलों के हार मेहतार बटोरता। गौहर ने एक ठुमरी गायी। लाला महेशदास चुपचाप बैठे सुनते रहे। अभी ठुमरी के बोल चल ही रहे थे कि लाला महेशदास ने इशारा किया। नौंची उठकर उनके सामने गई। पांच अशर्फियां उसकी हथेली पर रखकर महेशदास उठ खड़े हुए। उन्होंने बी अमीरन से कहा- “बी अमीरन, बुरा न मानना, अभी लौंडिया महफिल जमाने के काबिल नहीं। उसे जरा तालीम दो।”

फिर उन्होंने मिर्जा की ओर देखकर कहा- “चलिए, नौंशे मियां!”

28

उधर लालकिले की जिन्दगी हंस रही थी। ठीक साढ़े तीन बजे जब सारी दिल्ली सो रही थी, लालकिले के बारूदखाने की ऊपरी मंजिल में गंगाजमनी पिंजरे के भीतर से जिस कारचोबी की वस्तनी चढ़ी थी, शाही बुलबुल अपनी कूक लगाती। रात के सन्नाटे में उस सुरीले पक्षी का यह

प्रकृत राग रात की विदाई का सूचक होता था। कूक सुनते ही बहरामखां गोलन्दजा कलमा पढ़ता हुआ उठ बैठता और तोप पर बत्ती देता। मोती मस्जिद में अजान का शब्द होता। चम्पी-मुक्कीवालिआं शाही मसहरी पर आ हाजिर होतीं और धीरे- धीरे बादशाह के पांव दबाने लगतीं। बादशाह बहादुरशाह की नींद खुलती। तुरन्त उठ खड़े होते। नित्य कृत्य से निपटकर और मस्जिद में आ नमाज में सम्मिलित होते। उसके साथ नमाज और फिर वजीफा पढ़ते।

एक दिन सूर्योदय के साथ ही वह मस्जिद से निकले। चारों ओर मुजरा करने वाले खड़े थे। दरवाजे पर पहुंचते ही हाथ में सुनहरा बल्लम लिए जसोलिनी ने आगे बढ़कर पुकारा- “पीरो मुर्शद, हुजूरे आली, बादशाह सलामत उम्रदराजा” तीन बार यह वाक्य उसने घोषित किया। इसके बाद ही दरबारी अदब से झुके, एक सम्मिलित मर्मर शब्द हुआ- “तरविकए- इकबाल दराजे उम्र!” बादशाह ने दीवाने भरहत में प्रवेश किया, असीलें अदब से सिर झुकाए खड़ी थीं। आंगन में एक सुसज्जित तख्त बिछा था, बादशाह उस पर बैठ गए। जसोलिनी दारोगा दोनों हाथों में अतलस चढ़ी बुकचियां लिए आ हाजिर हुई। गुसलखाने के दारोगा ने सामने आ सिर झुकाया। बादशाह उठकर गुसल करने चले गए।

जौनपुरी खली, सुगन्धित बेसन, चमेली- शब्बो, मोतिया- बेला, जुही- गुलाब के तेल बोतल में भरे तरतीब से रखे थे। शकावे में एक ओर ठंडा और दूसरी ओर गर्म पानी भरा था। चांदी के लोटे और सोने की लुटिया जगमगा रही थीं। गुस्ल हुआ। बादशाह पोशाक के कमरे में चले गए। ख्वाजा हसनबेग दारोगा ने आकर आदाब बजाया। उसने लखनऊ की चिक का कुर्ता दोनों ओर तुकमे घुंडियां, लट्ठे का चौड़े पांखवे का पाजामा जिसमें दिल्ली का कमरबंद पड़ा था, हाजिर किया। बादशाह ने पोशाक पहनी। मखमली चप्पल पहनी।

अब शमीमखाने का दारोगा आ हाजिर हुआ। उसने सिर में तेल डाला, कंधा किया, कपड़ों में इत्र लगाया। बादशाह तस्बीह खाने में आए, माला फेरी और दुआएं पढ़ीं। फिर दीवाने खिलवत में चले गए। दवाखाने के मुन्तजिम ने आगे बढ़कर कोर्निश की और हकीम अहसन की सील- मुहर बन्द शीशियां पेश कीं। मुहर तोड़ी गई और साकूती की प्याली तैयार की गई। तभी खवास ने चांदी की तश्तरी में छिलकों समेत दो तोला भुने चने पेश किए। बादशाह ने साकूती की प्याली पी, फिर चनों से मुंह साफ किया और बेगमी पान की एक गिलौरी खाकर मिट्टी के कागजी हुक्के को मुंह लगाया। इतने ही में खबरों का अफसर आ उपस्थित हुआ। रात- भर की खबरें सुनाई गई। बादशाह ने पान की एक और गिलौरी खायी और उठकर दीवाने खास को चले।

बादशाह तख्त पर बैठे। प्रत्येक विभाग के अधिकारी तथा अमीर- उमरा हाथ बांधे, नीची नजर किए चुपचाप निश्चल खड़े थे। नकीब ने पुकारा- “जिल्लेइलाही बरामद कर्द- मुजरा अदब से!” यह सुनते ही प्रत्येक अमीर सहमता हुआ आगे बढ़ा। बादशाह की कोर्निश की और हटकर पीछे अपने स्थान पर आ खड़ा हुआ। नकीब ने अमीर की हैसियत के अनुसार उसकी विरद बखानी। सब दरबारी मुजरे और कोर्निश की रस्म पूरी कर चुके, तो बादशाह ने एक मूट मुस्कान के साथ कृपापूर्ण दृष्टि से सबकी ओर देखा और फरमाया- “आज हमने एक गजल कही है, उसका पहला शेर पेश करता हूं:

यारे देरीना हैं, पर रोज़ हैं वह यार नया।

हर सितम उसका नया- “उसका हैं हर प्यार नया॥”

दरबार में संयुक्त कण्ठों का एक शोर उठा- “सुब्हान अल्लाह, कल मुलमुलूक मुलमुलूकलाम!”

गज़ल के हर शेर और हर मिसरे पर दरबार में हलचल थी और बढ़- बढ़कर तारीफें हुई। इस वक्त शाही दरबार में बादशाह के पीर, मौलाना फखर के पुत्र मियां कुतुबुद्दीन भी उपस्थित थे। वह बड़े आलिम समझे जाते थे। मियां कुतुबुद्दीन के पुत्र मियां नसीरुद्दीन, उर्फ काले साहेब को बादशाह ने अपनी शाहजादी ब्याह दी थी। शाह गुलाम हसन चिश्ती एक पहुंचे हुए महात्मा भी दरबार में थे। इन सबने बादशाह की इस बेकसी और दर्द से भरी हुई गज़ल में उनकी मजबूरियों को साक्षात् देखा तथा दाद दी। ‘सुब्हान अल्लाह’ कहा और बारम्बार ‘मलामुलमलूक मलूकलकलाम’ कहा।

अभी यह वाहवाही हो ही रही थी और शाही दरबार एक मुशायरे का रूप धारण कर चुका था कि एक चीत्कार ने सबका ध्यान भंग कर दिया। एक भंगन रोती- चीखती दरबार में घुस आयी और बादशाह सलामत के रूबरू जाकर वह धरती चूमकर और हाथ जोड़कर बोली- “जहांपनाह, मिर्जा महमूद मेरी दो मुर्गियां ले गए।”

तालकिले के बादशाह भंगन की फरियाद से खिन्न होकर बोले- “रे मत, जा मुर्गियां आती हैं।”

भंगन जमीन चूमती हुई उल्टे पैर लौट गई, शाहजादा मिर्जा महमूद की दरबार में तलबी हुई। वह आंखें नीची किए आ खड़े हुए।

“अरे महमूद, गरीब भंगन की मुर्गियां, हाय- हाय!”

बादशाह की आंखें करुणा से गीली हो गई- वाणी गद्गद हो गई। उन्होंने अलअहमद दारोगा की ओर दृष्टि फेरी और हुक्म दिया- “दिलवा दो, और एक बढ़ती।”

मिर्जा महमूद ने धरती चूमी और दारोगा ने उन्हें संग ले जाकर तीन मुर्गियां भंगन को दिलवा दीं।

तोशखाने के घिड़याल ने दस बजाए। विभागों के अधिकारियों ने अपने- अपने बस्ते खोलकर आवश्यक आज़ाएं लीं। दस्तखत कराए। ग्यारह बजते ही बादशाह उठे, चोबदारों ने ऊंचे स्वर में जय-जयकार किया। रंगमहल के लिए जसोलिनी दंड लिए आगे बढ़ी और पुकारकर कहा- “तरक्कीए इकबाल- दराज़्ो उम्र!” महल में सब सावधान हो गए। अब आगे- आगे बादशाह और पीछे- पीछे जसोलिनियां, कहारनियां, कश्मीरनियां, हबिशनें, तुर्कनें मोर्छल करती चलीं। बीच- बीच में पुकारतीं- ‘अदब होशियार! अदब होशियार!’

महल में बड़ी बेगम ने खड़े होकर सलाम किया। अमीरों की खातूनों और शाहजादियों ने भी सलाम किया। बादशाह आसन पर बैठे। सबको बैठने का हुक्म दिया। अब कश्मीरन महताब ने ज़रबफ़्त और कमख़्वाब के दो कसनों की मुहर तोड़ी। बेगम ने अपने हाथ से भण्डा तैयार किया। चांदी की सुराही से जल लिया और लखनऊ की गंगा- जमनी में पेश किया। बादशाह ने भण्डा लिया। बेगम ने पान की गिलौरी बना नीचे चांदी और ऊपर सोने का वर्क लगा पेश की। इतने में महताब आयी, अदब से झुककर अज़र् की- “खाना लगाया जाए?”

हुक्म हुआ- “लगाया जाए”

रोजों के दिन जामा मस्जिद पर आदमियों का बेशुमार जमघट हो जाता था। ज़ाबज़ा लोग गुट बनाए बैठते थे। कहीं कुरान के दौर होते थे। कहीं कुरान सुनाने वाले हाफ़िज़ एक- दूसरे को आयतें सुनाते थे। कहीं सूफी साधु अद्वैत- अनलहक की चर्चा करते थे। दस- बीस मज़्ो में ध्यान लगाए सुनते थे। कहीं कोई चुपचाप समाधिस्थ बैठा तस्बीह घुमाता था। उंगलियों पर तस्बीह के दाने जैसे- जैसे सरकते, वैसे ही उसके होंठ भी फड़कते थे। बहुत- से सैलानी इधर से उधर मटरग़्ती करते थे।

आखिर ईद का दिन बीत गया। रोज़ा खोलने का समय आ गया। सैकड़ों थाल विविध पकवानों से भरे चले आ रहे हैं। मुजाबिर लोग उन्हें लोगों में बांट रहे हैं। श्रद्धालु सदृहस्थ थालों पर थाल भेज रहे हैं। उनका अन्त नहीं है। शाही महल से भी भिन्न- भिन्न स्वादिष्ट पकवानों से भरी किशियां आ रही हैं। मुहल्ले- मुहल्ले से मिठाइयों से भरे थाल चले आ रहे हैं। किले की प्रत्येक बेगम, प्रत्येक शाहजादी अपने- अपने थाल भेज रही थी। शहर के सब अमीर- उमरा अपनी- अपनी हैसियत के अनुसार थाल भेज रहे थे। उनका तांता लग रहा था। थालों की संख्या सैकड़ों तक पहुंची रही थी और यह रोज़ का काम था। प्रत्येक अमीर कोशिश करता था कि उसका थाल दूसरों से बढ़कर रहे। थालों पर भिन्न- भिन्न रंग के रेशमी रुमाल थे और उनकी ज़री की झालरें भी एक से एक बढ़- बढ़कर थीं। मस्जिद में इस समय एक निराला समा बंधा था।

लालकिले से सैकड़ों फकीरों को भोजन भेजा रहा था। शाहजादियां और बेगमों इस काम में एक- दूसरे से होड़ ले रही थीं।

जो चांद की खबर सबसे पहले लाएगा, उसे शर्ई साक्षी के विश्वास पर पांच मोहरें और एक जोड़ा इनाम मिलेगा। इसी से सहरा के बाद बीस सांडनी- सवार, जिनकी सांडनियां पचास- पचास, साठ कोस का धावा मारती थीं, दिल्ली से चारों दिशाओं को चल पड़े और आठ- आठ, नौ- नौ मंजिल पर जाकर पड़ाव किए। सांडनी- सवार जंगल में, शहर वाले कोठों पर, स्त्रियां ममटियों पर, इस पर आज दिन छिपने में अभी देर है, पर लाखों आंखें आकाश को ताक रही हैं।

सूर्यास्त हुआ, बादशाह सलामत दीवाने- आम की छत पर आ रौनक अफ़रोज हुए। यहीं आज हफ़्तारी रोज़ा खोला जाएगा। कोरे- कोरे मटके, सौंधी- सौंधी सुराहियां, कागजी आबख़ोरे, पंक्तियों में चुने रखे हैं। धुले- धुलाए बड़े- बड़े हंडों में जस्त की कुत्तियां और मटकैने

मलाई और दूध से भरे रखे हैं। फालसे, खरबूजे, पिस्ते- बादाम की बर्फियां थालों में आरास्ता हैं। फिर दुनिया- भर की मिठाइयां, कचौरियां, समोसा, दाल मोठ, सेम के बीज, कल्मी बड़े, फुलकियां, दही- बड़े, किशितियों में संजोए रखे हैं। परन्तु आज हफ़्तार पर किसी की नज़र नहीं है- नज़र है चांद पर। बस, चांद पर। बादशाह ने सफ़ बांधकर नमाज़ पढ़ी और चांद को देखने उठ खड़े हुए। चारों ओर एक मन्द मर्मर शब्द सहड्डों कण्ठों से निकला- “अल्लाह- बिस्मल्लाह!” खाले में पांच मुहरें, एक बीड़ा, दो थाल गुलबदन के, एक थाल ज़रबफ़त का मौजूद है। जो सबसे पहले चांद देखेगा, उसे यह पुरस्कार मिलेगा।

आखिर चांद दिखाई दिया। यह था ईद का चांद! यह जवान ईद थी। मुज़रे आरम्भ हुए। जो सामने आया, झुककर सलाम किया। लौहरी दरवाजे से ग्यारह तोपें दगीं। नौबतखाने पर धौंसे पर चोट पड़ी। जामा मस्जिद के हौज़ पर बत्तीस गोले छूटे, शहर को ईद की खबर मिल गई और सारी दिल्ली ईद की तैयारी में संलग्न हो गई। ईद की खुशियां तो मझले रोज़ से ही शुरू हो चुकी थीं। घर साफ़ किये थे। कमरे, दाला, अंगनई, दरवाचों पर सफ़ेदी की गई थी। फर्श धोए जा चुके थे। दर्जियों और धोबियों की चांदी थी। काम की भीड़ से होश न था। सलेमशाही जूतेवालों की दूकानों पर ग्राहक टूटे पड़ते थे। सिरैया घर- घर टूट रही थीं। खतूनें अपनी कोमल कलाईयों को हवाई चूड़ियों से आरास्ता कर चुकी थीं। मनिहारिन दांतों में मिस्सी की धड़ जमाए, पान की गिलौरियां कचरती हुई ठसक से चूड़ियां पहनाती और गहरे इनाम लेती जा रही थीं, मालामाल हो रही थीं। घर- घर आनन्द- उत्सव मनाए जा रहे थे। बच्चों की खुशी का ठिकाना न था। सबको नये वस्त्र मिले थे। सांझ को ही नई जूतियां पहनी गई थीं। उन्हें सिरहाने रखकर सोए थे। लड़कियां अपनी गोटे- किनारे की पोशाकें देख- देखकर फूली न समाती थीं। कल वे ईद की पोशाक पहनेंगी। उन्हें भूख- प्यास भला कहाँ? बस पोशाक, को निहार रही हैं। मां खाने को कहती है, मगर लड़की ने मेहंदी लगाई है, वह कह रही है- “अम्मी, हमने तो मेहंदी रचाई है, खाना न खाया जाएगा।” रात बीती। अजान की आवाज़ सुनाई पड़ी। गृहिणी हड़बड़ाकर उठ खड़ी हुई, चूल्हा और सिरैया, छुआरे, खांड निकाली, चूल्हे पर सिरियों का पानी चढ़ाया। प्रातः की नमाज़ अदा हुई और सिरैया तैयार। घर साफ़ किया, फर्श फराश किया, कपड़े बदले और मियां, बीबी, बच्चे सब चले ईदगाह की ओर। लौटे तो मिठाइयां, खिलौने, तरकारियां खरीदकर। अब इंदियां शुरू हुई। किसी को पांच, किसी को एक रुपया, किसी को अठन्नी, चवन्नी, दुअन्नी। दिन- भर चला यही सिलसिला। शाम को भाई अपनी छोटी बहनों के घर और बाद में अपनी बेटियों के घर इंदियां देने गए।

मनिहारिन घर में आई। घर में प्रवेश करते ही बहुओं ने खड़े होकर झुककर सलाम किया, बेटियों ने सलाम किया, मनिहारिन मालकिन के पास पहुंची। उसने गर्दन झुकाकर, मुस्कराकर स्वागत किया। मां का संकेत पाते ही बहू ने सिरैया, कचौरियां, मिठाई मनिहारिन के सामने रखीं। मनिहारिन ने खाया, कुल्ली की, पानी पिया। बीबी ने दो बीड़ा पान बनाया। जर्दा दिया। मनिहारिन ने गिलौरियों मुंह में ठूसीं और असीस दी- “बूढ़ सुहागन, साईं जीएं, बच्चे जीएं- - ।”

बीबी ने अढ़ाई रुपये बटुए से निकालकर सामने रखे और कहा, “लो बुआ, अपना

नेगा” मनिहारिन ने चूड़ियां तो पांच आने की पहनाई थीं, पर इस वक्त तिनककर पीछे हटी और कहा- “वाह बेगम! अढ़ाई कैसे? हमेशा तो इस ड्योढ़ी से पांच मिलते रहे और इस बार तो अल्लाह रखे, तुम्हारी हसना ससुराल से पहली बार आई हैं। इसकी ईदी भी लूंगी।” बेगम ने एक अठन्नी और बढ़ाई तो मनिहारिन और बिगड़ गई। उसने कहा- “अये- हये! सब खर्चे तो पूरे हुए, मुए मेरे ही दो रुपये काट रही हो। ना- ना, बड़ी बेगम तो कभी हुज्जत करती ही न थीं।” बेटियां, बहू- सब चुप! मियां भी चुप। बेगम ने एक रुपया और बढ़ाया और कहा- “बस करो, अल्लाह ने चाहा तो बकरीद पर कसर निकाल दूंगी।” मनिहारिन ने कहा- “ऐ बीवी! तुम्हारी जूतियों के तुफैल से बच्चों की ईद हो जाती है। खुदा सलामत रखे- बुढ़िया का मान रख लेती हो। बूढ़ सुहागन होओ, दूधो नहाओ, पूतो फलो।”

यह हुई दिल्ली की ईद। अब चलिए लालकिले में चांद हो गया, इनाम बंट चुके। महलों में रात-भर धूम रही। इक्कीस तोपों से चांद की सलामी हुई। मोदीखाने, तोपखाने के दारोगा अपने- अपने सामान की प्रेफ़रिस्ट बनाने में परेशान। शाहजादियां बुजुर्गों को चांद का आदाबर्ज कर रही हैं। छह घड़ी रात रही तो किले से तम्बू और छोलदारियों के छकड़े ईदगाह की ओर चले।

शामियाने तने, तंबू लगे, डेरे पड़े। फौजदारखां के दारोगा आए और हुक्म दिया- ‘हाथी रंगो!’ मौलाबक्स हाथी रंग गया। शाही खिलअत तैयार हुआ। शाहजादियां, बेगमात चूड़ी मेहंदी में लगी हैं। चार बजे ईद की तोप दगी। बादशाह जगे- गुस्ल किया, शाही पोशाक पहनी, फिर मोती मस्जिद में आ नमाज पढ़ी और जवाहरखाने ने दस्तर खान बिछाया। बादशाह ने एक चम्मच सिवैयां और एक टुकड़ा छुआरा खाकर इफ्तार किया। इसके बाद सूखा निवाला और मसूर की दाल। कुल्ती की, पान खाया, खड़े हुए। रखवालियों ने पुकारा- “अल्ला रसूल की अमान!” तरपचियों ने नफीरी बजाई। सवारी का हुक्म हुआ। बादशाह बाहर आए। दोनों तरफ खड़ी फौजों ने सलामी दी। फौदार खां ने हाथी लगाया। हवादान लगाया। बादशाह हवादान में बैठे। बाजे बजने लगे और बादशाह दीवाने आम में पहुंचे। अहलकारों ने कोर्निशें कीं। अब बादशाह हाथी पर सवार हुए। इक्कीस तोपों की सलामी छूटी। तलवारों की छांह और बाजों की धूमधाम में बादशाह किले से बाहर चले। पालकी में शहजादे, घोड़ों पर अमीर, बीच में बादशाह का हाथी, आगे- पीछे फौज। शाही जुलूस ईदगाह की ओर चला। ‘हुक्मे आम’ की पुकार हुई- “कोई प्रार्थी दुखिया आए और अपनी विपत्ता सुनाए!” लाहौरी दरवाजे तक चांदी के फूल गरीबों और फकीरों को लुटाए गए। आगे का रास्ता तेज था। नक्काश खत्म। खैरात खत्म। मेला यहीं से शुरू। तुरई, गुब्बारे, कल का घोड़ा, तीसरी किशती और न जाने क्या- क्या खिलौने बिक रहे हैं, बच्चे मचल रहे हैं।

ईदगाह आई। शाही हाथी रुका। बादशाह नीचे उतरे और ईदगाह में प्रविष्ट हुए। तकबीर आरम्भ हुई। नीयत बांधी, दुआना पढ़ा, सलाम फेरा और नमाज खत्म हुई। अब खुतबे का समय आया। शाही हुक्म होते ही तोशेखाने का दारोगा आगे बढ़ा, किशती में खिलअत के सात कपड़े और जड़ाऊ परतला इमाम साहेब को पेश किया गया। बनारसी दुपट्ट उनकी कमर में बांधा गया। तलवार कमर से लगाई गई। इमाम साहेब ने कुल्ते पर हाथ रखकर खुतबा पढ़ा। बादशाह का नाम आते ही उपस्थित जन में ‘आमीन’ का नाद उठा। खुतबा खत्म हुआ। पचास रुपये नकद इमाम को बरख्शे गए। बादशाह हवादान में बैठकर किले में आए।

बादशाह दरबारे खास में तख्त पर बैठे। कम्पनी के रेजीडेंट ने आगे बढ़कर नजर पेश की- कोर्निश की। फिर दूसरी भेंट हुई। इनाम बंटे, बारह की तोप चली। बादशाह जनानखाने में आए। बेगमात ने भेंट दी, खाने का वक्त हुआ, धौंसे पर पड़ी। देग का लंगर लुटा, ईद का खाना बंटा, ईदियां दी गईं- बादशाह दस्तरखान पर बैठे।

रात हुई। ईद की रात के चप्पे- चप्पे, कोने- कोने पर कंदीलें जगमगा रही थीं। वृक्षों पर कुमकुमे लटक रहे थे। मोती मस्जिद के कंगूरों पर अबरक की लालटेनें जड़ी थीं। नाच- रंग, संगीत में लालकिला चौथी की दुलहिन बन रहा था। उन दिनों दिल्ली में गोवध नहीं होता था। अंग्रेज दिल्ली की सरहद से बाहर गाय काटते थे।

यह वह समय था जब भारत में भीतर-ही-भीतर अशान्ति के चिन्ह उठ रहे थे। बादशाह की आर्थिक स्थिति बहुत नाजुक थी। बादशाह ने अंग्रेजों को खर्च की रकम अधिक देने को लिखा, पर उन्हें जवाब दिया गया, ‘आप अपने और अपने वंशजों के समस्त अधिकार कम्पनी को सौंप दें, तो यह रकम बढ़ सकती है।’ बादशाह ने इसे नामंजूर किया।

अब तक भी यह रस्म बनी थी कि ईद या नौरोज़ या बादशाह ही सालगिरह पर गवर्नर जनरल और कमाण्डर- इन चीफ? दोनों शाही दरबारी में हाजिर होकर या रेजीडेंट द्वारा नजरें पेश करते थे। बहादुरशाह के तख्त पर बैठने तक भी रस्म की गई थी। परन्तु कुछ ही वर्ष बाद लार्ड एलेनब्रुक ने इस नज़र को भी बन्द कर दिया।

गवर्नर- जनरल लार्ड एलेनब्रुक ने रेजीडेंट टामस मेटकाफ से कहा- “बादशाह की ऊपरी शानो- शौकत का शृंगार अब उतर चुका है। उसके वैभव की पहली- सी चमक- दमक नहीं रही। बादशाह के वे अधिकार जिन पर तैमूर के खानदान वालों को घमण्ड था, एक- दूसरे के बाद छिल चुके हैं। इसलिए बहादुरशाह के मरने के बाद कलम के एक डोबे में ‘बादशाह’ की उपाधि का अन्त कर देना कुछ भी कठिन नहीं है।”

बादशाह की नजर जो गवर्नर जनरल और कमाण्डर- इन चीफ देते थे, बन्द हुई। कम्पनी का सिक्का, जो बादशाह के नाम ढाला जाता था, बन्द कर दिया गया। गवर्नर जनरल की मुहर में जो पहले ‘बादशाह का फिदवीखास’ शब्द रहते थे, वे निकाल दिये गए, और हिन्दुस्तानी रईसों को तस्बीह कर दी गई कि वे अपनी मोहरों में बादशाह के प्रति ऐसे शब्दों का उपयोग न करें। इन सब बातों के बाद कम्पनी ने फैसला कर लिया कि दिखावे की अब कोई भी बात ऐसी न रखी जाए, जिससे अंग्रेज बादशाह के अधीन मालूम हो। दिल्ली के बादशाह की उपाधि रहने देना कम्पनी की इच्छा पर निर्भर रह गया।

सन् 1839 में बादशाह के पुत्र दाराबख्त की मृत्यु हुई। बादशाह उसके बाद बेगम जीनतमहल के पुत्र शाहजादे जवांभख्त को युवराज नियत करना चाहते थे। परन्तु अंग्रेज-सरकार ने बादशाह के आठ पुत्रों में से मिर्ज़ा कीमास के साथ एक गुप्त सन्धि करके उसे युवराज स्वीकार कर लिया। उस सन्धि में तीन बातें थीं- “बादशाह के स्थान पर ‘शाहजादा’ कहा जाएगा, दिल्ली का किला खाली करना पड़ेगा। एक लाख मासिक के स्थान पर पन्द्रह हजार

रुपये मासिक खर्च के लिए मिला करेगा।”

1857 का विद्रोह मेरठ में फूट निकला और उस दिन बागी फौजें दिल्ली को चल दीं। ये फौजें 11 मई को दिल्ली में आ पहुंचीं। दिल्ली के सिपाही उनसे मिल गए और अफसरों को मार डाला। संयुक्त सेना कश्मीरी दरवाजे से नगर में घुसी। दरियागंज की तमाम अंग्रेजी बस्ती जला डाली गई और बहुत-अंग्रेज काट डाले गए। दिल्ली के किले पर तुरन्त उनका कब्जा हो गया। इतने में मेरठ की पैदल फौज और तोपखाना भी आ पहुंचा। उसने किले में घुसते ही बादशाह को ग्यारह तोपों की सलामी दी। बादशाह ने उनसे कहा- “मेरे पास कोई खजाना नहीं। मैं आप लोगों को तनख्वाह कहां से दूंगा?”

सिपाहियों ने कहा- “हम लोग हिन्दुस्तान-भर के अंग्रेजी खजाने को लूटकर आपके कदमों पर डाल देंगे।”

अन्त में बादशाह ने गदर का नेतृत्व ग्रहण किया। दिल्ली में प्रत्येक नागरिक ने विद्रोह का स्वागत किया। जो अंग्रेज जहां मिला, काट डाला गया। दिल्ली-निवासी, विद्रोही सिपाहियों को ओलों और बताशों का शरबत लुटिया में घोल-घोलकर पिलाने लगे। दिल्ली का अंग्रेजी दूतावास लूटकर जला दिया गया। अन्य अंग्रेजी इमारतें भी तहस-नहस कर दी गईं। दिल्ली के मैंगज़ीन में नौ लाख कारतूस, दस हजार बंदूकें तथा बहुत-सा गोला-बारूद था। मैंगज़ीन में नौ अंग्रेज और कुछ हिन्दुस्तानी सिपाही थे। हिन्दुस्तानियों ने जब किले पर हरा और सुनहरा झण्डा फहराते देखा, तब वे भी उनमें मिल गए। नौ अंग्रेजों ने मैंगज़ीन का बचना असम्भव देखकर उसमें आग लगा दी। उसके धड़ाके से तमाम दिल्ली हिल गई। नौ अंग्रेज, पच्चीस सिपाही और तीन सौ आदमी इधर-उधर टुकड़े-टुकड़े होकर बिखर गए। बन्दूकें विद्रोहियों के हाथ आयीं।

शीघ्र ही इस विद्रोह की आग भारत-भर में फैल गई। असंख्य अंग्रेज मारे-काटे गए और लूट लिये गए।

लार्ड कैनिंग ने एक भारी सेना जनरल नील की अधीनता में विद्रोह के दमन को भेजी। यह सेना जिधर से गुजरी, रास्ते-भर बिना विचार कत्लेआम करती, गांवों को लूटती और फूंकती बढ़ी चली।

फौजी और सिविल अदालतें, बिना किसी तरह के मुकदमे का ढोंग रचे और बिना मर्द-औरत या छोटे-बड़े का विचार किए भारतवासियों का संहार कर रही थीं। बूढ़ी औरतों और बच्चों का उसी तरह वध किया गया, जिस प्रकार विद्रोहियों का। उन्हें सोच-समझकर फांसी नहीं दी गई। बल्कि उन्हें उनके गांवों के अन्दर जलाकर मार डाला गया, गोली से उड़ा दिया। सड़कों के चौरास्तों पर, बाजारों में जो लाशें टंगी हुई थीं, उनको उतारने में प्रातःकाल से संध्या तक मुरदे ढोने वाली आठ-आठ गाड़ियां बराबर तीन महीने तक लगी रहीं।

जनरल नील भयानक मार-काट करता हुआ इलाहाबाद तक बढ़ा चला आया। इलाहाबाद का किला अब भी सिखों की बदौलत अंग्रेजों के अधिकार में था। वहां के विरोधी नेता

मौलवी लियाकत अली ने डटकर युद्ध किया। अन्त में तीन लाख रुपये का खजाना लेकर कानपुर को भाग आया। इलाहाबाद में भयानक कत्ले-आम और अग्निकाण्ड करके वह सेना आगे बढ़ी। लखनऊ, कानपुर इत्यादि विद्रोह के मुख्य केन्द्र थे। उधर सिखों ने किसी भांति विद्रोह में सहायता न दी। बादशाह ने अपने खास दूत ताजुद्दीन को पटियाला, नाभा आदि रियासतों के राजाओं के पास भेजा था, परन्तु उन्होंने कहा- “हम इस मौके की इन्तजारी में हैं। बादशाह का हुक्म होते ही दुश्मनों को एक ही दिन में मार भगाएंगे।”

उधर अंग्रेज सरकार ने इन राजाओं को अपने अधीन करने में बड़ी-बड़ी युक्तियां काम में लीं।

अब सिख राजाओं की सहायता लेकर सर हेनरी बर्नार्ड भारी सेना ले, दिल्ली चढ़ आए। उन्होंने भी मार्ग में लूट-मार, अग्निकाण्ड, कत्लेआम बराबर जारी रखा। इधर दिल्ली में पल्टन और खजाने जमा हो रहे थे। बादशाह के नाम राजभक्ति के पत्र आ रहे थे। शहर में बारूद और हथियारों के कारखाने खुल गए थे, जिनमें दर्जनों तोपें रोज ढलती और हजारों मन बारूद तैयार होता था। बादशाह हाथी पर बैठकर नगर में निकलता और रोज नगरवासियों को उत्साहित करता था।

बादशाह ने एक एलान छपाकर सब फौजों और बाजारों में बंटवाया था। वह इस प्रकार था- “तमाम हिन्दू-मुसलमानों के नाम। हम महज अपना धर्म समझकर जनता के साथ शरीक हुए हैं। इस मौके पर जो बुजदिली दिखाएगा- भोलेपन के कारण दगाबाज़ फिरंगियों पर एतबार करेगा- वह जल्द शर्मिन्दा होगा और इंगलिस्तान के साथ अपनी वफादारी का वैसा ही इनाम पाएगा, जैसा लखनऊ के नवाबों ने पाया। इसके अलावा इस बात की भी जरूरत है कि इस जंग में तमाम हिन्दू और मुसलमान मिलकर करें और किसी प्रतिष्ठित नेता की हिदायतों पर चलकर इस तरह का व्यवहार करें जिससे कि अमनो-अमान कायम रहे और गरीब सन्तुष्ट रहे तथा उनका रुतबा और शान बढ़े। जहां तक मुमकिन हो सकता है, सबको चाहिए कि इस एलान की नकल करके किसी आम जगह पर लगावें।”

अब दिल्ली में युद्ध छिड़ा। मिर्जा मुगल सेनापति थे। पर वे सुप्रबन्धक और सुशासक न थे। न कोई सेनापति ही उस समय योग्य था। बादशाह ने उसकी जगह बख्तखां को प्रधान सेनापति बनाया। वह वीर और साहसी था। उसके साथ चौदह हजार पैदल, तीन हजार सवार और अनेक तोपें थीं। उसने सेना को छः महीने का वेतन पेशगी बांट दिया था और चार लाख रुपया बादशाह को नजर किया था। उसने नगर में घोषणा कर दी थी कि कोई शस्त्रहीन न रहे। जिसके पास अस्त्र न थे, उन्हें मुफ्त हथियार बांट दिये गए।

4 जुलाई को बख्तखां ने अंग्रेजी सेना पर आक्रमण किया। छोटे-बड़े घमासान युद्ध हुए। जयपुर, जोधपुर, सिन्धिया और होलकर अभी तक आगा-पीछा कर रहे थे। फिर भी बादशाह के पास पचास हजार सेना थी, परन्तु सेनानायक का अभाव था। बख्तखां उच्च कुल-वंश का न था, और कुलीन राजे उसकी अधीनता में युद्ध करना अपना अपमान समझते थे। बादशाह ने जोश में आकर एक खत राजपूत राजाओं को अपने हाथों से लिखा:

“मेरी यह दिली ख्वाहिश है कि जिस जरिये और जिस कीमत पर भी हो सके, फिरंगियों को हिन्दुस्तान से बाहर निकाल दिया जाए। मेरी यह जबर्दस्त ख्वाहिश है कि तमाम हिन्दुस्तान आजाद हो जाए। इस मकसद को पूरा करने के लिए जो लड़ाई शुरू की गई है, उसमें उस वक्त तक फतहयाबी नहीं हो सकती, जब तक कि कोई शरूख अपने ऊपर ऐसी जिम्मेदारी ले ले, जो कौम की मुख्तलिफ ताकतों को संगठित करके एक ओर लगा सके, और अपने को तमाम कौम का नुमाइन्दा कह सके। अंग्रेजों को हिन्दुस्तान से निकाल देने के बाद अपने जाती फायदे के लिये हिन्दुस्तान पर हुकूमत करने की मुझे जरा भी ख्वाहिश नहीं है। अगर आप देशी राजे दुश्मन को निकालने की गरज से अपनी तलवार खींचने के लिए तैयार हों, तो मैं इस बात के लिए राजी हूँ कि अपने तमाम शाही हुकूमत और अख्तियारत राजाओं के ऐसे गिरोह के हाथों में सौंप दूँ जो इस काम के लिए चुनी जाएं।”

सत्तावन की आग दिल्ली में धाँय-धाँय जल रही थी। दिल्ली में लूटपाट और खून-खराबी का बाजार गर्म था। विद्रोही शहर में घुस आए थे। जामा मस्जिद में जगह-जगह चूल्हे बने हुए थे- सिपाही रोटियां पका रहे थे। कहीं घोड़ों का दाना दला जा रहा था। जाबजा घास के अम्बार लगे थे। शाहजहां की वह जगहविख्यात जामा मस्जिद अस्तबल बन चुकी थी। गिरजाघर और अंग्रेजों की कोठियां लूटकर उनमें आग लगा दी गई थी। औरत-बच्चे जो यहां मिले काट डाले गए थे। अनेक अंग्रेज अफसर चेहरे पर कालिख पोते, हाथ-पैर रंगे, फटे-चिथड़े पहने कहीं-कहीं भाग रहे थे। सड़कों पर घोड़ों, बगियों, पालकियों और पैदलों की भरमार थी। चारों तरफ से बन्दूकों की आवाज आ रही थी। घायल कराह रहे थे। सारे बाजार बन्द, गलियों में सन्नाटा, सब घर-बन्द। नित नया कोतवाल बदला जाता था। विद्रोही, जहां जो मिलता लूट लेते। शाही खजाने में धेला न था। बादशाह का हुक्म कोई मानता था, न शाहजादों की पूछ थी। गोलों से शहर खंडहर हो गया था। दीवानेखास का संगमरमर का तख्त चूर-चूर हो चुका था। अंग्रेज स्कूल जला डाला गया था। लोगों के मकानों में गोलियां इतनी भरी थीं कि लड़के उन्हें ढेर-ढेर जमा करते थे। मैगज़ीन फटने से उसका समान-टोपी-बन्दूक, तलवार और संगीन लोग उठाकर अपने घर ले गये थे। खलासियों ने रुपये के तीन सेर के हिसाब से तोल-तोलकर हथियार बेचे थे। तांबे की चादरें रुपये की तीन सेर और बन्दूक आठ आने की बिक रही थी। अच्छी-से-अच्छी अंग्रेजी किस्म चार आने में महंगी थी। संगीन को तो कोई पूछता ही न था। विद्रोही नगर में किसी की आन न मानते थे। जिन्हें लूट से गहरा माल हाथ लगा था वे जंगलों में भाग गए थे। दाम मांगने पर दुकानदार मार डाला जाता था। लुटेरों के पास लूट का इतना माल जमा हो गया था कि वे बोझ के कारण कूच ही नहीं कर सकते थे। वे रुपयों से मुहरें बदलवाते थे। इसलिए उन दिनों दिल्ली में सोलह रुपये की मुहर पच्चीस रुपयों में बिक रही थी। ये अंधेरगर्दी के अंधेरे दिन थे।

पच्चीस अगस्त तक युद्ध होता रहा। इसके बाद विद्रोही सेना में द्वेषभाव उत्पन्न हो गया। अब साहस करके अंग्रेजी सेना नगर की ओर बढ़ने लगी। इस समय अंग्रेजी सेना में पांच हजार सिख, गोरखे और पंजाबी तथा ढाई हजार कश्मीरी और स्वयं महाराज जींद अपनी सेना-सहित थे। दोनों ओर मार-पीट होती गई। अन्त में 14 सितम्बर को अंग्रेजी सेना दिल्ली में घुस आई। इसी दिन सेनापति निकलसन घायल हुआ और 23 सितम्बर को अस्पताल में मरा। विद्रोही सेना की अव्यवस्था बढ़ गई। कुछ सेना दिल्ली छोड़कर चल दी। अन्त में 19 सितम्बर तक

अधिकांश नगर अंग्रेजी अधिकार में आ गया।

आंधी आई और गई। अंग्रेजी तोपों, किरचों, संगीनों तथा भेदनीति ने मटियामेट कर दिया। गोलियां बरस चुकी थीं। दिल्ली में कत्लेआम हो रहा था। चांदनी चौक फव्वारे से घंटाघर तक फांसियां टंगी थीं। चारों ओर से ला- लाकर लोगों को फांसी पर लटकाया जा रहा था। उनमें बूढ़े भी थे, रोगी भी थे, जवान और दुधमुंहे बच्चे भी थे। सात परदों में रहने वालीयां मुंह खोले, बालों में धूल झोंके अपने- अपने सगे- सम्बन्धियों की लाशें ढूंढती फिर रही थीं। बच्चे 'अब्बा- अब्बा' चिल्ला रहे थे। कोई रो रहा था, कोई पागल की तरह फटे हाल घूम रहा था। लोगों के घर लूट लिए गए थे और उनमें आग लगा दी गई थी।

बादशाह सलामत जल्दी-जल्दी नमाज पढ़ रहे थे, आंखों से आंसू बह रहे थे। एक छोटी-सी शाहजादी ने उनके पास आकर कहा- “अब्बा हुजूर, आप यह क्या कर रहे हैं?” बादशाह ने उनके पास आकर कहा- “बेटी, खुदा से दुआ मांगता हूं कि वह मेरी औलाद पर रहम करे।”

उन्होंने सब सगे- सम्बन्धियों को बुलाया। एक- एक मुठ्ठी हीरे सबको दिए और कहा- “खुदा हाफिज!” वह लालकिले से निकले और सीधे निजामुद्दीन की दरगाह में पहुंचकर सीढ़ियों पर बैठ गए। उनकी दाढ़ी में धूल भरी थी और चेहरा उतरा हुआ था। कुछ ख्वाजासरा, कहार और शुभवचिन्तक साथ थे। खबर सुनते ही गुलामहुसैन चिश्ती दरगाह में आये। उन्हें देखते ही बादशाह खिलखिलाकर हंस पड़े। कहने लगे, “वही हुआ जो होना था। मगर मैं मुगल तख्त का आखिरी वारिस हूं। मुगलों का चिराग बुझ रहा है। खून- खराबी से क्या लाभ है, इसी से लालकिला छोड़कर चला आया। मुल्क खुदा का है, जिसे चाहे दे।” उन्होंने एक छोटा सा संदूक चिश्ती को दिया और कहा- “यह तुम्हारे सुपुर्द है, इसमें हजरत पैगम्बर की दाढ़ी के पांच बाल हैं। ये आज तक हमारी अमानत में थे, अब तुम सम्भालो और कुछ खाने को घर में हो, तो ले आओ।”

चिश्ती ने कहा- “बेसनी रोटी और सिरके की चटनी है।”

“बस वही ले लाओ।”

बादशाह ने एक रोटी खायी, पानी पिया और हुमायूँ के मकबरे में जा बैठे। बख्तखां मकबरे की दाहिनी ओर फौज लिए पड़े थे। उन्होंने बादशाह से कहा- “अभी आप हिम्मत न हारिए। मेरे साथ दिल्ली से निकल चलिए। हम पूरी तैयारियों से फिर युद्ध करेंगे।” पर मिर्जा इलाहीबख्श, जो अंग्रेजों के एजेण्ट थे, बादशाह को भागने से रोकते रहे।

बादशाह ने बख्तखां से कहा- “बहादुर, मुझे तेरी बात का यकीन है, और तेरी राय भी दिल से पसन्द करता हूं, मगर जिस्म की कुव्वत ने जवाब दे दिया है। इसलिए मैं मामला तकदीर के हवाले करता हूं। मुझे मेरे हाल पर छोड़ दो और बिस्मिल्लाह करो। यहां से जाओ और कुछ काम करके दिखाओ। मैं नहीं, मेरे खानदान में से नहीं, तुम या और कोई हिन्दुस्तान की लाज रखे, हमारी फिक्र न करो, अपने फर्ज को अदा करो।”

बादशाह के इस जवाब से बख्तखां हताश हो गया। वह गर्दन नीची करके मकबरे के पूर्वी दरवाजे से निकल आया। उधर इलाहीबख्श ने पश्चिमी दरवाजे से निकलकर कप्तान हड़सन को सूचना दी कि बादशाह को गिरफ्तार करने का यही समय है। उसने तुरन्त पचास सवार लेकर पश्चिमी दरवाजे पर पहुंच, बादशाह को गिरफ्तार कर लिया।

बादशाह, बेगम जीनतमहल और शाहजादे जवांतबख्त को लाकर लालकिले में कैद किया गया। बख्तखां का किसी को पता नहीं लगा। सन् 1837 में बूढ़े बादशाह और महारानी विक्टोरिया एक साथ ही तख्त पर बैठे। कैसा विचित्र संयोग है कि बहादुरशाह ने साम्राज्य खोया और रानी विक्टोरिया साम्राज्ञी बनी।

बादशाह के दो बेटे मिर्जा मुगल और मिर्जा अख्तर सुलतान तथा बादशाह का पोता मिर्जा अकबर हुमायूँ के मकबरे में अब भी थे। इलाहीबख्श से सूचना पाकर हड़सन ने फिर वहां जाकर उन्हें कैद कर लिया। इलाहीबख्श के समझाने से वे चुपचाप कैद हो गये। जब उन्हें रथों पर सवार करके हड़सन शहर की ओर लौटा और शहर एक मील रह गया, तब उसने उनके कपड़े उतरवाए और एक सिपाही के हाथ से तमंचा लेकर तीनों को गोली मार दी। शाहजादे वहीं धूल में तड़पने लगे। उसके बाद तत्काल उनके सिर काट लिए गए और उन्हें रुमाल में रखकर बादशाह के सामने पेश किया गया और कहा- “आपको बहुत दिन से शिकायत थी कि कम्पनी ने आपको खिराज नहीं दिया। यह खिराज हाजिर है।”

बादशाह ने देखकर मुंह फेर लिया और कहा- “अलहमदुलिल्लाह। तैमूर की औलाद सुखरू होकर बाप के सामने आयी है।”

अगले दिन तीनों सिर खूनी दरवाजे के सामने लटका दिए गए और धड़ कोतवाली के सामने टांग दिए गए। दूसरे दिन उन्हें जमना में फेंकवा दिया गया। लाहौरी दरवाजे से चांदनी चौक तक शहर मुर्दों का शहर नजर आता था। सब ओर मुर्दों का बिछौना बिछा हुआ था, जिनमें से कुछ मरने से पहले सिसक रहे थे। एक ओर लाशों को कुत्ते खा रहे थे और दूसरी ओर लाशों के आस- पास गिद्ध जमा थे, जो उनका मांस नोच- नोचकर खा रहे थे।

शहर पर कब्जा करने के बाद तीन दिन तक कम्पनी की फौज नगर को लूटती रही। एक दर्ता फौज को इस काम के लिए नियुक्त किया गया कि जहां कहीं आबादी पाओ, मर्द, औरत बच्चों को घर के असबाब सहित गिरफ्तार कर ले आओ। आगे- आगे मर्द असबाब के गठुर सिर पर रखे आते हुए और पीछे- पीछे उनकी औरतें रोती हुई पैदल और बच्चों को साथ लिए। जिन औरतों को कभी पैदल चलने की आदत न थी, वे ठोकरें खा- खाकर गिरती थीं, बच्चे गोद से गिर पड़ते थे और सिपाही क्रूरता के साथ उन्हें चलने के लिए धकेलते थे।

जब वे लोग सामने पेश होते तो हुक्म दिया जाता कि असबाब में जितनी कीमती चीजें हैं, उन्हें जल्द कर लो। व्यर्थ की चीजें इन्हें वापस दे दो। दूसरा हुक्म होता कि इन्हें सिपाहियों की देख- रेख में लाहौरी दरवाजे तक ले जाओ। यहां वे लोग शहर से बाहर धक्का देकर निकाल दिए जाते। दिल्ली शहर के बाहर इस प्रकार हजारों मर्द, औरतें और बच्चे असहाय, नंगे पांव, नंगे

सिर, भूखे- प्यासे फिरने लगे। सैकड़ों माताएं छोटे बच्चों का दुःख न देख सकने के कारण उन्हें अकेला छोड़कर कुएं में डूब मरीं। नगर के अन्दर हजारों औरतें ऐसी थीं, तो बेइज्जती और मुसीबतों से बचने के लिए कुओं में गिरने लगीं। ये इतनी अधिक संख्या में गिरीं कि डूबने को पानी न रहा। अनेक कुएं औरतों की लाशों से भर गए।

इस प्रकार बदनसीब दिल्ली ने एक बार फिर भयानक दिन देखे शाही खानदान पर बुरी बीती। बहुतों को तो फांसी नसीब हुई, कुछ शाहजादे जेलखाने में भेज दिए गए। जब वे अपना काम पूरा न कर सकते थे, तो उन पर कोड़ों की मार पड़ती थी।

मिर्जा कीमास जिसे अंग्रेज सरकार ने युवराज बनाना स्वीकार किया था, एक दिन दिल्ली के पास जंगल में घोड़े पर सवार नंगा खड़ा दिखाई दिया था। हड़सन उसकी तलाश में घूम रहा था। उसके बाद आज तक उसका पता न लगा कि कहां है? बहादुरशाह की एक बेटी रजिया बेगम ने रोटियों से मुहताज होकर दिल्ली के एक बावर्ची हुसैनी से शादी कर ली थी। उनकी दूसरी बेटी फातिमा सुलतान ने ईसाई जनाना स्कूल में नौकरी कर ली।

उस बूढ़े सम्राट् को अंग्रेजों ने कत्ल नहीं किया, यह उनकी राजनीति थी, परन्तु मेजर जनरल पीनी, कमांडिंग डिवीजन तथा सर जान लारेंस, चीफ कमिश्नर, पंजाब द्वारा नियुक्त एक ब्रिटिश फौजी कमीशन के सामने दिल्ली के ही लालकिले में बूढ़े बादशाह पर मुकदमा चलाया गया। उसके सभापति तोपखाने के अफसर कर्नल डास थे और मेजर पामर, मेजर एडमण्ड, मेजर साइरस और कप्तान एथन- ये चार सदस्य थे। कार्यवाही के लेखक मिस्टर जैमस मटनी थे। सरकारी वकील मेजर एफ- जे- होयट डिप्टी जज एडवोकेट जनरल थे।

बादशाह को अपराधी की भांति वहां लाया गया और उसे कमीशन के सदस्यों के नाम बताकर प्रश्न किया गया- “गुनाहगार मोहम्मद बहादुरशाह, तुम पहले दिल्ली के बादशाह थे, लेकिन अब बगावत करने के जुर्म में गुनाहगार हो। तुम्हें उपस्थित सभ्यों तथा सभापति द्वारा मुकदमा करने में कोई इनकार है?”

बादशाह ने शालीनता से उत्तर दिया- “मुझे कोई इनकार नहीं।”

अदालत ने गवाहों को बुलाने का हुक्म दिया। कागजात पढ़े गए और बादशाह बेहोश हो गए।

सरकारी वकील ने कहा- “अदालत को सिर्फ फैसला करने का अधिकार है, दण्ड देने का नहीं क्योंकि जनरल विल्सन ने अभियुक्त से वादा किया है कि उसे प्राणदण्ड नहीं दिया जाएगा।”

और अन्त में वह बदनसीब बूढ़ा बादशाह रंगून के एक शानदान कैदखाने में एक लाचार लावारिस कैदी की भांति मर गया और उसके साथ- साथ दिल्ली के मुगल साम्राज्य का टिमटिमाता दीपक सदा के लिए बुझ गया।

रमजान का महीना आया। अब न वे पाकीजा खसलत के आलिम थे, न वह शान।

कुछ मुसलमान मैले- कुचैले कपड़े पहने बैठे थे। दो- चार कुरान शरीफ का दौर कर रहे थे। कुछ विक्षिप्तावस्था में बड़बड़ा रहे थे। रोजा खोलने का समय हुआ, तो कहीं से कोई थाल नहीं आया। मुजावरों ने कुछ खजूरे और दालमोठ लोगों में बांट दीं। किसी ने कोई फल या साग- सब्जी के टुकड़े बांट लिए। सबके मुंह पर हवाइयां उड़ रहीं थीं। दुर्दिन ने सबको अपने पंजे में कस लिया था।

ईद की सुबह। एक गंदी-सी अंधियारी गली में एक टूटे- फूटे घर में एक शोकग्रस्त शाही परिवार के कुछ लोग गुमसुम बैठे थे। ये लोग नमाज से पहले ही इस घर के स्वामी शाहजादा मिर्जा दिलदार शाह को गाड़ आए थे। वह दस दिन से बीमार थे। कम्पनी की सरकार उन्हें पांच रुपये माहवार पेंशन देती थी। घर में उनकी बेगम और चार सन्तानें थीं- तीन लड़कियां, एक लड़का। दो लड़कियों की शादी हो चुकी थी, एक डेढ़ साल की लड़की गोद में थी, लड़का दस बरस का था। पति- पत्नी गोटा बुनते और पेट भरते थे। लड़का पढ़ा-लिखा न था, प्यार से वह जिदी हो गया था। वह रो रहा था और कह रहा था- “मेरे अब्बा को बुला दो। हम ईदगाह जाएंगे।” घर में न खाने को कुछ था, न पकाने को बरतन। पड़ोसी गोटेवालों ने कुछ खाना तरस खाकर भिजवा दिया। बेगम ने ठंडी सांस ली और बच्चों को वह दान का भोजन कराया, खुद निराहार रही। घर- घर ईद मनाई जा रही थी, सितियां और पकवान बन रहे थे- पर यहां सन्नाटा था। बच्चा नई जूती और नये कपड़े मांग रहा था। बेगम आंसू पीती जा रही थी और कह रही थी- “बेटा, तेरे अब्बा परदेश गए हैं। वह आ जाएं तो जूतियां और कपड़े मंगवाऊं।”

“तो पैसे दो, मैं खुद ले आऊंगा।”

“बेटे, मेरे पास तो एक भी पैसा नहीं।”

“वाह, मैं नहीं जानता, मैं अभी पैसे लूंगा।”

बेगम ने ठंडी सांस भरी। उठी, पड़ोस से लगी खिड़की में जा खड़ी हुई। पड़ोसिन से कहा- “बुआ, सूतक है, मैं भीतर नहीं आ सकती, जरा मेरी बात सुन जाओ।”

वह आई तो कहा—“खुदा के लिए अपने बच्चे का उतरन कोई कुरता और जूतों का जोड़ा हो तो एक दिन के लिए उधार दो। कल लौटा दूंगी।” उसकी आंखों से गंगा- जमुना की धारा बह चली। पड़ोसिन ने जूती और कपड़े बेगम को दिए, पर बेगम बेहोश होकर वहीं गिर पड़ी।

लालकिले में सन्नाटा था- दीवानेखास में कबूतरों का एक जोड़ा गुटरगूं कर रहा था। दूर जमना किनारे कोई दर्द- भरी आवाज में गा रहा था :

दमदमे में दम नहीं—खैर मानो जान की।

ऐ ‘जफर’ ठण्डी हुई शमशीर हिन्दुस्तान की॥

समाप्त